परम प्रिय
श्री प्रसित राय चौधरी को

"Great books not only record and interpret life for us, but also console our griefs, expose our vices, redeem our weaknesses."

Dayton Kohler

Story editor of 'MASTERPLOTS'

शुभ संयोग

•

पुलिस के एक बड़े अधिकारी से यह कहानी सुनी थी। वह अपना नाम प्रकट करना नहीं चाहते, इसलिए मैंने भी यहां उनका नाम गुप्त रखा। अगर वह न बताते तो मैं यह कहानी कभी न जान पाता।

कलकत्ते में अनेक लोगों ने वह मकान देखा है। बारह-मंजिला वह मकान दूर से दिखाई पड़ता है। उस पूरे मकान में दफ्तर ही दफ्तर हैं।

एक दिन मेरे उस पुलिस अधिकारी मित्र ने कहा—शायद आप नहीं जानते कि उस दफ्तर वाले मकान के पीछे कितना लम्बा इतिहास है।

मेरे मित्र के कहने के ढंग से मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। मैंने कहा—नहीं, मैं नहीं जानता। लेकिन वह कैसा इतिहास है?

सचमुच उतना बड़ा मकान शायद इस समय कलकत्ते में वही एक है। मेरे सामने वह मकान बन कर तैयार हुआ था। लेकिन किसने उस मकान को बनाया, कौन उसका मालिक है, उसका क्या परिचय है, यह सब लेकर मैंने कभी माथा-पच्ची नहीं की। करता भी नहीं, लेकिन अपने मित्र की बात सुन कर बड़ी जिज्ञासा हुई—आखिर उस मकान का क्या इतिहास है? एक मकान बनने के पीछे कौन ऐसा इतिहास हो सकता है!

मेरे मित्र ने कहा—यह आज से पचीस वर्ष पहले की घटना है। उस केस के इन्वेस्टिगेशन का जिम्मा मुझको सौंपा गया था।

इस भूमिका ने मेरा कौतूहल बढ़ा दिया। मैं उस इतिहास को जानने के लिए अपने मित्र की तरफ देखने लगा।

मेरी हालत देख कर मेरे पुलिस अधिकारी मित्र ने कहा—तो सुनो।



आज से पचीस वर्ष पहले की बात है। १९६२ में डॉ० विधानचन्द्र राय की मृत्यु हुई थी। यह उसी वर्ष की घटना है। मेरे पुलिस अधिकारी मित्र को उन्हीं दिनों प्रोमोशन मिला था और वह ऊँचे पोस्ट पर पहुँचे थे। उसी समय उस बारह-मंजिले मकान का इतिहास शुरू हुआ था।

मेरे मित्र कहने लगे—लेकिन अब कहां हैं वह जयसुन्दर बोस, वरुणा चौधरी, कमला बोस, राधेश्याम अग्रवाल, अजय बोस और विजय बोस! इनमें कोई भी नहीं है। लेकिन एक आदमी है। उसी के बारे में बताऊंगा।

उसी १९६२ की फरवरी में एक दिन जयसुन्दर वोस किसी समारोह में भाषण कर रहे थे। वहुत वड़ा हॉल खचाखच भरा हुआ था। लगभग एक हजार श्रोता मंत्रमुग्ध हो कर जयसुन्दर वावू का भाषण सुन रहे थे। जयसुन्दर वावू वड़े अच्छे वक्ता थे। इसलिए जव उन्होंने अपना भाषण समाप्त किया, उतना वड़ा हॉल तालियों की गड़गड़ाहट से देर तक गूंजने लगा। वह सवको नमस्कार कर कुर्सी पर वैठ गये। फिर थोड़ी देर वाद वह घर लौटने के लिए उठे।

ज्यों ही जयसुन्दर वावू उस भवन से वाहर निकले, किसी ने उनके कंधे पर हाथ रखा।

जयसुन्दर वावू चौंक पड़े। जयसुन्दर वावू, यानी जयसुन्दर वोस! वह वड़े मशहूर आदमी थे। आये दिन उन्हें किसी न किसी सभा या समारोह को सम्वोधित करना पड़ता था। इसलिए उनका वड़ा सम्मान था। कम से कम वह स्वयं ऐसा समझते थे। वह यह भी जानते थे कि लोग मेरा आदर करते हैं, मुझे सम्मान देते हैं। समाज में मेरे समान यशस्वी पुरुष वहुत कम हैं। वड़ी सिफारिश करनी पड़ती है, वड़ा जोर लगाना पड़ता है, तव कहीं कोई मुझसे मिल सकता है।

सिर्फ सम्मानित नहीं, जयसुन्दर वावू काम के आदमी थे।

कहीं से कोई आये और वगैर कुछ कहे-सुने कंधे पर हाथ रखने का साहस करे, यह जयसुन्दर वावू क्यों, उनका कोई परिचित आदमी भी नहीं सोच सकता। लेकिन कैसे क्या हो गया, यह जयसुन्दर वावू भी उस समय नहीं समझ सके।

—कौन?

जयसुन्दर वावू चौंक पड़े। शायद वह कुछ नाराज भी हुए।

फिर जयसुन्दर वावू ने पूछा—आप कौन हैं?

सड़क पर वहाँ अँधेरा था, इसलिए जयसुन्दर वावू उस आदमी को नहीं पहचान सके। लेकिन वह आदमी किसी तरह विचलित न दिखाई पड़ा।

उस अपरिचित आदमी ने पूछा—आप ही तो जयसुन्दर वावू हैं?

जयसुन्दर वावू ने कहा—जी हाँ, लेकिन आप कौन हैं?

उस आदमी ने कहा—मेरा परिचय जान कर क्या करेंगे? मैं आपको सिर्फ यह चिट्ठी पहुँचाने आया हूँ।

—चिट्ठी? किसकी चिट्ठी?

यह कह कर जयसुन्दर वावू ने चिट्ठी लेने के लिए हाथ आगे किया।

उस आदमी ने जेव से चिट्ठी निकाल कर जयसुन्दर वावू के हाथ में दी। जयसुन्दर वावू ने जेव से चश्मा निकाला और लिफाफे को फाड़ा। उसके वाद उन्होंने पत्र खोल कर पढ़ने की कोशिश की।

लेकिन उतने अँधेरे में जयसुन्दर वावू उस पत्र की एक लाइन भी नहीं पढ़ सके।

फिर उन्होंने पूछा—किसने यह पत्र दिया है ?

यह सवाल करके उन्होंने सिर उठाया, लेकिन वहाँ कोई दिखाई नहीं पड़ा।

कहाँ गया ,वह ? जयसुन्दर बाबू को बड़ा आश्चर्य हुआ। थोड़ी देर पहले उन्होंने तेज रोशनी में खड़े हो कर भाषण किया था। सभा उसी बहुत बड़े मकान के सभाकक्ष में हुई थी। वहाँ दिन जैसा प्रकाश था। फिर एकाएक अँधेरे में चले आने के कारण जयसुन्दर बाबू की आँखें ठीक से काम नहीं कर रही थीं। फिर भाषण के दौरान तालियों की गड़गड़ाहट सुनते-सुनते उनका दिमाग चकरा गया था। तालियाँ बजने पर कौन भला खुश नहीं होता ? इसलिए जयसुन्दर बाबू भी खुश थे।

हालांकि उस दिन पहली बार जयसुन्दर बाबू के भाषण के दौरान तालियाँ नहीं बजी। जब से वह समाज में लोकप्रिय हुए, तभी से लोग उनका विचार सुन कर तालियाँ बजाने लगे थे। उस दिन अगर वह और कुछ देर बोलते तो और तालियाँ सुनने को मिलतीं। लेकिन वह थे काम के आदमी। सिर्फ भाषण करते रहने से उनका काम कैसे चलता ? आखिर उनको पैसा भी तो कमाना था।

सड़क के उस पार जयसुन्दर बाबू की कार खड़ी थी। उन्होंने सोचा कि कार के अंदर की बत्ती जला कर चिट्ठी पढ़ ली जायेगी।

ड्राइवर की सीट पर बैठा वेणीलाल मालिक की प्रतीक्षा कर रहा था। मालिक को देखते ही ड्राइवर दरवाजा खोल कर बाहर आया और पीछे का दरवाजा खोल कर खड़ा हो गया। बिना कुछ कहे जयसुन्दर बाबू पीछे की सीट पर जा कर बैठ गये।

उसके बाद कार के अंदर ऊपर की बत्ती जला कर जयसुन्दर बाबू ने कहा—घर चलो वेणी।

कार चलने लगी।

जयसुन्दर बाबू ने जेब से चिट्ठी निकाली।

पहले तो जयसुन्दर बाबू समझ न पाये थे कि यह चिट्ठी किसकी है। इसलिए चिट्ठी खोलते ही उन्होंने लिखने वाले का नाम देख लिया। वहाँ निशिकान्त था। निशिकान्त दास।

चिट्ठी के नीचे लिखा नाम निशिकान्त दास पढ़ते ही जयसुन्दर बाबू के बदन में मानो आग लग गयी। उन्होंने मन ही मन कहा—अचानक उस कम्बख्त ने चिट्ठी क्यों लिखी ? अगर कुछ कहना था तो खुद आकर कह सकता था। ऐसा न कर उसने दूसरे के हाथ चिट्ठी भेजी !

खैर, जयसुन्दर बाबू उस चिट्ठी को पढ़ने लगे—

मान्यवर,

चिट्ठी में नीचे मेरा नाम लिखा हुआ है। नाम देख कर आप मुझे जरूर पहचान गये होंगे। मैं जानता हूँ कि मेरा नाम देखते ही आपके तन-बदन में आग लग जायेगी, लेकिन कोई उपाय नहीं है। आपके पास चिट्ठी लिखे बिना और क्या कर सकता हूँ? मैंने इस पत्र में जो कुछ लिखा है, उस पर यदि आपको विश्वास न हो तो आप स्वयं मेरे घर आ कर मेरी हालत देख सकते हैं। इस समय कोई आमदनी नहीं है। इसलिए आप मुझे कम से कम दो लाख रुपये देने की कृपा करें। आप यह रुपया नहीं देंगे तो मैं बड़ी मुसीबत में पड़ जाऊँगा। आशा है कि सारी स्थिति समझ कर आप यह रुपया देने में विलम्ब नहीं करेंगे। मैं आपके रुपये के लिए प्रतीक्षा करूँगा। यदि आप यह सूचित करें कि कब किस समय आपके पास जाने पर यह रुपया मिल सकता है, तो मैं भी आ सकता हूँ। मैं आपके घर भी आ सकता हूँ। आपके पत्र की प्रतीक्षा में हूँ। आप मेरा सादर नमस्कार स्वीकार करें।

आपका सेवक
निशिकान्त दास

पत्र पढ़ लेने के बाद जयसुन्दर बाबू ने कार के अंदर की बत्ती बुझा दी। कार भागती गयी।

जयसुन्दर बाबू अपनी चिन्ता में डूबे रहे। फिर थोड़ी देर बाद वह मन ही मन बड़बड़ाये—साला! हरामजादा! सचमुच निशिकान्त बड़ा शैतान है। वह फिर पहले की तरह मुझे परेशान करना चाहता है। अब भी उसका लालच कम नहीं हुआ।

मजे की बात है कि निशिकान्त ने यही पहली बार रुपया नहीं माँगा। जिन्दगी भर वह रुपया माँग-माँग कर जयसुन्दर बाबू को परेशान करता रहा। जयसुन्दर बाबू ने सोचा था कि शायद अब यह कम्बख्त थोड़ा दुरुस्त हो चुका है।

लेकिन नहीं, निशिकान्त अब भी उसी तरह है। अब तो उसने दो लाख रुपये की माँग कर दी। मानो जयसुन्दर बाबू के पास रुपये का पेड़ है और उसकी डालियाँ हिलाते ही रुपये टपकने लगेंगे। फिर कम्बख्त ने धौंस भी दी है। लेकिन रुपया क्या इतना सस्ता है? जयसुन्दर बाबू सोचते रहे।

जयसुन्दर बाबू बहुत रुपये के मालिक बने थे, इसमें कोई सन्देह नहीं था। लेकिन सेंत में पैसा नहीं हुआ था। उसके लिए उन्हें कम मशक्कत नहीं करनी पड़ी थी। भाग्य ने उनकी नकेल पकड़ कर उनको नचाया था, तभी तो वह करोड़पति बन सके थे। हालांकि उसके लिए उन्होंने इनकम टैक्स की चोरी की थी और लोगों से काम ले कर उनको कम पैसा दिया था। इसी रुपया कमाने के पीछे उन्होंने पारिवारिक शान्ति को तिलांजलि दी थी। कमला से उनका किसी तरह का सम्बन्ध

नहीं था। इतना त्याग उन्होंने किसलिए किया था? उसी रुपये के लिए न! वही रुपया कमाने के पीछे वह सब कुछ खो कर करोड़पति बने थे। फिर वह उतने रुपये के मालिक बने थे, तभी तो लोग उनकी उतनी इज्जत करते थे।

सबको रुपये के बल पर जयसुन्दर बाबू वश में करते थे। जो भी उनके पास आता था, वही वशीभूत होता था। किसी सभा-समारोह में जा कर वह जो कुछ कहते थे, लोग मन लगा कर सुनते थे। तभी तो उनके भाषण के दौरान तालियाँ बजती थीं। लोग कहते थे, जयसुन्दर बाबू मात्र पुरुष नहीं, महापुरुष हैं!

जयसुन्दर बाबू जिससे भी मिलते थे, उसी से अच्छा व्यवहार करते थे। उनकी वाणी बड़ी मधुर थी। कोई भी काम पड़े, वह सबको चन्दा देते थे। वह समझते थे कि चाँदी की जूती मार कर सबको काबू में किया जा सकता है।

हाँ, चाँदी की जूती मार कर जयसुन्दर बाबू सबको वश में करते थे। सब उनका उधार खाये हुए थे। सब जान गये थे कि जयसुन्दर बाबू के आगे हाथ फैलाने पर कुछ न कुछ मिल ही जाता है। उनके पास जाने पर किसी को निराश नहीं लौटना पड़ता था।

—वेणीलाल!

पीछे मुड़े बिना वेणीलाल ने पूछा—जी, मुझसे कुछ कह रहे हैं?

—जरा मन्दन स्ट्रीट चलो तो।

वेणीलाल ने कार मन्दन स्ट्रीट की तरफ मोड़ ली।

मन्दन स्ट्रीट के मकान में कमला रहती थी।

उस दिन न जाने क्यों जयसुन्दर बाबू ने मन्दन स्ट्रीट चलने के लिए वेणीलाल से कहा था। सम्भवतः निशिकान्त की चिट्ठी पा कर अचानक उन्हें कमला की याद आ गयी थी। यों तो उनका स्वभाव हमेशा आगे चलने का था। कभी उन्होंने पीछे मुड़ कर देखना नहीं सीखा था। लेकिन निशिकान्त की वह चिट्ठी पाने के बाद ही वह मानो पीछे की तरफ मुड़ कर देखने के लिए विवश हो गये थे।



यह बहुत पहले की बात है।

जयसुन्दर बाबू का प्रारम्भिक जीवन था। उन दिनों कोई उनका नाम नहीं जानता था। बड़े बाजार में एक मारवाड़ी की कोठी में वह सिर्फ पन्द्रह रुपये महीने पर खाता लिखने का काम करते थे।

महीने में मात्र पन्द्रह रुपये !

उन दिनों की बात याद आने पर जयसुन्दर बाबू को हँसी आती थी। बाद में उनके घर में जो लोग काम करते थे, उनको भी कहीं अधिक वेतन मिलता था। फिर दुर्गा पूजा पर बोनस था। बोनस का मतलब दो धोतियाँ और एक गमछा। इसके अलावा एक महीने की तनखाह अलग से मिलती थी।

लेकिन एक समय था कि उसी पन्द्रह रुपये में जयसुन्दर बाबू महीने भर का खर्च चलाते थे। रहते थे किसी अमीर की बरसाती के नीचे। जो कुछ मिल जाता था, वही खा लेते थे। कभी-कभी सड़क के नल से पानी पी कर दिन गुजार देते थे।

कभी-कभी पुलिसवाला उनको भगाता था।

पुलिस से बच कर उनको जिन्दा रहना पड़ता था। सड़क पर जो लोग रहते थे, पुलिसवाले उन पर शक करते थे। लेकिन महीने में पन्द्रह रुपये में कमरा किराये पर ले कर रहना उनके लिए सम्भव नहीं था।

एक बार एक विलायती कुत्ते ने उनको दौड़ा लिया था। आखिर उस कुत्ते के मालिक की कृपा से उनकी जान बची थी।

लेकिन वह किसी तरह निराश नहीं थे। वह भी अमीर बनने का सपना देखते थे। सपना देखते थे कि मैं कलकत्ते में एक मकान का मालिक बन गया हूँ। सिर्फ मकान नहीं, कार भी मेरे पास है।

जयसुन्दर बाबू को अच्छी तरह याद था कि एक बार एक भिखारी ने कुछ पाने के लिए गलती से उनके आगे हाथ फैलाया था। लेकिन उनकी शकल देख कर वह भिखारी सकपका गया था। फिर उसने हाथ हटा लिया था। लेकिन उस घटना से जयसुन्दर बाबू को बड़ा आघात लगा था। क्या ये भिखमंगे भी समझ जाते हैं कि कौन अमीर है और कौन गरीब ? क्या उस भिखमंगे ने उनको भी भिखमंगा समझ लिया था ?

ऐसी अनेक घटनाएँ घटी थीं। लेकिन वे घटनाएँ जयसुन्दर बाबू को निराश न कर सकी थीं। बल्कि उन घटनाओं ने उन्हें जीवन में तरक्की करने की प्रेरणा दी थी।

लेकिन उस दिन जयसुन्दर बाबू ने अपने को बड़ा अपमानित महसूस किया था। उन्होंने उस भिखारी को पास बुलाया था—सुन, इधर आ।

उस भिखारी को बड़ा आश्चर्य हुआ था। पहले तो उसने जयसुन्दर बाबू की उपेक्षा की थी, इसलिए उनके बुलाने पर ध्यान नहीं दिया।

जयसुन्दर बाबू ने फिर उस भिखारी को बुलाया था—सुन, इधर।

वह भिखारी पास आया तो जयसुन्दर बाबू ने जेब से एक रुपया निकाल कर उसके हाथ में रख दिया था।

नकद एक रुपया पा कर उस भिखारी को खुश होना चाहिए था, लेकिन वह आश्चर्य से दाता को तरफ देखने लगा था।

जयसुन्दर बाबू ने उससे कहा था—मैं कोई भिखमंगा नहीं हूँ। समझ गया? मेरे कपड़े देख कर तू जैसा सोच रहा है, मैं वैसा नहीं हूँ। मेरे पास रुपया है।

रुपया न रहना उन दिनों जयसुन्दर बाबू को बड़ा अपमानजनक लगता था। बाद में भी अगर कभी किसी ने उनसे कहा कि आपके पास रुपया नहीं है तो उन्होंने अपने को अपमानित समझा। उनके लिए रुपया गौरव का प्रतीक था। उनके हिसाब से जिनके पास रुपया नहीं है, उनको इस संसार में जिंदा रहने का अधिकार नहीं है।

लेकिन रुपया कमाना भी तो एक आर्ट है। जो रुपया कमाना जानता है, वह आर्टिस्ट है। जिस तरह सभी लोग गाना नहीं गा सकते, सभी लोग लेखक नहीं बन सकते, उसी तरह सभी लोग रुपया नहीं कमा सकते। इसलिए जयसुन्दर बाबू ने बचपन से रुपया कमाने की साधना की थी। संसार में सबसे धनी हैं राकफेलर साहब। इसलिए राकफेलर साहब ही जयसुन्दर बाबू के आदर्श थे। राकफेलर साहब जब तिरपन बरस के थे, तभी वह करोड़ों डालर के मालिक बन गये थे।

पन्द्रह रुपये मासिक वेतन पाने वाले जयसुन्दर बाबू उन्हीं दिनों राकफेलर बनने का सपना देखते थे। कलकत्ते की सड़क से चलते समय वह दोनों तरफ बड़े-बड़े मकानों को देखा करते थे और सोचते थे कि एक दिन ऐसा ही बड़ा मकान मेरा भी होना चाहिए।

जयसुन्दर बाबू को अच्छी तरह याद था कि एक दिन उन्होंने अपने मालिक राधेश्याम बाबू से कहा था—अब पन्द्रह रुपये में खर्च चलना मुश्किल हो गया है। मेरी तनखाह दो रुपये बढ़ा दी जाय।

राधेश्याम बाबू ने पूछा था—तुम्हें कितना मिलता है?

जयसुन्दर बाबू ने कहा था—बताया न, सिर्फ पन्द्रह रुपये।

—पन्द्रह रुपये में तुम्हारा खर्च नहीं चलता? बड़े ताज्जुब की बात है।

जयसुन्दर बाबू ने कहा था—चलता तो है, लेकिन बड़ी मुश्किल से।

—कहाँ रहते हो?

जयसुन्दर बाबू ने कहा था—मेरे रहने का कोई पता नहीं है।

—फिर भी इस समय कहाँ रहते हो?

चूड़ामणि जी बगल में बैठे हुए थे। उन्होंने कहा था—जयसुन्दर सड़क पर रहता है हुजूर।

—पुलिसवाले नहीं भगाते?

जयसुन्दर बाबू ने कहा था—भगाते हैं हुजूर। इसलिए अभी एक नयी जगह

पर रहता हूं। वहां मेरे जैसे बहुत से लोग पड़े रहते हैं। कोई किसी को नहीं भगाता।

—वह कहां ?

—जी, आपने कालीघाट में काली जी का मंदिर देखा है ?

—हां-हां, देखा है। मैं प्रतिदिन काली मंदिर जाता हूं। हर शनिवार को काली जी की पूजा करता हूं। वहां तो तुम दिखाई नहीं पड़ते ?

जयसुन्दर बाबू ने कहा था—मैं तो वहां रात को सोता हूं।

—कहां खाते हो ?

जयसुन्दर बाबू ने कहा था—मैं तो भात नहीं खाता हुजूर।

—क्या रोटी खाते हो ?

जयसुन्दर बाबू ने कहा था—हुजूर, रोटी के लिए पैसा कहां है ?

—फिर क्या खाते हो ? सत्तू ?

—नहीं हुजूर, सत्तू पचा नहीं पाता।

—फिर क्या खाते हो ?

—चूड़ा खाता हूं हुजूर, चिड़वा। ऐल्यूमिनियम का कटोरा खरीद लिया है। उसी में सड़क के नल के पानी में चूड़ा भिगो कर गुड़ से खा लेता हूं। फिर वह कटोरा धो कर एक पंडे की दुकान में रख देता हूं।

—कहां नहाते हो ?

—गंगा जी में। गंगा में नहाने पर कोई कुछ नहीं कहता और पैसा भी खर्च नहीं होता।

जयसुन्दर बाबू की बात सुन कर राधेश्याम बाबू को बड़ा आश्चर्य हुआ था। उन्होंने पूछा था—तुम बंगाली हो या मारवाड़ी ?

—मैं बंगाली हूं हुजूर। मेरा नाम है जयसुन्दर बोस।

सब कुछ सुनने के बाद राधेश्याम बाबू गुस्सा करने के बदले खुश हुए थे। फिर उन्होंने कहा था—अगर तुम्हारा वेतन दो रुपये बढ़ा दूं तो उस रुपये से तुम क्या करोगे ?

—मैं हर महीने दो रुपये बचा कर रखूंगा। इस तरह एक साल में चौबीस रुपये हो जायेंगे। एक साल बाद उस चौबीस रुपये से गमछा खरीद कर रोज छुट्टी के बाद फेरी करूंगा।

राधेश्याम बाबू ने कहा था—ठीक है। इस महीने से तुम्हारी तनखाह दो रुपये बढ़ा दी गयी। अब तुम कुछ कर सकोगे।

यह सुन कर जयसुन्दर बाबू गद्गद हो गये थे। उन्होंने राधेश्याम बाबू के पांव छू कर दोनों हाथ सिर से लगाये थे। उनकी आंखों से झर-झर आंसू बहने लगे थे।

राधेश्याम बाबू ने पूछा था—क्यों रो रहे हो ?

खुशी के मारे जयसुन्दर बाबू उस समय कोई उत्तर नहीं दे सके थे। बस, उनकी आँखों से अविरल आँसू बह चले थे।

राधेश्याम बाबू ने कहा था—तुम क्यों रो रहे हो ? रोओ मत। रोओ मत। तुम्हारे पास सब कुछ होगा। देख लेना, तुम भी एक दिन बहुत बड़े आदमी बनोगे। पता है, मैं भी कभी तुम्हारी तरह गरीब था। जैसा तुम सोच रहे हो, वैसे मैं भी एक दिन सड़क पर खड़े हो कर गमछा बेचा करता था। गमछा बेच कर जिस दिन आठ आना नहीं कमा पाता था, उस दिन मेरे पिताजी मुझे घर में खाने नहीं देते थे। अठन्नी से कम कमाई होने पर घर में रोटी नहीं मिलती थी। इसलिए तुम रोओ मत, तुम्हारे पास सब कुछ होगा। मैं तुम्हारी तनखाह दस रुपये बढ़ा सकता हूँ, लेकिन वैसा नहीं करूँगा। वैसा करने पर तुम आरामतलब बन जाओगे। तकलीफ सहने की आदत नहीं रहेगी। फिर तकलीफ सहे बिना कोई तरक्की नहीं करता। तुम तो बंगाली हो। बंगालियों में एक कहावत है न—'कष्ट ना करले केष्ट मेले ना'। कष्ट किये बिना कृष्ण नहीं मिलते।

इसके बाद उस दिन और कोई बात नहीं हुई थी। राधेश्याम बाबू का कहीं से जरूरी टेलीफोन आ गया था।

जयसुन्दर बाबू राधेश्याम बाबू के कमरे से निकल कर अपने काम में लग गये थे। धोती के खूंट से आँखें पोंछने के बाद उन्होंने किसी तरफ ध्यान नहीं दिया था।

थोड़ी देर बाद चूड़ामणि जी जयसुन्दर बाबू के पास गये थे और बोले थे—बंगाली बाबू, आपका भाग्य बड़ा अच्छा है। एक बार कहते ही आपकी तनखाह दो रुपये बढ़ गयी।

जयसुन्दर बाबू को कोई उत्तर देते न बना था। उस समय दो रुपये में उनका क्या होता ? उन्हें तो लाखों रुपये की जरूरत थी ! कम से कम कलकत्ते में एक मकान, एक कार और बैंक में कई लाख रुपये हो जाते तो कोई बात थी।

राधेश्याम बाबू की बातें उस समय भी जयसुन्दर बाबू के कानों में गूंज रही थीं—तुम्हारे पास सब कुछ होगा। सब कुछ होगा !

जयसुन्दर बाबू ने पुरानी बातें याद कीं। उस समय उन्होंने सोचा था—क्या सचमुच मेरे पास रुपया होगा ? बाद में उनके पास बहुत रुपया हुआ, लेकिन उस समय वह विश्वास न कर सके थे कि कभी ऐसा होगा। उनको विश्वास नहीं हुआ था कि उनके पास राधेश्याम बाबू से अधिक दौलत होगी।

उस दिन जयसुन्दर बाबू ने खूब मन लगा कर काम किया था। पाँच बजते ही सब एक-एक कर दफ्तर से निकल गये थे, लेकिन उस समय भी जयसुन्दर बाबू

अपने काम में डूबे हुए थे। दो रुपये तनखाह बढ़ी थी, इसलिए वह बहुत खुश थे और उसी खुशी के कारण अपने काम के प्रति उनका उत्साह बढ़ गया था।

तभी अचानक राधेश्याम बाबू अपने कमरे से बाहर निकले थे। उस समय भी जगसुन्दर बाबू को काम करते देख कर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ था। जयसुन्दर बाबू के पास जा कर उन्होंने कहा था—यह क्या ? सब लोग जा चुके हैं और तुम अभी तक काम कर रहे हो ?

जगसुन्दर बाबू ने कहा था—अभी इस खाते का थोड़ा काम बाकी है।

यह सुन कर राधेश्याम बाबू मन ही मन बहुत खुश हुए।

खुश हो कर राधेश्याम बाबू ने कहा—तुम एक बार मेरे कमरे में आना।

इतना कह कर राधेश्याम बाबू अपने कमरे में चले गये।

पांच मिनट बाद जगसुन्दर बाबू राधेश्याम बाबू के कमरे में गये।

राधेश्याम बाबू अपनी कुर्सी पर बैठे हुए थे। उन्होंने जगसुन्दर बाबू से भी कुर्सी पर बैठने के लिए कहा।

जगसुन्दर बाबू बैठे तो राधेश्याम बाबू ने कहा था—देखो जयसुन्दर, मैं मारवाड़ी हूं। लेकिन तुम बंगाली हो। हम दोनों में बड़ा अन्तर भी है। फिर भी मैंने तुम्हारे अन्दर मारवाड़ियों के बहुत से गुण देखे हैं। बहुत से बंगालियों से मेरी जान-पहचान है, लेकिन तुम उनके जैसे नहीं हो।

यह सुन कर जगसुन्दर बाबू ने कहा था—मैं बहुत गरीब हूं। गरीबों की कोई जात नहीं होती। अगर होती है तो गरीबों की जात अलग है। वे न मारवाड़ी हैं और न बंगाली।

—इसी लिए तो तुमसे कहा कि तुम कुछ कर सकोगे।

—यह आपने कैसे कहा कि मैं कुछ कर सकूंगा ?

इस पर राधेश्याम बाबू ने कहा था—इसलिए कि मैं भी कभी तुम्हारी तरह गरीब था।

—मेरी तरह गरीब ? आप इतने गरीब थे ?

राधेश्याम बाबू ने कहा था—हां, तुमसे भी गरीब था। राजस्थान में मेरा घर था। मेरी मां के मर जाने के बाद बाप ने दूसरी शादी की थी। मेरी सौतेली मां मुझसे बहुत जलती थी। वह मुझे भरपेट खाना भी नहीं देती थी। मैं ज्यादा पढ़ भी न सका था। इसलिए एक दिन किसी से कुछ कहे बिना घर से भाग कर कलकत्ते आ गया था। उन दिनों कलकत्ता ऐसा नहीं था। यहां आने के बाद दो साल मैंने बड़ेबाजार में भीख मांगी थी। अब समझ रहे हो न ?

—भीख ? आपने भीख मांगी थी ?

—हां, दो वर्ष इसी बड़ेबाजार में भीख मांगी थी। लोगों के सामने हाथ फैला

कर भीख माँगी थी। अधिकतर लोग भीख नहीं देते थे। लेकिन कुछ लोग देते थे। हैरिसन रोड के मोड़ पर खड़े हो कर भी भीख माँगी थी। इसी तरह एक दिन शाम को एक सज्जन के आगे हाथ फैला कर खड़ा हो गया था। लेकिन उन सज्जन ने एकाएक मेरा हाथ पकड़ लिया था।

मैंने घबड़ा कर जरा जोर से कहा था—आपने मेरा हाथ क्यों पकड़ा ? आप कौन हैं ?

उस सज्जन ने मेरा हाथ नहीं छोड़ा और कहा—अरे ! तू बेटा राधेश्याम है न ?

मैं उस समय भी न पहचान सका था। फिर थोड़ी देर बाद पहचाना कि वह मेरे पिता थे।

पिता जी मुझे पकड़ कर अपने घर ले गये। वहाँ मैंने अपनी सौतेली माँ को देखा। मेरी एक बहन भी थी। मैं नहीं जानता था कि मेरे पिता जी राजस्थान छोड़ कर कलकत्ते आ गये हैं।

पिता जी ने पूछा—तू भीख क्यों माँग रहा था ? भीख माँगते तुझे शरम नहीं लगती ?

वह मकान पिता जी ने किराये पर ले रखा था। मैं वहीं रहने लगा।

दो-चार दिन बाद पिता जी ने मुझसे कहा—अब तू कोई रोजगार कर।

मैंने कहा—रोजगार करने के लिए शुरू में रुपया चाहिए। वह रुपया मुझे कहाँ से मिलेगा ?

पिता जी ने कहा—रुपया मैं दूँगा। यह ले बीस रुपये। यह रुपया मैंने तुझे उधार दिया।

मुझे पिता जी से बीस रुपये उधार मिले।

उसके बाद पिता जी ने कहा—इस रुपये से गमछा खरीद ले। गमछा बेच कर रोज कम से कम आठ आने कमाया कर। अगर रोज आठ आने कमायेगा तो घर में खाने को मिलेगा। जिस दिन नहीं कमा पायेगा, उस दिन खाने को नहीं मिलेगा।

जयसुन्दर बाबू बड़े ध्यान से राधेश्याम बाबू की कहानी सुन रहे थे। राधेश्याम बाबू जरा रुके तो जयसुन्दर बाबू ने पूछा—फिर क्या हुआ ?

—फिर मैंने गमछा बेचने का काम शुरू किया। किसी-किसी दिन मुझे एक रुपये का भी फायदा होने लगा। उस रुपये से पेटीकोट, ब्लाउज और जाँघिया खरीद कर सड़क के किनारे खड़े हो कर बेचने लगा। उसके बाद तो आज देख रहे हो। कितना बड़ा कारोबार कर लिया है ! इस कारोबार में कितने लोग काम कर हैं और कितने लोगों की रोजी-रोटी चल रही है !

सफल व्यवसायी राधेश्याम बाबू की कहानी सुनते-सुनते बहुत देर हो गयी थी। रात हो चली थी। राधेश्याम बाबू का उस तरफ ख्याल नहीं था, जयसुन्दर बाबू का भी नहीं। लेकिन घड़ी की तरफ निगाह जाते ही राधेश्याम बाबू चौंक पड़े।

फिर खड़े हो कर राधेश्याम बाबू बोले—ठीक है। अगर तुम्हें रुपये की जरूरत पड़े तो मुझे बताना। मैं तुम्हें बहुत कम ब्याज पर रुपया दूँगा। तुम हर महीने मुझे ब्याज देते रहना। कहो तो अभी रुपये दूँ?

—दीजिए।

राधेश्याम बाबू ने जेब से बीस रुपये निकाल कर जयसुन्दर बाबू को दिये।

उसी बीस रुपये की पूँजी से जयसुन्दर बाबू ने व्यवसाय शुरू किया था और उसी से वह इतने बड़े बने थे।

लेकिन निशिकान्त?

ड्राइवर वेणीलाल ने अचानक कहा—हुजूर, नन्दन स्ट्रीट आ गया है।

वेणीलाल की बात कानों में पड़ते ही जयसुन्दर बाबू की चिन्ता का तार टूट कर छिन्न-भिन्न हो गया।

कार रुक चुकी थी। जयसुन्दर बाबू कार से उतरने की तैयारी करने लगे। लेकिन वेणीलाल उसके पहले ही कार का दरवाजा खोल कर खड़ा हो गया था। जयसुन्दर बाबू कार से निकल कर सामने वाले मकान की तरफ बढ़े।



कमलाबाला बोस विवाह से पहले कमलाबाला सिंह थी। एक दिन माँ का हाथ पकड़ कर वह लाखों लोगों के साथ शरणार्थी बन कर भारत में आयी थी। एक देश से शरणार्थियों के दूसरे देश में जा कर बसने की घटना संसार के इतिहास में कोई नयी बात नहीं थी। प्राचीन काल से ऐसी घटना घटती आयी है। फिर भी उस दिन कमला की माँ रोते-रोते बेहाल हो गयी थी। उसने बेटी से कहा था—मेरी सारी चिन्ता तेरे कारण है।

इस पर कमला ने पूछा था—क्यों माँ, मेरे कारण आपको किस बात की चिन्ता है?

माँ ने कहा था—लोग कहते हैं कि यह कलकत्ता शहर बहुत बुरा है।

कमला ने कहा था—होने दीजिए बहुत बुरा शहर। अगर हम बुरी नहीं बनेंगी तो शहर की बुराई क्या कर लेगी?

माँ ने कहा था—यह शहर बहुत बुरा है। यहाँ हम जैसे गरीब लोग कैसे बच्चे रह सकते हैं? क्या यहाँ हमें कोई अच्छा रहने देगा?

कमला ने कहा था—क्यों घबरा रही हैं माँ? आप देख लीजिए, मैं इसी शहर में अच्छी बनी रहूँगी। कोई भी मेरा कुछ बिगाड़ न सकेगा।

उन दिनों कमला की माँ के गाँव के कुछ लोग टालीगंज में थे। स्यालदा स्टेशन के प्लेटफार्म से माँ-बेटी सीधे वहीं चली थीं। वहाँ गाँव के लोगों के बीच आ कर कमला की माँ का डर कुछ कम हुआ था।

फिर किसी तरह रहने का इन्तजाम हो गया था।

लेकिन खाने का कैसे इन्तजाम होता? मेहनत-मजदूरी किये बिना कोई खिलाने वाला नहीं था। उस समय उस हालत में कोई किसी का साथी नहीं था।

फिर उसी मेहनत-मजदूरी के लिए एक दिन कमला की माँ को सड़क पर निकलना पड़ा। उसे एक सज्जन के घर काम मिल गया।

काम पर जाते समय माँ कमला से कह देतीं—बड़ी होशियारी से रहना बेटी। कहीं बाहर मत निकलना।

इस पर कमला कहती—लेकिन माँ, आप क्यों बाहर निकल रही हैं? आपके बदले मैं भी तो जा सकती हूँ।

माँ कहती—नहीं बेटी, ऐसा नहीं हो सकता। तू बड़ी हो चली है, यह क्यों नहीं समझती? लड़कियाँ बड़ी हो जाने पर बेरोक-टोक कहीं आ-जा नहीं सकतीं। हर समय यही डर बना रहता है कि पता नहीं कब क्या हो जाय! इसलिए तू कहीं मत जा बेटी, कोई बात होगी तो मैं क्या करूँगी।

कमला की माँ लोगों के घर नौकरानी का काम करती थी। दोनों समय उन्हीं घरों से वह भात लाती थी। वह भात एक के लिए काफी होता था, लेकिन वही भात माँ-बेटी बाँट कर खाती थीं।

इसी तरह माँ-बेटी दिन गुजार रही थीं।

लेकिन एक दिन एक मुसीबत हो गयी। अचानक कमला की माँ बीमार पड़ गयी। लेकिन बीमार पड़ने पर भी तो काम में नागा नहीं किया जा सकता था! *किसी न किसी को काम पर जाना ही था। बीमार पड़ने से कमला की माँ* को जितनी तकलीफ थी, उससे ज्यादा तकलीफ उसे यह सोच कर हो रही थी कि काम में नागा हो जायेगा।

लाचारी में घर से कमला अपने गाँव की एक औरत को बुला लायी।

उस औरत के आने पर कमला की माँ ने उससे कहा—बहन, तुम मेरा काम कर दोगी? आज अचानक मुझे बुखार आ गया।

इस अनुरोध पर उस स्त्री ने कहा—मैं कैसे करूँगी दीदी? मैं तो एक घर में

काम नहीं करती, सुबह-शाम पाँच घरों में काम करती हूँ। अपना ही काम मैं पूरा नहीं कर पाती, तुम्हारा काम कैसे करूँगी ?

कमला की माँ बोली—और किसी से कह सकती हो ? और कोई है ?

वह औरत बोली—अब इस समय किससे कहूँगी दीदी ? सब अपने-अपने काम से परेशान हैं—कौन मेरी बात सुनेगा ?

कमला वहीं खड़ी थी, जहाँ बातचीत हो रही थी। उसने माँ से कहा—मैं चली जाऊँ माँ ? पता बता दो तो मैं जा सकती हूँ।

कलकत्ते के इतिहास में वह भी बड़ा विचित्र समय था। पहले घरों में काम करने के लिए नौकरानी नहीं मिलती थी। लेकिन जिस दिन देश का विभाजन हुआ, उस दिन घरों में काम करने के लिए नौकरानियों की भीड़ लग गयी। वे घर-घर जा कर लोगों की खुशामद करने लगीं।

बालीगंज लेक से बजबज में रेललाइन के उस पार तक और फिर पूरे टालीगंज, यादवपुर, गड़िया और नाकतला तक जहाँ भी खाली जगह मिली शरणार्थी बस गये। वे असहाय थे, निस्सम्बल थे, विवश थे। बाढ़ का पानी जिस तरह हहरा कर आता है, उसी तरह पूर्वी बंगाल से शरणार्थियों की भीड़ आयी थी। उन शरणार्थियों को कहाँ शरण दी जाती ? उनकी रोजी-रोटी का कैसे इन्तजाम होता ?

उन दिनों डॉ० विधानचन्द्र राय पश्चिम बंगाल के मुख्यमंत्री थे। शरणार्थियों ने जिन भूमिपतियों की भूमि पर कब्जा कर लिया था, उन भूमिपतियों ने शरणार्थियों के विरुद्ध कानूनी कार्रवाई करने की तैयारी की। लेकिन डॉ० विधानचन्द्र राय की सरकार आड़े आ गयी। जहाँ जिस जमीन पर शरणार्थी बसा था, सरकार ने उसको वहीं काबिज रखा और उसे उस जमीन का पट्टा दे दिया।

कलकत्ते के सम्पन्न घरों में नौकर-नौकरानी की कमी न रही। उसी के साथ शहर की बड़ी-बड़ी चौड़ी सड़कों के किनारे झोपड़ी डाल कर शरणार्थियों ने होटल और पान-सिगरेट आदि की दुकानें खोल लीं। पूरा शहर ऐसी दुकानों से भर गया।

मर्द लोग फुटपाथों पर दुकान लगा कर बैठ गये। उन दुकानों के लिए किसी तरह का किराया या टैक्स नहीं देना पड़ता था। जितनी सुविधा हो सकती थी, राज्य सरकार ने उन शरणार्थियों को दी। लेकिन कमला और कमला की माँ औरत थीं, इसलिए वे मर्दों की तरह फुटपाथ पर दुकान खोल कर नहीं बैठ सकीं।

कुछ राजनीतिक दल भी त्राणकर्ता के रूप में लाल झंडा लिये आगे आये।

उन राजनीतिक दलों के कार्यकर्ता शरणार्थियों को समझाने लगे—आप लोग हमें वोट दे कर गद्दी पर बैठायें तो हम आपकी सभी समस्याओं को दूर करेंगे।

आप लोग हमारी पार्टी में नाम लिखायें तो हम आप लोगों को इस संकट से मुक्त करेंगे।

फिर उन घरबार और जमीन-जायदाद छोड़ कर आये निराश्रित लोगों को ले कर नयी राजनीति शुरु हो गयी!

उसी समय दिल्ली की मसनद पर आसीन जवाहरलाल नेहरू बड़ी कृपा करके वायुमार्ग से कलकत्ते आये।

नेहरू जी ने उन शरणार्थियों से कहा—तुम लोग अपने घर लौट जाओ। कलकत्ते में भीड़ मत बढ़ाओ।

शरणार्थियों ने कहा—लेकिन पंजाब के लोगों को तो आपने जमीन-जायदाद दी है। उसी तरह हमें भी दीजिए। उन लोगों को आपने जो सुविधाएँ दी हैं, वही सुविधाएँ आप हमें क्यों नहीं देंगे?

जवाहरलाल नेहरू ने कहा—वे लोग पंजाबी ठहरे और तुम लोग बंगाली हो। तुम लोग फिर अपने मुल्क लौट जाओगे, लेकिन पंजाबी तो लाहौर नहीं जायेंगे।

— लेकिन अभी हम लोग क्या खायेंगे? कैसे अपना पेट पालेंगे?

जवाहरलाल बोले— हम तुम्हें कैश डोल देंगे। हर महीने हर आदमी को नकद रुपया मिलेगा। ऑकलैण्ड प्लेस में तुम लोगों के लिए नया दफ्तर खोला गया है। वहाँ जाओगे और दस्तखत करके रुपया लोगे।

—क्या इस तरह हम लोग जिन्दगी भर भिखारी बने रहेंगे? क्या भीख माँग कर हमें हमेशा दिन गुजारना होगा?

जवाहरलाल नेहरू ने कहा—किसने कहा कि तुम लोग जिन्दगी भर भिखारी बने रहोगे? पाकिस्तान से मेरा समझौता हो चुका है कि तुम लोग जब अपने घर लौटोगे, तुम्हें अपना घरदुआर और जमीन-जायदाद वगैरह सब कुछ वापस मिल जायेगा। वहाँ पाकिस्तान सरकार तुम्हारी देखभाल करेगी और तुम्हें बड़े आराम से रखेगी। मैंने तुम लोगों के बारे में बहुत सोचा है और अब भी सोच रहा हूँ। जिससे तुम लोग आराम से रहो, यही मैं हमेशा सोचता रहता हूँ।

लाल झंडे वाले भी शरणार्थियों की बस्तियों में इन्हीं बातों का मतलब लोगों को समझाते फिरे।

उन लोगों ने शरणार्थियों से कहा—खबरदार! आप लोगों में से कोई न लौट जाय। जिन लोगों ने देश का बँटवारा किया है, उनको सजा मिलनी चाहिए। उनको सजा देने के लिए आप संगठित हों, हम आपके साथ हैं। जब हम गद्दी पर बैठेंगे, तब इसका प्रतिकार होगा। आने वाले दिनों के उस संघर्ष के लिए आप लोग तैयार हों और कहें—कांग्रेस मुर्दाबाद!

सभी शरणार्थी एक साथ चिल्ला पड़े—मुर्दाबाद !

कमला उस दिन अपने घर के दरवाजे की आड़ से वही सब बातें सुन रही थी, लेकिन उनका मतलब समझ में नहीं आ रहा था।

माँ ने पूछा—उधर कैसा शोरगुल हो रहा है ?

कमला बोली—पता नहीं, कौन लोग हैं।

—वे कौन हैं ?

—कैसे बताऊँ ?

जिनके लिए सभा हो रही थी, भाषण दिया जा रहा था, वही कुछ समझ न सके। वे लोग यह भी न जान सके कि क्यों उनकी ऐसी दुर्दशा हुई, क्यों उनको देश छोड़ना पड़ा, सब कुछ रहते हुए भी सर्वहारा बन कर क्यों उनको दूसरी जगह जा कर भिखारी बनना पड़ा, कौन उनके दोस्त हैं और कौन दुश्मन या कौन नेहरू है और कौन जिन्ना ? वे लोग सिर्फ इतना ही समझ सके कि जो दुख है, वह बना रहेगा। उसका प्रतिकार कभी नहीं हो सकता। रैडक्लिफ साहब का नाम तो सुनाई पड़ा, लेकिन वह कौन है और उसका क्या परिचय है, यह सब वह लोग नहीं जान सके।

उसके बाद एक दिन कमला ने आ कर माँ से कहा—माँ, आपसे एक सज्जन मिलने आये हैं।

—मुझसे कौन मिलने आया ?

कमला की माँ के आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

तब तक वह युवक सामने आ चुका था।

उस युवक ने कहा—माँ !

'माँ' संबोधन सुनते ही कमला की माँ ने बड़े स्नेह से पूछा—तुम कौन हो बेटा ?

उस युवक ने कमला की माँ के पाँव छू कर प्रणाम किया।

कमला की माँ बोली—लेकिन बेटा, मैं तो तुम्हें पहचान न सकी।

उस युवक ने कहा—आप मुझे कैसे पहचानेंगी ? पहले तो कभी नहीं देखा। कमला मुझे जानती है।

—वह तुम्हें कैसे जानती है ?

—वह मेरे यहाँ काम करती है।

फिर कमला की माँ की उत्सुकता बढ़ गयी। पूछा—तुम्हारा क्या नाम है बेटा ?

उस युवक ने कहा—जयसुन्दर बोस।



नन्दन स्ट्रीट में कमला का मकान था। वहाँ पूजा के कमरे में उस समय कीर्तन हो रहा था—

माधव, कत तोर करब बड़ाई।
उपमा तोहर कहब ककरा हम
कहितहुँ अधिक लजाई।।
जओं सिरिखंड सौरभ अति दुरलभ
तओं पुनि काठ कठोरे।
जओं जगदीस निसाकर तओं पुनि
एकहि पच्छ उजोरे।।

कीर्तनिया कीर्तन कर रहे थे। उनके साथ दो लोग ढोल-मजीरा बजा रहे थे। उनके पीछे कमला राधाकृष्ण की मूर्ति की तरफ मुँह किये हाथ जोड़े बैठी थी। आँखें बंद थीं। कीर्तन के ताल पर वह धीरे-धीरे सिर हिलाती जा रही थी।

तभी अचानक गिरि दौड़ता हुआ आया और बोला—माता जी, माता जी।

इस पुकार पर मानो कमला का ध्यान टूटा। उन्होंने पीछे मुड़ कर पूछा—क्या है गिरि?

गिरि बोला—माता जी, मालिक आये हैं।

—मालिक!

कमला को बड़ा आश्चर्य हुआ। वह सहसा समझ न सकी कि अब क्या करे। लेकिन जयसुन्दर बाबू तब तक जूता खटखटाते हुए वहाँ पहुँच गये।

जयसुन्दर बाबू को देख कर कमला खड़ी हो गयी। उसने जयसुन्दर बाबू की तरफ देखते हुए पूछा—आप? अचानक?

—क्यों, नहीं आना चाहिए?

कमला ने उस बात का उत्तर न दे कर कहा—चलिए, हम दूसरे कमरे में जायें।

जयसुन्दर बाबू कमला का अनुसरण करते हुए चले और बोले—नाहक घबड़ा गयी। क्या मैं जूता पहन कर तुम्हारे पूजा के कमरे में चला जाता?

कमला ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया।

उसके बाद जयसुन्दर बाबू ने दोनों तरफ दीवारों में लगे महापुरुषों के चित्रों की तरफ देख कर कहा—वाह ! इस मकान को तो तुमने एकदम मन्दिर बना लिया है। एक साथ इतने महापुरुषों के चित्र एक जगह बड़ी मुश्किल से देखने को मिलते हैं।

कमला ने इन बातों का जवाब देना आवश्यक नहीं समझा। वह चलती चली गयी और अन्त में एक कमरे में पहुँचने के बाद कमला बोली—अब बताइए, क्या कहना है ?

जयसुन्दर बाबू बोले—यह कैसे समझ गयी कि मुझको कुछ कहना है और इसी लिए मैं यहाँ आया हूँ। अगर कुछ कहना न हो तो क्या मैं इस मकान में नहीं आ सकता ?

कमला बोली—क्यों नहीं आयेंगे ? यह तो आपका ही मकान है। यहाँ जो कुछ देख रहे हैं, आपके पैसे से खरीदा गया है। कहना तो यह चाहिए कि इस मकान में रहने का मेरा ही कोई अधिकार नहीं है।

जयसुन्दर बाबू ने कहा—क्यों ? क्यों ऐसी बात कह रही हो ? तुम मेरी पत्नी हो। मेरा मकान भी तुम्हारा ही मकान है।

कमला बोली—मैं आपकी बात का विरोध नहीं करूँगी। लेकिन आप क्या कहने के लिए आये हैं, वही कहिए।

जयसुन्दर बाबू बोले—फिर वही निशिकान्त मेरे पीछे पड़ा है।

—कौन निशिकान्त ?

—क्या तुम निशिकान्त को नहीं पहचानती ?

कमला बोली—मैं आपके परिचितों को कैसे पहचान सकती हूँ ? मैं तो आपके साथ एक मकान में नहीं रहती, इसलिए कैसे जानूँगी कि कब कौन आपके पास आता है ?

जयसुन्दर बाबू बोले—लेकिन हम तो हमेशा अलग-अलग नहीं रहते आये। कभी तो हम एक मकान में रहते थे।

— वह तो बहुत पहले की बात है। अब इतने दिनों बाद कैसे याद रह सकता है ?

जयसुन्दर बाबू ने कहा—लेकिन ठाकुर-देवता की बात होती तो शायद तुम्हें जरूर याद रहती।

कमला बोली—आप ताना दे कर क्यों बात कर रहे हैं ? खैर, कीजिए, मैं कोई आपत्ति नहीं करूँगी। लेकिन यह तो बताइए कि ठाकुर-देवता ले कर न रहूँ तो क्या ले कर रहूँ ? मुझे भी तो कोई सहारा चाहिए। आप काम के आदमी हैं। आपके पास काम की कमी नहीं है। लेकिन मेरे पास कौन-सा काम है ?

जयसुन्दर बाबू बोले—क्या तुमने कभी मेरे साथ सहयोग किया है ?

—क्या आपने भी सहयोग किया है ?

जयसुन्दर बाबू ने कहा—तुम तो नहीं समझती कि मेरे कितने झमेले हैं। शुरू से अब तक मुझे कितना परिश्रम करना पड़ रहा है। तुम तो सब कुछ जानती हो। रुपया कमाना क्या इतना आसान है ?

कमला बोली—लेकिन इतना रुपया ले कर आप क्या करेंगे ?

जयसुन्दर बाबू जरा मुस्कराये।

फिर बोले—रुपया न कमाने पर यह जो इतना खर्च है, कैसे चलता ? यह जो तुमको इतने आराम से रखा है, तुम रात-दिन कीर्तन सुन रही हो और पूजा कर रही हो, इसके लिए रुपया खर्च नहीं होता ? ये जो इतने साधु-महात्माओं के चित्र दीवार पर टांग रखे हैं, इसके लिए रुपया नहीं लगता ? यह जो तुम्हारे रामकृष्ण परमहंस हैं, यह तो कोई नौकरी नहीं करते थे ? रानी रासमणि के पास यदि रुपया न होता तो वह उतने साधु-महात्माओं को कैसे पालती ? कैसे वह मन्दिर बनवाती ? रानी रासमणि रुपया न देती रहतीं तो तुम्हारे रामकृष्णदेव क्या खाते ? इस तरह हर काम में रुपया लगता है। इसलिए रुपया कमाना कोई शर्म की बात नहीं है। रुपये से घृणा करना भी ठीक नहीं है।

कमला बोली—आप ठाकुर रामकृष्ण का नाम क्यों ले रहे हैं ? ऐसे महात्माओं का नाम लेना आपको शोभा नहीं देता।

—कैसे शोभा देता ? मैं तो रुपये के पीछे भागता हूं न ? लेकिन रुपये के पीछे भागने वाले बिड़ला के दान से जो मन्दिर बना है, उसमें रोज हजारों लोग पूजा करने आते हैं और लक्ष्मी-नारायण की मूर्ति की प्रशंसा करते हैं। यदि बिड़ला रुपया न कमाते और रुपये के पीछे न भागते तो क्या वैसा सम्भव होता ?

कमला बोली—अब यह सब बातें रहने दीजिए। आप जो कहने आये हैं, वही कहिए।

—क्यों, क्यों यह सब बातें रहने दूं ? क्या तुम नहीं जानती कि कभी मैं इसी कलकत्ते की सड़क पर भीख मांगा करता था ? राधेश्याम बाबू की कोठी में सवेरे से शाम तक बहीखाता लिखता था और उसके बदले में हर महीने पन्द्रह रुपये पाता था ? यह नौकरी करने के बाद जो समय बचता था, सड़क पर घूम-घूम कर गमछा बेचा करता था ? यह सब किया था, तभी तो तुमसे शादी हो सकी, इतना बड़ा मकान बन सका और अब तुम नौकर-नौकरानी से घर आराम कर रही हो। रुपया कमाया, तभी तो यह सब हो सका।

कमला ने कहा—मैं गरीब घर की लड़की हूं। मुझे तकलीफ उठाने की आदत है।

—लेकिन वह आदत तो बहुत पहले थी। अब तो आराम कर रही हो!

कमला बोली—क्या आराम कर रही हूँ, यह तो भगवान ही जानते हैं।

—भगवान तो मेरे बारे में भी जानते हैं। तुम्हारे और मेरे भगवान तो अलग-अलग नहीं हैं? फिर हर अकल तो भगवान नहीं देते? इसके लिए अपना दिमाग भी खर्च करना पड़ता है। मैंने अपना दिमाग लगाया था, बुद्धि से काम लिया था, तभी तुम आज रानी बन कर आराम कर रही हो।

कमला बोली—दुहाई है! आपका दिया इतना आराम मैं नहीं चाहती। यदि हो सके तो मुझे जरा शान्ति दें।

—अरे, तुम तो नासमझ की तरह बात करने लगी। रुपया ही तो शान्ति है! आराम कहो या सुख, आनन्द कहो या शान्ति, रुपये के बिना यह सब कुछ भी मिलना सम्भव नहीं है।

कमला बोली—हाँ-हाँ, सम्भव है। आप भी मेरी तरह पूजा करें, एकान्त में थोड़ी देर ध्यान लगा कर बैठे रहें तो देखेंगे कि कितना सुख, शान्ति और आनन्द मिलता है।

जयसुन्दर बाबू बोले—लेकिन उसके बाद?

कमला जयसुन्दर बाबू के प्रश्न का मतलब न समझ सकी।

उसने पूछा—उसके बाद क्या?

जयसुन्दर बाबू ने कहा—उसके बाद इस मकान का टैक्स कहाँ से दोगी? पूजा के उपचार खरीदने के लिए भी तो रुपया लगता है, कौन उसकी सप्लाई करेगा? तुम्हारे यहाँ जो लोग कीर्तन करते हैं, क्या वे भूखों रह कर वैसा कर सकेंगे? उनको कैसे खिलाओगी? तुम्हारे स्वामी विवेकानन्द ने भी तो कहा है कि पेट खाली रहने पर धर्म भी नहीं होता।

कमला बोली—मैंने कभी यह तो नहीं कहा कि रुपये की जरूरत नहीं है।

—तुम तो हमेशा वही कहती आयी हो!

कमला ने कहा—आप गलत क्यों कहते हैं? मैं कभी ऐसा नहीं कह सकती। मेरे बच्चे बाहर हास्टल में रह कर पढ़ते हैं। उनका खर्च अलग है। उसके लिए क्या मैंने कभी आपको रुपया कमाने से मना किया है?

जयसुन्दर बाबू बोले—लेकिन उसी के लिए तो तुम हमेशा मुझसे लड़ती रही हो?

—उसके लिए मैं कभी आपसे नहीं लड़ी। लेकिन आप तो चौबीस घंटे रुपये के पीछे पागल बने रहते हैं। रात को सोते समय भी सोचने लगते हैं कि कैसे इन-कम टैक्स देने से बचा जा सकता है। इनकम टैक्स की चोरी से कैसे अधिक कमाई

हो सकती है। मैंने उसी के लिए आपको समझाना चाहा था। और कोई बात नहीं थी।

जयसुन्दर बाबू ने कहा—लेकिन रुपया कमाने के लिए सोचना नहीं पड़ेगा? रुपया कमाना होगा, रुपये का सपना देखना होगा, रुपये का नाम जपना पड़ेगा, तभी तो रुपया आयेगा। रुपया कोई मामूली चीज नहीं है। मैं रुपये के बारे में नहीं सोचूंगा, रुपये के लिए माथा-पच्ची नहीं करूंगा और रुपया आ कर मेरे संदूक में भरता चला जायेगा, ऐसा कभी हो सकता है?

फिर जरा रुक कर जयसुन्दर बाबू बोले—खैर, छोड़ो। यह सब बातें सुनना शायद तुम्हें अच्छा न लगता होगा। मैं तो दूसरी बात करने आया था।

कमला बोली—मैं आपके रुपये की बात नहीं सुनना चाहती। यह सब बातें मुझसे न कहें।

जयसुन्दर बाबू बोले—अब मैं समझ रहा हूँ कि तुम्हारे पास न आता तो अच्छा करता। घर की तरफ जा रहा था। अचानक न जाने क्या सूझा, बेणीलाल से कार मोड़ने के लिए कहा।

कमला बोली—आप कभी नहीं आते और आज अचानक चले आये, इसलिए बड़ा आश्चर्य हो रहा है।

—अभी बताया न, वही निशिकान्त....

कमला जरा झुंझला कर बोली—अब यह सब सुनना मुझे अच्छा नहीं लगता। फिर कौन कहाँ का निशिकान्त, मैं उसे पहचानती भी नहीं। इसलिए उसके बारे में सुन कर क्या करूंगी?

जयसुन्दर बाबू बोले—लेकिन उसने दो लाख रुपये माँग कर चिट्ठी लिखी है....

—यदि आपके पास हो तो दे दीजिए दो लाख रुपये। रुपये की तो कमी नहीं है।

—लेकिन इस तरह दबाव डाल कर उसने अब तक मुझसे कितना रुपया लिया है, जानती हो?

कमला बोली—यदि आप उसे रुपया न देना चाहते हों, तो न दें।

यह जवाब सुन कर जयसुन्दर बाबू झुंझलाये। उन्होंने कहा—तुमसे बात करना भी एक झमेला है।

—अगर मुझसे बात करना आपको अच्छा नहीं लगता, तो इस घर में क्यों आये? यहाँ आने के लिए किसने आपसे कहा था? किसने आपको कसम धरायी थी?

जयसुन्दर बाबू बोले—तुम इस तरह बात करती हो, इसीलिए मैं अलग मकान में रहता हूँ !

—अच्छा करते हैं ! फिर आप क्यों आये ? मैंने तो आपको नहीं बुलाया ? मैं इस जिंदगी में कभी आपको बुलाऊँगी भी नहीं । इतना आप समझ लें ।

—लेकिन मेरा रुपया क्या तुम्हारा रुपया नहीं है ?

कमला ने जरा ऊँचे स्वर में कहा—नहीं, नहीं, कभी नहीं । मैं आपका रुपया ले कर स्वर्ग नहीं पहुँच जाऊँगी । इसलिए आप अपना रुपया किसको देंगे और किसको नहीं देंगे, इस संबंध में मुझसे सलाह-मशविरा करने की भी जरूरत नहीं है । मैं आपकी कौन होती हूँ ? आपको यह तो मालूम होगा कि मैंने आपसे शादी करना नहीं चाहा था । आप ही चाहते थे और उसके लिए आपने मेरी माँ को बार-बार समझाया था ।

जयसुन्दर बाबू बिगड़ गये ।

बोले—उस समय मैंने गलती की थी । यदि मैं उस समय जानता कि तुम्हारी ऐसी आदत है तो किसी को बार-बार न समझाता । अब मैं उसी का खामियाजा भुगत रहा हूँ ।

कमला बोली—वह गलती अब तो सुधार सकते हैं ?

जयसुन्दर बाबू ने पूछा—कैसे ?

—क्यों ? अदालत में जा कर विवाह-विच्छेद का मुकदमा दायर कर सकते हैं ।

—आज तुम ऐसी बात कह रही हो ?

कमला बोली—क्यों न कहूँ ? यदि मैं आपको जी भर गाली देती तो शायद मेरा गुस्सा शान्त होता !

जयसुन्दर बाबू बोले—अब तो ऐसा कहोगी । यदि मैं उस समय तुमसे शादी न करता तो इस समय तुम सड़क पर खड़ी हो कर भीख मांगती । वह भी न होता तो कोठे पर पहुँच जाती और चेहरे पर रंग पोत कर गाहक फंसाया करती !

कमला बोली—फिर भी वह इससे बहुत अच्छा रहता ।

जयसुन्दर बाबू बोले—कुत्ते को पुचकारने से वह सिर पर चढ़ जाता है । तुम्हारा भी यही हाल है । कभी तो तुम सड़क की कुतिया जैसी थी, लेकिन मैंने तुम्हें वहाँ से उठा कर पलंग पर बिठाया था । आज तुम उसका एहसान भी नहीं मानती !

—बस कीजिए । चुप हो जाइए !

जयसुन्दर बाबू ने कहा—क्यों चुप हो जाऊँ ? किसी के डर से चुप हो जाऊँ ? लेकिन मैं किसी से क्यों डरूँ ? क्या तुम यही कहना चाहती हो कि तुमसे डरा करूँ ?

कमला बोली—आप क्यों बात का बतंगड़ बनाना चाहते हैं ? अब आप यहाँ से जाइए।

जयसुन्दर बाबू बोले—हाँ-हाँ, आऊँगा। मैं तुम्हारे यहाँ रहने के लिए नहीं आया। कभी ऐसा सोचना मत। मैं जा रहा हूँ, लेकिन उसके पहले तुम्हें सावधान कर देना चाहता हूँ कि अब भी ढंग से बात करना सीखो।

कमला ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह चुपचाप सिर झुकाये खड़ी रही।

जयसुन्दर बाबू भी एक क्षण चुपचाप खड़े रहे। उसके बाद वह दरवाजे की तरफ बढ़े।

कमला भी जयसुन्दर बाबू के साथ कमरे के बाहर निकली।

कमरे के बाहर आते ही जयसुन्दर बाबू को कीर्तन का मधुर स्वर सुनाई पड़ा। लेकिन उस समय उनको वह स्वर बड़ा कटु लगा।

अचानक जयसुन्दर बाबू को न जाने क्या सूझा, वह मकान के बाहर जाने के लिए मुड़ कर भी रुक गये। फिर वह उस कमरे की तरफ बढ़े जहाँ कीर्तन हो रहा था। वह पूजा का कमरा था और कमला वहीं सुबह-शाम पूजा करती थी।

जयसुन्दर बाबू जूता पहन कर ही सीधे पूजा के कमरे में चले गये। उसके बाद वह जूता पहन कर ही कमला की राधा-कृष्ण की मूर्ति पर तड़ातड़ लात जमाने लगे।

कमला से रहा न गया। वह चीख पड़ी। चीख कर बोली—क्या किया ! हाय आपने क्या किया ! आपने मेरे ठाकुर को लात मारी ?

यह सारी घटना इतनी तेजी से घट गयी कि कीर्तनिया और उसके साथी समझ न सकें कि क्या हो गया। लेकिन इस घटना की आकस्मिकता से उनका कीर्तन बंद हो गया। फिर जयसुन्दर बाबू पूजा के कमरे से कब निकल गये, कोई देख भी न पाया। वह जिस तरह अचानक उस कमरे में जा धमके थे, उसी तरह वहाँ से निकल भी गये।

जयसुन्दर बाबू के चले जाने के बाद कमला को मानो होश आया। वह राधा-कृष्ण की टूटी मूर्ति के टुकड़ों पर मानो झपट पड़ी। दोनों हाथों में उन टुकड़ों को भर कर वह अस्फुट स्वर में कहने लगी—हे भगवान, आप उनको क्षमा कर दें। आप उनका अपराध क्षमा कर दें। यह सारा दोष मेरा है, मेरा है।



निशिकान्त दास जयसुन्दर बाबू की जिन्दगी में कोई नया आदमी नहीं था। लेकिन वह बहुत पहले की बात थी। कहना चाहिए कि वह जयसुन्दर बाबू के जीवन का प्रारम्भ था। राधेश्याम बाबू की कोठी में रह कर जयसुन्दर बाबू ने वहीखाता लिखने का काम अच्छी तरह सीख लिया था। वहियों में मुनाफे की रकम को किस तरह घाटा दिखाया जा सकता है, यही विद्या उन्होंने पहले-पहल सीखी थी। कहना चाहिए कि वही उनके लिए ककहरा था।

जिस समय जयसुन्दर बाबू ने पहले-पहल अपना कारोबार शुरू किया था, उस समय वही अकेले मालिक थे और वही अकेले सेल्समैन। वही टाइपिस्ट थे और वही चपरासी।

जयसुन्दर बाबू के लिए वह भी एक जमाना था। उनका आर्डर सप्लाई का काम था। चारों तरफ घूम-घूम कर उन्हें आर्डर लेना पड़ता था। यदि कोई कहता था कि मुझे बीस हार्स-पावर का इलेक्ट्रिक पम्प चाहिए तो जयसुन्दर बाबू कहीं से वह पम्प खरीद कर उसे बेचते थे। ऐसे काम में उन्हें कुछ न कुछ कमीशन मिल ही जाता था।

लेकिन कमीशन की यह रकम कभी एक जैसी नहीं रहती थी। तीस हजार रुपये का माल बेचने पर कभी-कभी जयसुन्दर बाबू को सिर्फ दस रुपये मिलते थे। वह बहुत कम कमीशन पर माल बेचते थे। ऐसा करने से कुछ ही महीनों में उनका बड़ा नाम हो गया। जो लोग उनको माल बेचते थे और जो उनसे माल खरीदते थे, दोनों उनसे खुश रहने लगे। व्यापारियों में उनकी साख बन गयी।

साख बनने पर भी जयसुन्दर बाबू को फायदा बहुत कम होता था। किसी तरह उनका पेट भरता था और खर्च चलता था। पूंजी राधेश्याम बाबू से उधार मिल जाती थी। उसके लिए राधेश्याम बाबू को बहुत कम ब्याज देना पड़ता था। न जाने क्यों जयसुन्दर बाबू को राधेश्याम बाबू बहुत पसन्द करने लगे थे।

एक बार राधेश्याम बाबू स्वयं जयसुन्दर बाबू के कार्यालय में आये थे। उस समय वह कार्यालय एक कमरे में था। राधेश्याम बाबू ने उसी कमरे को घूम-फिर कर देखा था। टेबिल-कुर्सियाँ लगा कर जयसुन्दर बाबू ने अपने कार्यालय को बड़े ढंग से सजाया था।

राधेश्याम बाबू ने जयसुन्दर बाबू की कार्यकुशलता की बड़ी तारीफ की थी।

फिर राधेश्याम बाबू ने पूछा था—चिट्ठियाँ कौन लिखता है ?

जयसुन्दर बाबू ने कहा था—मैं लिखता हूँ।

—दफ्तर की साफ-सफाई कौन करता है ?

जयसुन्दर बाबू ने फिर कहा था—मैं करता हूँ ?

—इस कमरे का कितना किराया देना पड़ता है ?

—पाँच रुपये।

—इतना बड़ा कमरा पाँच रुपये में कैसे मिल गया ?

जयसुन्दर बाबू ने कहा था—यह बड़ी विचित्र कहानी है राधेश्याम बाबू। क दिन मैं कहीं पैदल जा रहा था कि देखा, एक बुढ़िया सड़क पार कर रही है। किन तभी देखा कि एक बस बड़ी तेजी से आ रही है। पल भर भी देर करता ो बुढ़िया उस बस की चपेट में आ जाती। लेकिन मैंने लपक कर उस बुढ़िया को ागे धकेल दिया। बुढ़िया तो बच गयी, लेकिन बस का धक्का खा कर मैं गिर ड़ा। उसके बाद मुझे याद है कि चारों तरफ से लोग दौड़ पड़े। लेकिन उसके ाद क्या हुआ, मुझे याद नहीं पड़ता। फिर जब होश आया तो देखा कि अस्पताल पड़ा हूँ। मेरे सिर पर पट्टी बँधी है और वह बुढ़िया मेरे सामने खड़ी है।

उस बुढ़िया ने मुझसे पूछा—अब कैसा लग रहा है बेटा ?

मैंने भी पूछा—मैं अस्पताल में कैसे आ गया ?

बुढ़िया बोली—बेटा, अभी बोलो मत। तुम्हें अस्पताल में लाया गया है। झे बचाने में तुम अपनी जान गँवाने लगे थे।

राधेश्याम बाबू बड़े ध्यान से जयसुन्दर बाबू की कहानी सुनने लगे थे। जय-न्दर बाबू जरा रुके तो उन्होंने पूछा—फिर क्या हुआ ?

—उसके बाद तीन महीने अस्पताल में रहा। फिर एक दिन अस्पताल से छुट्टी मल गयी। वह बुढ़िया उस दिन आयी थी। उस दिन उसने मुझसे पूछा था—म कहाँ जाओगे ? तुम्हारा घर कहाँ है बेटा ?

मैंने कहा था—मेरा कोई घर नहीं है।

मेरी बात सुन कर बुढ़िया को बड़ा आश्चर्य हुआ था।

पूछा था—क्या कहते हो ? कोई घर नहीं है ?

मैंने कहा था—जी हाँ। मेरा घर नहीं है। मैं कालीघाट के मन्दिर में रहता ँ।

—वहाँ तुम्हारा कौन है ?

मैंने कहा था—मेरा कोई नहीं है। मैं उस मन्दिर के बाहर एक जगह पड़ा हता हूँ।

—माँ-बाप, भाई-बहन या चाचा-चाची, कोई नहीं है ?

—जी हां, कोई नहीं है।

—फिर अस्पताल से छूट कर कहां जाओगे ?

—उसी कालीघाट के मन्दिर में।

—वहां किसके पास रहते हो ?

मैंने कहा था—वहां किसी के पास नहीं रहता। वहां एक पंडे की पेड़े की दुकान में अपनी चटाई रख देता हूं। उसी के साथ एक तकिया रहता है। वहीं जाऊंगा।

इस पर बुढ़िया बोली थी—फिर तुम मेरे घर चलो बेटा ! मेरे घर में तुम्हारी देखभाल हो सकेगी और तुम आराम से रह सकोगे।

राधेश्याम बाबू बड़े ध्यान से कहानी सुन रहे थे। उन्हें अंत तक सुनने की उत्सुकता थी। उन्होंने पूछा—उसके बाद क्या हुआ ? तुम बुढ़िया के घर गये ?

जयसुन्दर बाबू ने कहा था—क्या करता ? गया। सोचा था, चल कर देखा तो जाय। जा कर देखा कि मकान काफी बड़ा है और वह भी एकदम सड़क पर।

असल में बुढ़िया उस दिन पैदल गंगास्नान करने जा रही थी, तभी वह दुर्घटना घटी। मैंने उसे उस समय बचाया था। तभी वह मुझे उतना चाहने लगी थी। वह बुढ़िया विधवा थी। बहुत दिन पहले उसके पति की मृत्यु हो चुकी थी।

फिर एक दिन उस बुढ़िया ने मुझसे पूछा—बेटा, तुम क्या करते हो ?

मैंने कहा—मैं एक मारवाड़ी की कोठी में पन्द्रह रुपये महीने पर नौकरी करता हूं। उसके बाद जो समय बचता है, सड़क पर घूम-घूम कर गमछा बेचता हूं। उससे भी कुछ पैसा मिल जाता है।

मेरी बात सुन कर उस बुढ़िया ने कहा—लेकिन सड़क पर घूम-घूम कर क्यों गमछा बेचते हो ? कहीं कोई दुकान नहीं खोल सकते ?

मैंने कहा—मुझे दुकान कहां मिलेगी ? किराये पर दुकान लेने के लिए बहुत रुपया लगता है। उतना रुपया मुझे कहां से मिलेगा ?

मेरी बात सुन कर बुढ़िया बोली—बेटा, मेरे मकान में नीचे सड़क की तरफ जो कमरा है, तुम वहीं दुकान खोलो। उसी से लगा जो कमरा है, उसमें रहना। यहां गमछे की दुकान खूब चलेगी।

मैंने पूछा—कितना किराया देना होगा ?

बुढ़िया बोली—तुम्हें किराया नहीं देना पड़ेगा। तुमने अपनी जान जोखिम में डाल कर मुझे बचाया है और मैं तुमसे किराया लूंगी ?

मैंने कहा—आप किराया नहीं लेंगी तो मैं भी दुकान नहीं लूंगा।

बुढ़िया बोली—ठीक है। जैसा तुम चाहोगे वैसा होगा। दे देना कुछ किराया।

मैंने कहा—मैं हर महीने आपको उस कमरे का पाँच रुपये किराया दिया करूँगा।

फिर यही बात पक्की हो गयी।

मैं पाँच रुपये पर उस बुढ़िया के घर में रहने लगा और वहीं गमछे की दुकान खोल ली। लेकिन गमछा बेच कर ज्यादा पैसा नहीं बचा पाता था।

—और खाना?

जयसुन्दर बाबू बोले—बुढ़िया जब तक जिन्दा थी, मैं उसी के साथ खाना खाता था। उस बुढ़िया का इस दुनिया में कहीं कोई नहीं था। मैं ही उसके लिए सब कुछ था।

राधेश्याम बाबू यह कहानी सुनते-सुनते उत्साहित हो चले थे। उन्होंने पूछा—उसके बाद?

—उसके बाद तो अब देख रहे हैं, मेरा स्वतंत्र व्यवसाय बन गया है।

राधेश्याम बाबू ने उस दिन जयसुन्दर बाबू को बड़ा उत्साह दिया था।

कहा था—बहुत अच्छा। बहुत अच्छा। तुमने बड़ा अच्छा किया है। मुझे बड़ी खुशी हुई है। जब भी जरूरत पड़े, मुझसे रुपया लेना।

—रुपये की क्यों जरूरत पड़ेगी?

इस पर राधेश्याम बाबू ने कहा था—जिन्दगी भर गमछे की दुकान करोगे तो कैसे काम चलेगा? तुमको तो और बड़ा बनना होगा। तुमको तो मालामाल बनना है। लेकिन उसके लिए, यानी बड़े व्यापारी बनने के लिए तुम्हें पूँजी की जरूरत पड़ेगी।

—लेकिन आप तो मुझसे ब्याज लेंगे?

इस पर राधेश्याम बाबू ने उस दिन कहा था—हम मारवाड़ी हैं। हम तो अपने बेटे से भी ब्याज लेते हैं। इसलिए तुम भी ब्याज देना।

—किस हिसाब से ब्याज दूँगा?

—अधिक नहीं देना पड़ेगा। मैं तुमसे दो रुपये सैकड़ा ब्याज लूँगा।

जयसुन्दर बाबू ने कहा था—लेकिन मैं ब्याज दे सकूँगा?

—क्यों नहीं दे सकोगे? जब सिर पर कर्ज खड़ा रहता है तब ब्याज देने की खुद चिन्ता रहती है। फिर ब्याज का रुपया जुटाने के लिए आमदनी बढ़ाने का उपाय किया जाता है। अगर ऐसा न हो तो हर कोई सोचेगा कि रुपया जमा कर क्या करूँगा? मुझसे ब्याज पर रुपया लोगे तो ब्याज सहित असली रकम चुकाने के लिए तुम रातदिन मेहनत करोगे। उससे अधिक रुपया कमा सकोगे। साथ ही साथ तुम्हारा व्यवसाय भी फलेगा-फूलेगा।

फिर इसी तरह शुरुआत हुई।

जयसुन्दर बाबू ने गमछा बेचने से अपना काम शुरू किया और बाद में वह बहुत बड़े कारोबारी बन गये। उन्होंने चाय बगान खरीदा और वनस्पति का कारखाना खोला। उनके कारखाने में सैकड़ों लोग काम करने लगे।

लेकिन सब कुछ उसी मामूली गमछे से शुरू हुआ।

फिर उसके बाद कहाँ गये राधेश्याम बाबू? कहाँ गयी वह बुढ़िया मकान मालकिन? लेकिन जयसुन्दर बाबू की फैक्ट्री के सुसज्जित कार्यालय में राधेश्याम बाबू का बहुत बड़ा आयल पेंटिंग लग गया। जयसुन्दर बाबू जब भी उस कार्यालय में जाते, उस आयल पेंटिंग की तरफ देख कर मन ही मन राधेश्याम बाबू को प्रणाम करते।

सिर्फ फैक्ट्री नहीं, जयसुन्दर बाबू के अपने मकान के ड्राइंग रूम में भी राधेश्याम बाबू का उतना ही बड़ा आयल पेंटिंग था। वे दोनों पेंटिंग तैयार कराने में जयसुन्दर बाबू ने छः सौ रुपये खर्च किये थे।

जयसुन्दर बाबू ने जब गमछे की दुकान के बाद कपड़े की दुकान खोली थी, तब राधेश्याम बाबू ने उन्हें एक मुश्त दो हजार रुपये दिये थे। जयसुन्दर बाबू को वह रुपया लेते समय बड़ा डर लगा था। एक साथ दो हजार रुपये। दो हजार रुपये उन दिनों कोई मामूली रकम नहीं थी। जयसुन्दर बाबू को बस यही चिन्ता पड़ी थी कि यह उधार कैसे चुकता होगा। उस समय तो उनको यही चिन्ता सताने लगी थी कि दो हजार रुपये का ब्याज ही नियमित रूप से कैसे दिया जा सकेगा? ब्याज के अलावा असली रकम भी थी।

लेकिन गजब हो गया था। जयसुन्दर बाबू को सचमुच बड़ा आश्चर्य हुआ था। उनके जीवन की वह एक अद्भुत घटना थी।

दो महीने के अन्दर जयसुन्दर बाबू का सारा कपड़ा बिक गया था। कंधे पर कपड़ा लाद कर उनको मुहल्ले-मुहल्ले में फेरी नहीं करनी पड़ी थी। पता न चला कि कब कहाँ से कौन लोग आये और धीरे-धीरे सारा कपड़ा खरीद ले गये।

फिर एक दिन पूरा रुपया ले कर जयसुन्दर बाबू राधेश्याम बाबू की कोठी में पहुँचे थे।

जयसुन्दर बाबू को देख कर राधेश्याम बाबू को बड़ा आश्चर्य हुआ था। राधेश्याम बाबू उनकी तरफ देखने लगे थे।

—क्या खबर है जयसुन्दर बाबू?

जयसुन्दर बाबू ने जेब से रुपया निकाल कर कहा था—आपका रुपया लाया हूँ। असली रकम के साथ ब्याज भी है।

—कैसा रुपया?

—आपने जो मुझे दो हजार रुपये उधार दिये थे, वही रुपया और उसका ब्याज।

—अरे! सारा कपड़ा बिक गया?

—जी हां।

—तब तो तुम्हें और कपड़ा खरीदने के लिए रुपया चाहिए?

—जी हां। वह तो चाहिए।

—वह रुपया कहां से आयेगा?

जयसुन्दर बाबू ने कहा था—यह तो मैंने नहीं सोचा।

—तुम्हें सोचना चाहिए। सुनो, अब एक काम की बात बताऊं। मैं महाजन हूं और तुम देनदार हो। महाजन का पूरा पैसा कभी नहीं चुकाना चाहिए।

—आप क्या कह रहे हैं?

—हां, मैं जो बता रहा हूं, उसको सुनो। तुमने शायद महाजन का पैसा चुकाने के लिए सस्ते में सारा माल बेचा है?

—जी हां, बेचा है। मैं घबड़ा रहा था कि आपका कर्जा चुका पाऊंगा कि नहीं।

राधेश्याम बाबू ने कहा था—यही तो गलती की है। एक दिन तुम भी महाजन बन सको, इसकी कोशिश करनी चाहिए। इसके लिए तुम्हें जिन्दगी भर देनदार बने रहना होगा। टाटा, बिड़ला का नाम सुना है?

जयसुन्दर बाबू ने कहा था—उनका नाम कौन नहीं जानता?

राधेश्याम बाबू ने कहा था—सिर्फ टाटा, बिड़ला नहीं। उनकी तरह बहुत से छोटे-मोटे टाटा, बिड़ला भी इस देश में हैं। वे टाटा, बिड़ला जैसे बड़े तो नहीं हैं, लेकिन किसी से कम भी नहीं हैं। जानते हो, वे सभी देनदार हैं? वे एक तरफ देनदार हैं तो दूसरी तरफ महाजन भी हैं। अंग्रेजी में इसीलिए दो शब्द हैं, डेबिट और क्रेडिट। हरेक का डेबिट है तो हरेक का क्रेडिट भी है। व्यापार करते हुए अगर तुम यह सोच लो कि तुम हमेशा क्रेडिट की तरफ रहोगे, डेबिट की तरफ नहीं, तो तुम कभी बड़े व्यापारी नहीं बन सकोगे। क्या तुम्हें पता है कि मैं भी देनदार हूं?

यह सुन कर जयसुन्दर बाबू को बड़ा आश्चर्य हुआ था।

पूछा था—आप भी देनदार हैं?

राधेश्याम बाबू ने कहा था—देनदार न होने पर मेरे पास इतना पैसा कैसे आया?

पहले तो जयसुन्दर बाबू इस बात का मतलब नहीं समझ सके थे, लेकिन बाद में समझ गये थे। समझ गये थे कि किसी के जीवन में जिस

होता है, उसी तरह कारोबार में भी। डेबिट और क्रेडिट हर क्षेत्र में है। ये दोनों ही बड़े अद्भुत हैं। जीवन भर के अनुभव में ये दोनों शब्द जितने महत्त्वपूर्ण हैं, उतने महत्त्वपूर्ण कोई भी दो शब्द किसी कोश में नहीं मिलते।

जयसुन्दर बाबू जब लौटने लगे थे, तब राधेश्याम बाबू ने उनसे कहा था—लो, अपना दो हजार रुपया ले जाओ। इस रुपये से फिर माल खरीदो। हां, ठीक समय पर मुझे दो परसेंट ब्याज देते रहना। ब्याज लछमी है। इसलिए उसको कभी इनकार नहीं करता। तुम भी कभी मत करना। तुम जिसको उधार पर माल दोगे, उससे चार परसेंट ब्याज लेना। इस तरह तुम्हारे पास सैकड़ा दो रुपये बचेंगे। वही तुम्हारा मुनाफा होगा।

फिर थोड़ा रुक कर राधेश्याम बाबू ने कहा था—और एक बात है। कभी किसी को धोखा मत देना।

—धोखा नहीं दूंगा ?

—हां। दूसरे को ठगोगे तो तुम्हारा अपना व्यवसाय चौपट होगा। तुम कहीं के नहीं रहोगे। इसलिए अच्छा कह कर खराब माल कभी मत बेचना। समझ गये।

—लेकिन किसी को न ठगूंगा तो व्यापार में तरक्की कैसे करूंगा ?

इस पर राधेश्याम बाबू ने कहा था—यह तुम्हारा गलत ख्याल है। दूसरों को ठगोगे तो तुम्हारी दुकान चौपट होते देर न लगेगी। लेकिन मैं ऐसा नहीं कह रहा हूं कि तुम कभी किसी को नहीं ठगोगे। ठगोगे सिर्फ सरकार को। धोखा दोगे तो सिर्फ गवर्नमेंट को। सरकार को जितना धोखा दोगे, उतनी जल्दी तरक्की करोगे।

—सरकार को धोखा दूंगा ?

—हां, सरकार को धोखा दोगे। अगर सरकार को न ठग सकोगे तो जिन्दगी में कभी तरक्की भी न कर पाओगे।

—लेकिन सरकार को ठगने पर तो पुलिस मुझे पकड़ेगी।

राधेश्याम बाबू ने कहा था—पुलिस को पता चलेगा, तभी तो वह पकड़ेगी। लेकिन उसे क्यों पता चलेगा ? सरकार को ऐसे ठगना होगा कि उसे पता भी न चल पाये। देखो, मैं भी सरकार को ठगता हूं, लेकिन कोई मुझे पकड़ नहीं पाता। किसी व्यवसायी को कोई पकड़ नहीं पाता। फिर आखिरी दांव तो है ही।

—यह आखिरी दांव क्या है ?

राधेश्याम बाबू ने कहा था—यह आखिरी दांव है घूस। रिश्वत पाने पर सब का मुंह बंद हो जाता है।

—लेकिन लोग मुझसे घूस क्यों लेंगे ?

—नहीं। सेंगे। फिर ऐसे आदमी के हाथ में घूस देने कि वे सेंगे। घूस लेना जितना मुश्किल है, उतना ही मुश्किल है घूस देना! अगर एक बार घूस देने का ढंग आ जाय तो तुम्हें मालामाल होने में देर न लगेगी।

तभी राधेश्याम बाबू के कमरे में चूड़ामणि आ गये थे और आगे कोई बात-चीत न हो सकी थी।

राधेश्याम बाबू ने सिर्फ कहा था—ठीक है जयसुन्दर, तुम और किसी दिन आ जाना। मैं तुम्हें सब समझा दूंगा।

न जाने क्यों जयसुन्दर बाबू के प्रति राधेश्याम बाबू के मन में न जाने कैसा आकर्षण पैदा हो गया था। इसलिए उन्होंने चूड़ामणि जी के सामने जयसुन्दर बाबू को अधिक कुछ बताना नहीं चाहा।

जयसुन्दर बाबू बाहर दरवाजे के पास आये तो चूड़ामणि जी ने उनको पकड़ा।

पूछा—मालिक से क्या बात हो रही थी बंगाली बाबू?

जयसुन्दर बाबू ने कहा था—अरे, कोई खास बात नहीं थी।

उस दिन यही कह कर जयसुन्दर बाबू राधेश्याम बाबू की कोठी से निकले थे।

जयसुन्दर बाबू ने जब अपना दफ्तर खोला, तभी उनको टाइपिस्ट की जरूरत पड़ी। उस समय चिट्ठी-पत्री लिखने का काम बहुत बढ़ गया था। अकेले उनसे यह सब काम नहीं हो पाता था। शुरू में जब वे गमछा या धोती-साड़ी बेचा करते थे, तब सारा काम अकेले संभाल लेते थे।

लेकिन बाद में जयसुन्दर बाबू ने आर्डर सप्लाई का नया काम शुरू किया। यह काम शुरू करने पर उनको दस जगह दौड़ना पड़ता था। वह भी कलकत्ते के अन्दर नहीं, बाहर भी जाना होता था। आज दिल्ली तो कल भुवनेश्वर, परसों बम्बई तो फिर उसके बाद मद्रास जाना पड़ता था।

किसी को विलायती कामनर की जरूरत पड़ती थी तो किसी को पुराने ट्रान्स-फार्मर की। वह सब माल किसके पास है, यह सब जयसुन्दर बाबू को ही देखना पड़ता था। फिर हरेक का स्पेसिफिकेशन ले कर उसके पास दौड़ना पड़ता था, जो उसको खरीदना चाहता था। इस काम में भाग-दौड़ के अलावा बराबर पत्रव्यवहार करना पड़ता था।

आर्डर सप्लाई का काम बड़े झमेले का था। शादी तय कराने में जिस तरह लड़के वाले और लड़की वाले दोनों को राजी करना पड़ता है, उसी तरह आर्डर सप्लाई के काम में खरीदार और विक्रेता दोनों से बराबर निपटना पड़ता है। इसलिए जयसुन्दर बाबू को एक मिनट दफ्तर में बैठ कर काम करने का मौका नहीं मिलता था। इसलिए उस समय उनको एक ऐसे आदमी की जरूरत थी, टाइप करने के अलावा चिट्ठीपत्री भी लिख सके और बाहर से टेलीफोन आने

जिम्मेदारी के साथ बात भी कर ले।

जयसुन्दर बाबू को जब ऐसे आदमी की जरूरत थी, तभी वह कमला आयी थी। उस दिन जयसुन्दर बाबू अपने दफ्तर में बैठे हुए थे। तभी वहाँ गोल-मटोल चेहरे वाली वह लड़की पहुँची थी।

जयसुन्दर बाबू ने उस लड़की की तरफ देख कर पूछा था—क्या चाहती हो?

—आपके यहाँ कोई नौकरी मिलेगी?

उस नवयुवती की बात सुन कर जयसुन्दर बाबू को बड़ा आश्चर्य हुआ था। उन्होंने पूछा था—आप कहाँ से आ रही हैं?

—टालीगंज से।

—टालीगंज? टालीगंज में कहाँ से?

उस नवयुवती ने कहा था—आप वह जगह नहीं पहचान पायेंगे। टालीगंज को पीछे छोड़ कर काफी दूर जाना पड़ता है। वहाँ शरणार्थियों की एक कालोनी है। मैं वहीं रहती हूँ।

—लेकिन आपको यह कैसे पता चला कि मेरे यहाँ नौकरी मिलेगी?

इस पर उस लड़की ने कहा—मैं कई महीने से नौकरी की तलाश कर रही हूँ। इसके लिए मुझे विभिन्न दफ्तरों का चक्कर लगाना पड़ता है। इसी तरह किसी ने मुझसे कहा कि आपके यहाँ कोई जगह खाली है।

—आपका क्वालिफिकेशन?

वह लड़की बोली—ढाका में रहते समय क्लास टेन तक पढ़ी थी। उसके बाद पिता जी चल बसे और फिर देश का बँटवारा हुआ। हमें सब कुछ छोड़ कर हिन्दुस्तान आना पड़ा। उसके बाद बहुत दिन तक माँ दूसरों के घर काम करती रहीं। इस तरह हमारा खर्च चलता रहा। फिर मैंने टाइपराइटिंग सीख ली।

—टाइपराइटिंग जानती हो? तब तो बड़ा अच्छा हुआ।

—जी हाँ, काम चलाऊ टाइपराइटिंग जानती हूँ।

जयसुन्दर बाबू ने कहा—ठीक है। पहले मैं टाइपराइटिंग मशीन खरीद लूँ, उसके बाद तुम्हें बुला लूँगा। तुम मुझे अपना पता दे दो।

कमला ने एक कागज पर अपना नाम-पता लिख दिया था।

फिर दो दिन बाद जयसुन्दर बाबू ने सस्ते में एक पुरानी टाइपराइटिंग मशीन खरीद ली। बहुत दिनों से यह मशीन खरीदने की इच्छा थी, लेकिन टाइपिस्ट न होने से उन्होंने मशीन नहीं खरीदी थी। लेकिन बाहर से चिट्ठियां टाइप कराने में समय बहुत बरबाद हो रहा था। पैसा भी ज्यादा देना पड़ रहा था। मशीन खरीदने के बाद जयसुन्दर बाबू ने कमला को आने के लिए पत्र लिख दिया।

पत्र पा कर कमला आ गयी।

जयसुन्दर बाबू ने कमला से पूछा—इस मशीन पर काम कर सोगी न ?

कमला ने कहा—कोई काम दीजिए। टाइप करके देखूँ।

एक पत्र देते हुए जयसुन्दर बाबू ने कहा—लो, इसी को टाइप करो।

कमला ने फटाफट वह पत्र टाइप कर दिया।

जयसुन्दर बाबू ने टाइप किये हुए पत्र को अच्छी तरह देखा।

फिर कहा—इसी से मेरा काम चल जायेगा। लेकिन कितनी तनख्वाह मिलने पर तुम अपना काम चला सकोगी ?

कमला बोली—इस समय हम परेशानी में हैं। इसलिए आप जो कुछ देंगे, मैं खुशी से लूँगी।

खैर, इसी तरह कमला उस दिन जयसुन्दर बाबू के यहाँ टाइपिस्ट के रूप में आयी थी। लेकिन किसका भाग्य अच्छा था, कहा नहीं जा सकता। शायद कमला का ही भाग्य अच्छा था और उसी के भाग्य से जयसुन्दर बाबू पर लक्ष्मी की कृपा-दृष्टि हुई। जयसुन्दर बाबू का कारोबार दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करता गया। फिर तो वह कंकड़-पत्थर भी हाथ में लेने लगे तो वह सोना बनने लगा।

जयसुन्दर बाबू कमला पर अपने कार्यालय का भार सौंप कर बाहर निकलते थे। कार्यालय की चिन्ता नहीं करनी पड़ती थी। इससे उनका बाहर का काम ढंग से होने लगा। कार्यालय का सारा काम कमला संभालती थी। जयसुन्दर बाबू बाहर ही बाहर रहते थे। प्रायः उनको कलकत्ते के बाहर जाना पड़ता था।

दूसरे शहर का काम निपटा कर जयसुन्दर बाबू जब कलकत्ते लौटते थे, तब देखते थे कि कमला ने सिर्फ टाइप का काम नहीं, बल्कि बहुत से अन्य काम भी पूरे कर लिये हैं।

मनी-आर्डर से जो रुपया आता था, कमला उसके एक-एक पैसे का हिसाब रखती थी।

अनेक बार ऐसा हुआ कि कमला घर नहीं लौट सकी। जयसुन्दर बाबू के कार्यालय में कई कमरे थे। कमला वहीं सो जाती थी और होटल से खाना खा लेती थी।

काम में कमला की लगन देख कर जयसुन्दर बाबू को बड़ा आश्चर्य होता था।

वह पूछते थे—तुम घर नहीं गयी ?

कमला कहती थी—बताइए, कैसे जाती ? दफ्तर में बहुत रुपये रखे थे। यह सब किसके जिम्मे रख कर घर जाती ?

—क्यों ? जो पहरेदार यहाँ मुहल्ले में पहरा देता है, उससे कह कर सकती थी।

जिम्मेदारी के साथ बात भी कर ले।

जयसुन्दर बाबू को जब ऐसे आदमी की जरूरत थी, तभी वह कमला आयी थी। उस दिन जयसुन्दर बाबू अपने दफ्तर में बैठे हुए थे। तभी वहाँ गोल-मटोल चेहरे वाली वह लड़की पहुँची थी।

जयसुन्दर बाबू ने उस लड़की की तरफ देख कर पूछा था—क्या चाहती हो?

—आपके यहाँ कोई नौकरी मिलेगी?

उस नवयुवती की बात सुन कर जयसुन्दर बाबू को बड़ा आश्चर्य हुआ था। उन्होंने पूछा था—आप कहाँ से आ रही हैं?

—टालीगंज से।

—टालीगंज? टालीगंज में कहाँ से?

उस नवयुवती ने कहा था—आप वह जगह नहीं पहचान पायेंगे। टालीगंज को पीछे छोड़ कर काफी दूर जाना पड़ता है। वहाँ शरणार्थियों की एक कालोनी है। मैं वहीं रहती हूँ।

—लेकिन आपको यह कैसे पता चला कि मेरे यहां नौकरी मिलेगी?

इस पर उस लड़की ने कहा—मैं कई महीने से नौकरी की तलाश कर रही हूँ। इसके लिए मुझे विभिन्न दफ्तरों का चक्कर लगाना पड़ता है। इसी तरह किसी ने मुझसे कहा कि आपके यहाँ कोई जगह खाली है।

—आपका क्वालिफिकेशन?

वह लड़की बोली—ढाका में रहते समय क्लास टेन तक पढ़ी थी। उसके बाद पिता जी चल बसे और फिर देश का बँटवारा हुआ। हमें सब कुछ छोड़ कर हिन्दुस्तान आना पड़ा। उसके बाद बहुत दिन तक माँ दूसरों के घर काम करती रहीं। इस तरह हमारा खर्च चलता रहा। फिर मैंने टाइपराइटिंग सीख ली।

—टाइपराइटिंग जानती हो? तब तो बड़ा अच्छा हुआ।

—जी हाँ, काम चलाऊ टाइपराइटिंग जानती हूँ।

जयसुन्दर बाबू ने कहा—ठीक है। पहले मैं टाइपराइटिंग मशीन खरीद लूँ, उसके बाद तुम्हें बुला लूँगा। तुम मुझे अपना पता दे दो।

कमला ने एक कागज पर अपना नाम-पता लिख दिया था।

फिर दो दिन बाद जयसुन्दर बाबू ने सस्ते में एक पुरानी टाइपराइटिंग मशीन खरीद ली। बहुत दिनों से यह मशीन खरीदने की इच्छा थी, लेकिन टाइपिस्ट न होने से उन्होंने मशीन नहीं खरीदी थी। लेकिन बाहर से चिट्ठियाँ टाइप कराने में समय बहुत बरबाद हो रहा था। पैसा भी ज्यादा देना पड़ रहा था। मशीन खरीदने के बाद जयसुन्दर बाबू ने कमला को आने के लिए पत्र लिख दिया।

पत्र पा कर कमला आ गयी।

जयसुन्दर बाबू ने कमला से पूछा—इस मशीन पर काम कर लोगी न ?

कमला ने कहा—कोई काम दीजिए। टाइप करके देखूं।

एक पत्र देते हुए जयसुन्दर बाबू ने कहा—लो, इसी को टाइप करो।

कमला ने फटाफट वह पत्र टाइप कर दिया।

जयसुन्दर बाबू ने टाइप किये हुए पत्र को अच्छी तरह देखा।

फिर कहा—इसी से मेरा काम चल जायेगा। लेकिन कितनी तनखाह मिलने पर तुम अपना काम चला सकोगी ?

कमला बोली—इस समय हम परेशानी में हैं। इसलिए आप जो कुछ देंगे, मैं खुशी से लूंगी।

खैर, इसी तरह कमला उस दिन जयसुन्दर बाबू के यहाँ टाइपिस्ट के रूप में आयी थी। लेकिन किसका भाग्य अच्छा था, कहा नहीं जा सकता। शायद कमला का ही भाग्य अच्छा था और उसी के भाग्य से जयसुन्दर बाबू पर लक्ष्मी की कृपा-दृष्टि हुई। जयसुन्दर बाबू का कारोबार दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करता गया। फिर तो वह कंकड़-पत्थर भी हाथ में लेने लगे तो वह सोना बनने लगा।

जयसुन्दर बाबू कमला पर अपने कार्यालय का भार सौंप कर बाहर निकलते थे। कार्यालय की चिन्ता नहीं करनी पड़ती थी। इससे उनका बाहर का काम ढंग से होने लगा। कार्यालय का सारा काम कमला संभालती थी। जयसुन्दर बाबू बाहर ही बाहर रहते थे। प्रायः उनको कलकत्ते के बाहर जाना पड़ता था।

दूसरे शहर का काम निपटा कर जयसुन्दर बाबू जब कलकत्ते लौटते थे, तब देखते थे कि कमला ने सिर्फ टाइप का काम नहीं, बल्कि बहुत से अन्य काम भी पूरे कर लिये हैं।

मनी-आर्डर से जो रुपया आता था, कमला उसके एक-एक पैसे का हिसाब रखती थी।

अनेक बार ऐसा हुआ कि कमला घर नहीं लौट सकी। जयसुन्दर बाबू के कार्यालय में कई कमरे थे। कमला वहीं सो जाती थी और होटल से खाना खा लेती थी।

काम में कमला की लगन देख कर जयसुन्दर बाबू को बड़ा आश्चर्य होता था।

वह पूछते थे—तुम घर नहीं गयी ?

कमला कहती थी—बताइए, कैसे जाती ? दफ्तर में बहुत रुपये रखे थे। वह सब किसके जिम्मे रख कर घर जाती ?

—क्यों ? जो पहरेदार यहाँ मुहल्ले में पहरा देता है, उससे कह कर जा सकती थी।

—लेकिन रुपया ? उतना रुपया मैं किसके जिम्मे करती ?

—क्यों ? तुम अपने साथ रुपया ले जाती ?

—कार्यालय का रुपया घर क्यों ले जाऊंगी ?

—लेकिन घर में तुम्हारी माँ घबड़ा रही होंगी।

कमला कहती थी—मां को बता कर आयी हूं। मैं जानती थी कि आपके लौटने में दो-एक दिन की देर होगी।

जयसुन्दर बाबू कहते थे—क्या बताऊं, उन लोगों ने आने नहीं दिया। पहले तो यही तय था कि मैं तीन दिन पहले कलकत्ते लौट आऊंगा। मुझे क्या पता था कि उन लोगों की वजह से इतनी देर हो जायेगी ?

उसके बाद जयसुन्दर बाबू खेद प्रकट करते थे।

कहते थे—समझ नहीं पा रहा हूं कि इस तरह कितने दिन चलेगा ?

जयसुन्दर बाबू कहने को तो ऐसा कहते थे, लेकिन जब भी वह बाहर जाते थे, उनके लौटने में देर होती थी। फिर जब भी ऐसा होता था, कमला अपने घर नहीं लौट पाती थी।

एक दिन फिर जयसुन्दर बाबू ने कहा—समझ नहीं पाता कि इस तरह कितने दिन चलेगा ?

कमला ने पूछा—क्या आपके घर में कोई नहीं है ?

जयसुन्दर बाबू बोले—अपना कहने के लिए मेरा इस दुनिया में कोई नहीं है।

कमला समझ न पायी कि क्या जवाब देगी।

फिर जरा रुक कर बोली—आप शादी कर लीजिए न। आपके मकान में कितने कमरे खाली पड़े हैं।

जयसुन्दर बाबू ने कहा—किससे शादी करूं ? कौन मुझे अपनी लड़की देगा ? इस दुनिया में मेरा कोई नाम लेने वाला हो, तब तो ?

उसके बाद उन्होंने न जाने क्या सोच कर कहा—क्या तुम भी करना चाहोगी ?

—मैं ?

जयसुन्दर बाबू ने कहा—हां-हां, तुम। मैं तुम्हारी बात कर रहा हूं। क्या मेरी बात सुन कर तुम्हें आश्चर्य हो रहा है ? लेकिन यह समझ लो कि मैं तुमसे मजाक नहीं कर रहा हूं।

अपनी धुन में इतना कह लेने के बाद जयसुन्दर बाबू की निगाह कमला पर पड़ी तो उन्होंने देखा कि कमला ने आंखें झुका ली हैं। उसकी आंखों से आंसू बह रहे हैं।

फिर उस दिन जयसुन्दर बाबू ने देर नहीं की थी। वह कमला को साथ लिये सीधे उसकी माँ से उनके टालीगंज वाले मकान में जा कर मिले थे। उसके पहले जयसुन्दर बाबू कभी उधर नहीं गये थे। उन दिनों उस इलाके में घनी बस्ती नहीं थी। जहाँ-तहाँ लोग बसे थे, लेकिन अधिकतर जमीन खाली पड़ी थी और उसमें झाड़-झंखाड़ उग आये थे।

कमला के विवाह का प्रस्ताव सुन कर पहले तो उसकी माँ विश्वास न कर सकी थी। उसकी भी बेटी की शादी होगी और उस बेटी का अपना घर होगा, इसकी मानो उन्होंने कभी कल्पना भी नहीं की थी।

जयसुन्दर बाबू को उन दिनों की बातें अच्छी तरह याद थीं। लेकिन कैसे क्या हो गया था, यह सब सोचने पर उनको लगता था कि मानो वह सपना देख रहे हैं।

मनुष्य के मन में जब आवेग आता है तब वह सोचने-समझने की शक्ति मानो खो देता है। जयसुन्दर बाबू का भी यही हाल हुआ था। उस समय उनको लगा था कि यह आवेग नहीं, अनुराग है। उन्होंने आवेग को अनुराग समझने की गलती की थी और उसी गलती का खमियाजा उनको बाद में जिन्दगी भर भुगतना पड़ा था।

बाद में जयसुन्दर बाबू महसूस करने लगे थे कि उन्होंने शुरू में कमला को पहचानने में गलती की थी।

जयसुन्दर बाबू के पास कमला पत्नी के रूप में आयी तो उसने पहले ही जयसुन्दर बाबू को जता दिया कि सिर्फ मुझको अपने पास रखने से काम न चलेगा, मेरी माँ को भी मेरे साथ रखना होगा। नहीं तो मेरी माँ कहाँ रहेगी? कौन उनकी देख-भाल करेगा?

आवेग के कारण जयसुन्दर बाबू को पहले इस बात का ध्यान नहीं आया था। लेकिन कमला के लिए ऐसी माँग करना केवल स्वाभाविक ही नहीं, तर्कसंगत भी था।

फिर दो-चार दिन बाद ही जयसुन्दर बाबू समझ गये कि कमला और उसकी माँ से उनका क्या संबंध है। जयसुन्दर बाबू ने पहले उस संबंध के बारे में उतनी गंभीरता से नहीं सोचा था।

कमला की माँ, यानी जयसुन्दर बाबू की सास ने जयसुन्दर बाबू से कहा—बेटा, कमला तुम्हारे घर में बहू बन कर आयी है। क्या अब भी वह तुम्हारे दफ्तर में काम करेगी?

यह सवाल सुन कर जयसुन्दर बाबू थोड़ा असमंजस में पड़ गये थे। उन्होंने बाद में कमला से पूछा था—क्या तुमने माँ से कुछ कहा था?

यह सुन कर कमला ने पलट कर पूछा—कैसे? मैंने क्या कहा है?

—तुम्हारी माँ कह रही थीं कि तुम इस घर में बहू बन कर आयी हो, इस-लिए तुम पहले की तरह काम करना नहीं चाहती।

कमला ने कहा था—आप झूठ कह रहे हैं। माँ कभी ऐसी बात नहीं कह सकतीं।

यह उत्तर सुन कर जयसुन्दर बाबू को बहुत बुरा लगा था।

जयसुन्दर बाबू ने कहा था—फिर क्या मैं झूठ कह रहा हूँ? अगर तुम मेरे दफ्तर में मेरे साथ काम नहीं करना चाहती तो मुझसे कह सकती थी। माँ से क्यों कहने गयी?

यह शादी के एकदम बाद की बात थी। उन दिनों जयसुन्दर बाबू का व्यापार तरक्की पर था। इसलिए उनका काम बहुत बढ़ गया था। कमला से उनके संबंध में कटुता भी उसी अनुपात में बढ़ती गयी थी।

ठीक उसी समय निशिकान्त आया था। वही निशिकान्त दास।



उन दिनों जयसुन्दर बाबू की आर्थिक स्थिति में तेजी से सुधार होने लगा था। चारों तरफ से उनको आर्डर मिलने लगा था। कार्यालय का काम सँभालने के लिए उन्होंने कई लोगों को रख लिया था। कमला की जगह पुरुष टाइपिस्ट भी रखा गया था। दो क्लर्क भी रखे गये थे। पहले की तरह जयसुन्दर बाबू को बाहर घूमना नहीं पड़ता था। कमला भी अपने घर के काम में व्यस्त रहने लगी थी।

फिर भी जयसुन्दर बाबू अपना काम निपटा कर जब घर में जाते थे, रात काफी हो जाती थी।

घर में जाते ही जयसुन्दर बाबू कमला को आवाज देते थे—अरी, कहाँ गयी तुम?

आवाज सुन कर कमला आती थी। कहती थी—क्या हो गया है? क्यों बुला रहे हैं?

जयसुन्दर बाबू कहते थे—फिर कल एक पार्टी देनी पड़ेगी।

कमला कहती थी—पार्टी? फिर किसको डुबायेंगे?

इस पर जयसुन्दर बाबू कहते थे—क्या कहती हो? क्या किसी को डुबाने के लिए मैं पार्टी देता हूँ?

—डुबाना नहीं तो और क्या है ? आप जिसको भी पार्टी देते हैं, उसी को डुबाते हैं।

जयसुन्दर बाबू कहते थे—तुम तो बस इसी एक बात की रट लगाती रहती हो ! मैं तो अपने कारोबार के लिए पार्टी देता हूँ। फिर उस पार्टी में जो जैसा खाना-पीना चाहता है, उसी को वैसा खिलाता-पिलाता हूँ।

—क्या हर आदमी आपसे शराब पीना चाहता है ? आप ही तो अपना काम निकालने के लिए सबको शराब पिलाते हैं। इस तरह वे लोग आपकी मुट्ठी में आ जाते हैं और आपको माल का आर्डर देते हैं।

इस पर जयसुन्दर बाबू कहते थे—लेकिन यह काम क्या मैं अकेला करता हूँ ? आजकल तो शराब पिलाये बिना कोई काम नहीं होता। आर्डर भी शराब पिला कर ही मिलता है। यह तो तुम अच्छी तरह जानती हो।

—लेकिन अब मुझसे यह सब पीने के लिए तो नहीं कहेंगे ?

इस पर जयसुन्दर बाबू कहते थे—शिष्टाचार के नाते ऐसा कहना पड़ता है। तुम घर में रह कर भी जरा सी नहीं पियोगी तो लोग क्या कहेंगे ?

इसके उत्तर में कमला कहती थी—मैं आपसे शादी करके इस घर में आयी हूँ। आप मुझसे यह सब काम नहीं करा सकेंगे। अगर आपको यही सब करना है तो बाजार से औरत लाइए और उसी को अपनी पत्नी बना कर यह सब कीजिए।

—लेकिन यह चालाकी किसी ने पकड़ ली तो ?

कमला कहती थी—कैसे कोई पकड़ सकेगा ? उस बाजार औरत की मांग में भी सिंदूर भर दीजिए। अपनी पत्नी कह कर उसी का सबसे परिचय कराइए।

जयसुन्दर बाबू कहते थे—सचमुच तुमसे शादी करके मुश्किल में पड़ गया हूँ।

कमला कहती थी—जी नहीं। इसका उलटा हुआ है। आपके घर में आकर मेरी ही परेशानी बढ़ गयी है।

—फिर तुमने मुझसे क्यों शादी की ?

इस पर कमला कहती थी—जी नहीं। मैंने शादी नहीं की। शादी के लिए कोशिश आपकी तरफ से शुरू हुई थी। बल्कि शुरू में मैंने आपत्ति की थी। इस पर आपने कहा था कि मैं तुम्हारी माँ को तुम्हारे पास रख दूँगा। तभी तो मैं राजी हुई थी। लेकिन उस समय मुझे क्या पता था कि मुझसे शादी करने के पीछे आपका यह अभिप्राय था।

जयसुन्दर बाबू मानो पश्चाताप करते हुए कहते थे—उस समय मैंने सोचा था कि मैं जो कुछ कहूँगा, तुम करोगी।

इस पर कमला कहती थी—आप जो कहते हैं, मैं वही करती हूँ। सिर्फ उस एक काम के लिए आप मुझसे मत कहें। मुझसे यह काम नहीं हो सकेगा।

—लेकिन यह तो बताओ कि मैं क्या करूं ? आजकल यही फैशन हो गया है। कारोबार चलाने के लिए लोगों को शराब पिलानी पड़ती है। जो शराब नहीं पिलाता, उसका कारोबार नहीं चमकता। -

कमला कहती थी—मैंने कब मना किया है कि आप दूसरों को शराब मत पिलायें। बस, मैं नहीं पी सकती।

—लेकिन आजकल का वह नियम नहीं है। नियम है कि पार्टी में पति-पत्नी दोनों को मौजूद रहना पड़ेगा। दोनों को मिल कर अतिथियों का आदर-सत्कार करना पड़ेगा।

—आपका कहना सही है। लेकिन जिसके घर में पत्नी नहीं है, वह क्या करता है ?

—वह अपने कारोबार से अधिक रुपया नहीं कमा सकता। उसका कारोबार धीरे-धीरे चौपट होने लगता है।

इस पर कमला कहती थी—लेकिन आप इतना रुपया ले कर क्या करेंगे ? आपको कितने रुपये की जरूरत पड़ती है ? अब तो आपके पास काफी रुपया हो गया है— फिर आप रुपये के पीछे क्यों हाय-हाय कर रहे हैं ? हमारे तो सिर्फ दो ही लड़के हैं।

जयसुन्दर बाबू कहते थे—रुपये के पीछे हाय-हाय करना क्या कभी खत्म होता है ? रुपया रहने पर ही तो मन में साहस रहता है। मैं रुपया कमाता हूँ, तभी तो तुम आराम से रहती हो। जब भी मन में होता है, गहने खरीदती हो। बच्चे अच्छी तरह पढ़-लिख रहे हैं। रुपया न रहता तो क्या यह सब होता ?

फिर जरा रुक कर जयसुन्दर बाबू कहते थे—रुपया न रहने पर कितनी तकलीफ होती है, यह तो तुम नहीं जानती ! मेरे जीवन में एक ऐसा समय था, जब कभी-कभी मुझे भोजन भी नसीब न होता था। राधेश्याम बाबू की कोठी में पन्द्रह रुपये की नौकरी करता था। उसी पन्द्रह रुपये में महीने भर का खर्च चलाता था। किराये पर कमरा भी न ले सका था और कालीघाट के मन्दिर में रात को पड़ा रहता था। फिर आज जो कुछ हुआ है, उसके पीछे राधेश्याम बाबू की बहुत बड़ी दया है। उन दिनों मैं खाली समय में सड़क पर गमछे की फेरी करता था। उन्हीं दिनों राधेश्याम बाबू ने मुझको बुला कर दो हजार रुपये दिये थे। उसी उधार की रकम से मैंने धोती-साड़ी का काम शुरू किया था। तभी से मुझ पर लक्ष्मी की कृपा होने लगी है। उसी के बाद तुम मेरे यहाँ टाइपिस्ट बनकर आयी।

जयसुन्दर बाबू की आप-बीती सुनकर कमला कहती थी—यह सब तो मैं जानती हूँ।

यह सुन कर जयसुन्दर बाबू कहते थे—हाँ, यह सब तो पहले भी बता चुका

हूँ। लेकिन आज जहाँ तक पहुँच सका हूँ; वहाँ तक पहुँचने के बाद उन पुराने दिनों की बातें बार-बार कहने को मन करता है। तभी तो यह सब तुम्हें सुनाता हूँ।

इस पर कमला कहती थी—लेकिन एक ही बात बार-बार सुनना अच्छा नहीं लगता।

जयसुन्दर बाबू कहते थे—खैर, एक बात तो समझने की कोशिश करो। मेरा रुपया क्या तुम्हारा रुपया नहीं है? आखिर मैं किसके लिए इतना रुपया कमाता हूँ? तुम्हीं लोगों के लिए न? फिर अधिक से अधिक रुपया कमाना क्या बुरा है?

कमला कहती थी—आप अपने लिए रुपया कमाते हैं। आपको रुपया कमाने का नशा लग गया है, इसीलिए आप कमाते हैं! आप हमारे लिए क्या कमाते होंगे?

—हाँ-हाँ, क्यों नहीं? यह सारा रुपया लेकर मैं स्वर्ग जाऊँगा न?

इस पर कमला बिगड़ जाती थी। कहती थी—आप अपनी दलील अपने पास रखें।

इसके बाद जयसुन्दर बाबू वहाँ ज्यादा देर नहीं रुकते थे। वहाँ से जाते समय कमला से कहते थे—तुम अगर मेरी बात न मानो तो तुम्हारे साथ रहने से फायदा? तुम अपनी माँ के साथ अलग रह सकती हो।

फिर भी कमला कहती थी—ठीक तो है। आप हमारे अलग रहने का इन्त-जाम कर दीजिए न?

इस पर जयसुन्दर बाबू कहते थे—तुम दोनों को अलग मकान में रहने की जरूरत नहीं है, मैं ही खुद अलग रहने का इन्तजाम कर लूँगा।

इतना कह कर जयसुन्दर बाबू कमरे से निकल जाते थे।



शुरुआत इसी तरह हुई थी।

इसी तरह एक दिन जयसुन्दर बाबू नन्दन स्ट्रीट वाला मकान छोड़ कर फ्लैट में चले गये थे। फिर नया फ्लैट खरीदने में देर न लगी थी। जयसुन्दर बाबू के पास रुपया था, इसलिए उनको किस बात की चिन्ता थी? अलग फ्लैट में जाने का मतलब था, अलग घर बसाना।

उन्हीं दिनों वह निशिकान्त दास आ पहुँचा था।

—लेकिन यह तो बताओ कि मैं क्या करूँ ? आजकल यही फैशन हो गया है । कारोबार चलाने के लिए लोगों को शराब पिलानी पड़ती है । जो शराब नहीं पिलाता, उसका कारोबार नहीं चमकता ।

कमला कहती थी—मैंने कब मना किया है कि आप दूसरों को शराब मत पिलायें । बस, मैं नहीं पी सकती ।

—लेकिन आजकल का वह नियम नहीं है । नियम है कि पार्टी में पति-पत्नी दोनों को मौजूद रहना पड़ेगा । दोनों को मिल कर अतिथियों का आदर-सत्कार करना पड़ेगा ।

—आपका कहना सही है । लेकिन जिसके घर में पत्नी नहीं है, वह क्या करता है ?

—वह अपने कारोबार से अधिक रुपया नहीं कमा सकता । उसका कारोबार धीरे-धीरे चौपट होने लगता है ।

इस पर कमला कहती थी—लेकिन आप इतना रुपया ले कर क्या करेंगे ? आपको कितने रुपये की जरूरत पड़ती है ? अब तो आपके पास काफी रुपया हो गया है— फिर आप रुपये के पीछे क्यों हाय-हाय कर रहे हैं ? हमारे तो सिर्फ दो ही लड़के है ।

जयसुन्दर बाबू कहते थे—रुपये के पीछे हाय-हाय करना क्या कभी खत्म होता है ? रुपया रहने पर ही तो मन में साहस रहता है । मैं रुपया कमाता हूँ, तभी तो तुम आराम से रहती हो । जब भी मन में होता है, गहने खरीदती हो । बच्चे अच्छी तरह पढ़-लिख रहे हैं । रुपया न रहता तो क्या यह सब होता ?

फिर जरा रुक कर जयसुन्दर बाबू कहते थे—रुपया न रहने पर कितनी तक-लीफ होती है, यह तो तुम नहीं जानती ! मेरे जीवन में एक ऐसा समय था, जब कभी-कभी मुझे भोजन भी नसीब न होता था । राधेश्याम बाबू की कोठी में पन्द्रह पये की नौकरी करता था । उसी पन्द्रह रुपये में महीने भर का खर्च चलाता था । राये पर कमरा भी न ले सका था और कालीघाट के मन्दिर में रात को पड़ा हता था । फिर आज जो कुछ हुआ है, उसके पीछे राधेश्याम बाबू की बहुत बड़ी ा है । उन दिनों मैं खाली समय में सड़क पर गमछे की फेरी करता था । उन्हीं ीं राधेश्याम बाबू ने मुझको बुला कर दो हजार रुपये दिये थे । उसी उधार की न से मैंने धोती-साड़ी का काम शुरू किया था । तभी से मुझ पर लक्ष्मी की होने लगी है । उसी के बाद तुम मेरे यहाँ टाइपिस्ट बनकर आयी ।

जयसुन्दर बाबू की आप-बीती सुनकर कमला कहती थी—यह सब तो मैं ती हूँ ।

यह सुन कर जयसुन्दर बाबू कहते थे—हाँ, यह सब तो पहले भी बता चुका

हूँ। लेकिन आज जहाँ तक पहुँच सका हूँ; वहाँ तक पहुँचने के बाद उन पुराने दिनों की बातें बार-बार कहने को मन करता है। तभी तो यह सब तुम्हें सुनाता हूँ।

इस पर कमला कहती थी—लेकिन एक ही बात बार-बार सुनना अच्छा नहीं लगता।

जयसुन्दर बाबू कहते थे—खैर, एक बात तो समझने की कोशिश करो। मेरा रुपया क्या तुम्हारा रुपया नहीं है? आखिर मैं किसके लिए इतना रुपया कमाता हूँ? तुम्हीं लोगों के लिए न? फिर अधिक से अधिक रुपया कमाना क्या बुरा है?

कमला कहती थी—आप अपने लिए रुपया कमाते हैं। आपको रुपया कमाने का नशा लग गया है, इसीलिए आप कमाते हैं! आप हमारे लिए क्या कमाते होंगे?

—हाँ-हाँ, क्यों नहीं? यह सारा रुपया लेकर मैं स्वर्ग जाऊँगा न?

इस पर कमला बिगड़ जाती थी। कहती थी—आप अपनी दलील अपने पास रखें।

इसके बाद जयसुन्दर बाबू वहाँ ज्यादा देर नहीं रुकते थे। वहाँ से जाते समय कमला से कहते थे—तुम अगर मेरी बात न मानो तो तुम्हारे साथ रहने से फायदा? तुम अपनी माँ के साथ अलग रह सकती हो।

फिर भी कमला कहती थी—ठीक तो है। आप हमारे अलग रहने का इन्तजाम कर दीजिए न?

इस पर जयसुन्दर बाबू कहते थे—तुम दोनों को अलग मकान में रहने की जरूरत नहीं है, मैं ही खुद अलग रहने का इन्तजाम कर लूँगा।

इतना कह कर जयसुन्दर बाबू कमरे से निकल जाते थे।



शुरुआत इसी तरह हुई थी।

इसी तरह एक दिन जयसुन्दर बाबू नन्दन स्ट्रीट वाला मकान छोड़ कर फ्लैट में चले गये थे। फिर नया फ्लैट खरीदने में देर न लगी थी। जयसुन्दर बाबू के पास रुपया था, इसलिए उनको किस बात की चिन्ता थी? अलग फ्लैट में जाने का मतलब था, अन्य घर बसाना।

उन्हीं दिनों वह निशिकान्त दास का पहुँचा था।

जयसुन्दर वावू के दिमाग में हमेशा नया-नया कारोवार शुरू करने की वात आती थी। जब किसी का अच्छा समय आता है, तव वह जो कुछ चाहता है उसे मिल जाता है।

तभी उस निशिकान्त ने आकर जयसुन्दर वावू के सामने एक नया प्रस्ताव रखा।

जयसुन्दर वावू ने पूछा—आपकी तारीफ ?

आगंतुक ने कहा—मुझे निशिकान्त दास कहते हैं।

जयसुन्दर वावू ने कहा—आप अपनी पूरी वात वताइए।

—आपके पास तो हार्डवेयर का भी विजनेस है ? आप हमारी कम्पनी को माल की सप्लाई क्यों नहीं करते ?

जयसुन्दर वावू ने कहा—मौका मिलेगा तो क्यों नहीं करूँगा ? मेरा काम ही तो वही है। कितने का माल देना पड़ेगा ?

—यही समझ लीजिए कि दो लाख रुपये का।

—लेकिन कैसे माल की सप्लाई करनी पड़ेगी ?

—स्टील वैरल का। है आपके पास ? दे सकेंगे उसकी सप्लाई।

जयसुन्दर वावू ने पूछा—टेंडर देना पड़ेगा ?

निशिकान्त ने कहा—वह सब आप मुझ पर छोड़ दें।

—क्यों ? आप मेनिपुलेशन कर सकेंगे ?

—जरूर ! नहीं तो किसलिए कह रहा हूँ ? आपको आर्डर मिल जाय, बस। वाकी जिम्मा मेरा है। हमारे जो चेयरमैन हैं न, मेरे वड़े खास आदमी हैं।

—टेंडर एप्रूव्ड होने के वाद माल सप्लाई करने के लिए कितना समय देंगे ?

—यही समझ लें कि पाँच महीने।

जयसुन्दर वावू मन ही मन वहुत खुश हुए। उन्होंने हाथ वढ़ा कर घंटी वजायी। घंटी वजते ही चपरासी ने आकर सलाम किया।

—हुजूर !

—दो कप काफी लाओ।

काफी आयी। काफी का प्याला होंठों से लगाते हुए जयसुन्दर वावू ने पूछा—आप इस कम्पनी से कैसे जुड़े हुए हैं ?

—मैं इस कम्पनी का चीफ इंस्पेक्टर हूँ।

जयसुन्दर वावू वोले—फिर तो आप सारा माल चेक करने के वाद रिपोर्ट देंगे ?

—जी हां।

—फिर तो माल पास कराने में कोई रिस्क नहीं है ?

—जी नहीं। जरा भी रिस्क नहीं है। उस मामले में आप निशाखातिर रहें। जब तक मैं हूँ, कोई कुछ नहीं कर सकता।

जयसुन्दर बाबू ने पूछा—लेकिन आप लोग तो अखबारों में विज्ञापन देंगे ही?

—नाम के वास्ते वह तो देना ही पड़ेगा। आप उसके लिए परेशान न हों। लेकिन आपको दो काम करने पड़ेंगे।

—कैसे दो काम?

—बताता हूँ। पहला यह कि आपको पार्टी देनी पड़ेगी।

—पार्टी का मतलब? काकटेल पार्टी?

—जी हाँ। हमारे चेयरमैन मिस्टर बनर्जी को उसमें बुलाना पड़ेगा।

—लेकिन वह पार्टी किस बहाने दी जाय?

—अरे, पार्टी देने, यानी खिलाने-पिलाने के लिए बहाने की क्या कमी है? यही समझ लीजिए कि आप लोगों की मैरिज एनिवर्सरी है या और कुछ।

यह सुन कर जयसुन्दर बाबू कुछ गम्भीर हो गये।

निशिकान्त ने यह भांप लिया और कहा—आप अचानक गम्भीर हो गये?

जयसुन्दर बाबू बोले—शादी की सालगिरह मनाने में जरा परेशानी है। वैसे समारोह में मेरी पत्नी को मौजूद रहना पड़ेगा, लेकिन इस समय उनकी तबीयत खराब चल रही है। वे उस पार्टी में शामिल नहीं हो सकेंगी।

—फिर आप बेटे का बर्थ डे मनाइये या वैसा और कुछ कीजिए।

—लेकिन मेरे बेटे दार्जिलिंग में रह कर पढ़ते हैं।

निशिकान्त बोला—फिर आप अपनी कम्पनी की सिलवर जुबली मनाइये। अगर आप पार्टी देना चाहेंगे तो कोई न कोई बहाना मिल जायेगा। खैर, सब बाद में सोचा जायेगा।

फिर जयसुन्दर बाबू ने पूछा—आपकी और शर्त क्या रहेगी?

निशिकान्त बोला—आपका दूसरा काम यह होगा कि मुझको कुछ देंगे।

—आपको क्या देना पड़ेगा?

—देखिए, आपको दो लाख रुपये का आर्डर मिल रहा है। उसमें मेरा भी कोई शेयर बनता है। कम से कम फाइव परसेंट तो मिलना ही चाहिए।

इसी तरह निशिकान्त ने फाइव परसेंट पर शुरू किया था।

जयसुन्दर बाबू को उन दिनों की बातें अच्छी तरह याद थीं। पहला आर्डर मिलने से पहले ही उन्होंने एक बड़े होटल में पार्टी दी थी। इस तरह शुरू में उनका कुछ पैसा खर्च हो गया था। मिस्टर बनर्जी उस कम्पनी के चेयरमैन थे। उन्हीं के हाथ में सब कुछ था। मालिक तो बहुत बड़े उद्योगपति थे। वे बंगाली नहीं थे। सारे भारत में उनका कारोबार फैला हुआ था। वह कभी कलकत्ते में रहते थे, तो

कभी बम्बई में और कभी वशिंगटन में। कलकत्ते में उनका जो बिजनेस था, उसके चेयरमैन थे मिस्टर बनर्जी।

मिस्टर बनर्जी इंगलैंड से बिजनेस मैनेजमेंट पास करके आये थे। बाद में उन्होंने कम्पनी सेक्रेटरीशिप की परीक्षा भी दी थी।

उन्हीं मिस्टर बनर्जी ने उस पार्टी में हँस कर कहा था—आप मुझे ह्विस्की मत दें।

रूपसुन्दर बाबू ने कहा था—आपने तो बस तीन पेग ली है, और एक-दो पेग लीजिए।

मिस्टर बनर्जी ने कहा था—दोपहर में तीन पेग ली है। एक जगह लंच था, इसलिए वहाँ भी पीना पड़ा। इसीलिए अब पीने को मन नहीं कर रहा है।

इस पर निशिकान्त ने कहा था—यह कैसे हो सकता है सर? आप ही के लिए यह पार्टी दी गयी है और आप अगर हाथ समेट कर बैठे रहेंगे तो सारा इंत-जाम बेकार जायेगा। आप ही सर, आज हमारे चीफ हैं!

निशिकान्त की बात सुन कर मिस्टर बनर्जी होंठों में मुस्कराने लगे थे।

—ठीक है, फिर हाफ दीजिए।

सिर्फ एक बार हाफ ले कर मिस्टर बनर्जी को छुटकारा नहीं मिला। वह एक-एक कर कई बार हाफ लेते चले गये।

जब लगभग दस पेग ह्विस्की चढ़ गयी, तब मिस्टर बनर्जी की जबान लड़खड़ाने लगी। उन्होंने मानो हकलाते हुए निशिकान्त से पूछा—टोटल कितने हुए निशि-कान्त?

निशिकान्त ने कहा—अभी क्या टोटल करना है सर, पाँच ही पेग तो हुए।

मिस्टर बनर्जी ने लड़खड़ाती जबान में कहा—सच? तुमने ठीक से गिना है न?

निशिकान्त बोला—सर, आप पी रहे हैं और मैं उसका हिसाब नहीं रखूंगा? आपने क्या निशिकान्त को ऐसा समझ लिया है कि वह आपको दस पेग पिला कर पाँच कहेगा और आपको मुसीबत में डालेगा? फिर तो आपके साथ उसका रहना ही बेकार है।

फिर मिस्टर बनर्जी ने रूपसुन्दर बाबू की तरफ देख कर कहा—जानते हैं मिस्टर बोस, मैं पहले यह सब दारू-वारू नहीं पीता था। लेकिन जिस बार स्टेट्स गया था और वहाँ छः महीने रहना पड़ा था, उसी बार यह आदत पड़ी थी। अकेले में समय नहीं बीतता था तो एक पब में जा कर बैठ जाता था। फिर वहीं ग्लास ले कर बैठने लगा। तब से यह आदत पड़ी है।

इस पर रूपसुन्दर बाबू ने कहा—सर, आपको कम्पनी के लिए बहुत खटना

पड़ता है। इसलिए आप रात-दिन टेन्शन में रहते हैं। आप अगर रोज थोड़ी-सी पी लिया करें तो कोई नुकसान नहीं होगा। दवा को खुराक की तरह लिया करें तो रात को अच्छी नींद भी आयेगी और काम करने की क्षमता भी बढ़ेगी।

फिर अपनी तरफ इशारा करके जयसुन्दर बाबू ने कहा—आप मुझको तो देख रहे हैं। अपनी कम्पनी के लिए मुझे भी बहुत खटना पड़ता है, लेकिन मैं कभी टायर्ड नहीं होता। इसका कारण यही है कि मैं रोज रात को सोने से पहले निश्चित मात्रा में अल्कोहल लेता हूँ।

उसके बाद जरा रुक कर पूछा—और एक आधा दूँ सर?

मिस्टर बनर्जी ने पूछा—कितने बजे?

अपने हाथ में घड़ी बँधी थी, लेकिन मिस्टर बनर्जी को उसका ख्याल नहीं था।

जयसुन्दर बाबू बोले—अभी ज्यादा रात नहीं हुई है सर, दस बजे हैं।

मिस्टर बनर्जी ने कहा—फिर ज्यादा मत दीजिए। बस, आधा काफी है।

इसी तरह उस बार दो लाख रुपये के बैरल की सप्लाई कर जयसुन्दर बाबू ने मोटी रकम कमायी थी।

फिर दूसरे ही दिन निशिकान्त आया। आते ही जयसुन्दर बाबू से पूछा—कहिए, कैसा रहा सर? अब तो मेरी बात पर विश्वास हुआ?

जयसुन्दर बाबू बोले—जी हाँ, आपके चेयरमैन तो बड़े अच्छे आदमी हैं।

—फिर मेरा पावना कब देंगे?

जयसुन्दर बाबू ने कहा—लेकिन अभी क्या? पहले अखबार में एडवर्टाइजमेंट छपे, मेरा टेंडर मंजूर हो और मुझे सप्लाई का ठेका मिले तब तो?

निशिकान्त ने कहा—देखिए सर, मैं आपको एक बात पहले से बता देना चाहता हूँ। मैं जिस तरह मोटी लाश करना जानता हूँ, उसी तरह उसे पचियाना भी। आपने तो शुरू में विश्वास ही नहीं करना चाहा था, लेकिन अब तो देख लिया कि मिस्टर बनर्जी किस तरह मेरी मुट्ठी में हैं!

जयसुन्दर बाबू ने कहा—हाँ। कल तो मिस्टर बनर्जी लगभग बारह पेग पी गये।

निशिकान्त बोला—आपने तो देख लिया कि किस तरह पाँच पेग कह कर उनको बारह पेग ह्विस्की पिला दी।

—लेकिन मिस्टर बनर्जी को घर लौटने में कोई परेशानी तो नहीं हुई?

—परेशानी क्यों होगी? मैं उनको सीधे घर पहुँचा कर ही अपने घर लौटा था। आप क्या समझते हैं कि मैं कोई कच्चा काम करूँगा?

जयसुन्दर बाबू ने कहा—मेरी तरह और भी तो सप्लायर हैं। क्या वे सभी मिस्टर बनर्जी को शराब पिलाते हैं?

—क्यों नहीं पिलायेंगे ? लेकिन बताया न, मैं बीच में रहता हूँ। इसलिए हर कोई आ कर टाँग नहीं अड़ा सकता। मैं इस कम्पनी का चीफ इंस्पेक्टर हूँ। मैं अगर माल पास न करूँ तो चेयरमैन को चाहे कोई कितनी शराब पिलाये, कुछ नहीं कर सकता। इसलिए जिससे कुछ मिलेगा, मैं उसी का माल पास करूँगा।

—क्या वे सब आपको कुछ नहीं देते ?

—क्यों नहीं देते ? लेकिन बहुत कम देते हैं। इसीलिए मैं आपके पास आया हूँ। आप मुझे अच्छी रकम देते रहिए, मैं भी आपको सभी आर्डर दिलाता रहूँगा।

जयसुन्दर बाबू ने पूछा—फिर इस समय आपको कितना देना पड़ेगा ?

निशिकान्त बोला—इस महीने में अभी तक बोहनी ही नहीं हुई। इसलिए कम से कम दो हजार रुपये दीजिए। इसके बाद जब आर्डर मिल जायेगा, तब बाकी रकम दे दीजिएगा।

—लेकिन आर्डर न मिला तो ?

निशिकान्त बोला—जनाब, मैं आदमी पहचानता हूँ। मैं कभी आपको धोखा नहीं दे सकता।

फिर जयसुन्दर बाबू ने अधिक बातचीत में समय न गँवा कर निशिकान्त को पहले ही एक हजार रुपये दे दिये थे।

उस समय इसी तरह झमेला खत्म हुआ था।

लेकिन उसके बाद आश्चर्य हो गया था। जयसुन्दर बाबू को उतनी उम्मीद भी नहीं थी। लेकिन जब उनको दो लाख रुपये के बैरल का आर्डर मिला था, तब बड़ा आश्चर्य हुआ था। फिर उसके लिए निशिकान्त को दस हजार रुपये देने पड़े थे। जयसुन्दर बाबू को उस सप्लाई में पचास हजार रुपये का फायदा हुआ था।



उस बार भी जयसुन्दर बाबू नन्दन स्ट्रीट वाले मकान में जाकर कमला से मिले थे।

गिरि ने आकर दरवाजा खोला तो जयसुन्दर बाबू ने पूछा—तुम्हारी माता जी कहाँ हैं ?

—माता जी पूजा कर रही हैं।

गिरि ने क्या जवाब दिया, पूरा सुने बिना ही जयसुन्दर बाबू अन्दर चले गये। लेकिन कमला उस समय पूजा कर रही थी। कब उसकी पूजा समाप्त होगी, कोई ठिकाना नहीं था।

घंटे भर बैठे रहने के बाद जयसुन्दर बाबू लौटने लगे थे। कमला के लिए जैसे पूजा थी, वैसे उनके लिए उनका अपना काम था। हाथ पर हाथ धरे बैठे रहना उनके लिए सम्भव नहीं था।

लेकिन तभी अचानक कमला कमरे में आयी। आते ही उसने पूछा—आप कब आये ?

जयसुन्दर बाबू बोले—काफी देर हो गयी है। एक घंटा हो गया होगा।

—क्या कोई खास बात है ?

—खास बात न रहने पर क्या नहीं आना चाहिए ?

कमला बोली—आप ही ने मुझे अलग कर दिया है ! अलग कर देने पर फिर कौन सी बात रह सकती है ?

—मैंने तुम्हें अलग किया है, या तुमने मुझे अलग फ्लैट में रहने के लिए मजबूर कर दिया है ?

कमला ने कहा—वह तो आपने मुझे यहाँ छोड़कर अलग रहने के लिए अलग फ्लैट खरीद लिया ? मैंने तो आपसे अलग रहने के लिए नहीं कहा था ? यह मकान भी आपका है और इस घर का खर्च भी आपके पैसे से चल रहा है। मैं तो इसमें कुछ भी नहीं हूँ।

जयसुन्दर बाबू बोले—तुम अगर रात-दिन पूजा पाठ ले कर रहोगी तो कौन मुझे देखेगा ?

कमला बोली—यह जो मैं पूजा करती हूँ, यह क्या अपने लिए ? आप सबके भले के लिए मैं पूजा करती हूँ।

जयसुन्दर बाबू बोले—अगर तुम मेरा भला चाहती तो मेरी बात सुनती।

कमला बोली—यह तो बताइए कि मैंने आपकी कौन सी बात नहीं सुनी ?

जयसुन्दर बाबू बोले—यह जो मैं काकटेल पार्टी देता हूँ, उसमें कभी तुम शामिल हुई हो ?

कमला बोली—पहले तो शामिल होती थी, लेकिन आप मुझसे भी पीने के लिए कहते थे। मैंने आपसे बार-बार कहा था कि मुझसे यह सब पीने के लिए मत कहिए, लेकिन आपने कभी मेरी बात नहीं मानी।

जयसुन्दर बाबू बोले—वह सब पीना क्या इतना बुरा है ? अगर बुरा होता तो सरकार उन शराबों का कारोबार ही क्यों किसी को करने देती ? अभी कई दिन पहले की बात याद करो न। मैंने कितनी बार तुमसे कहा कि मेरी पार्टी में चलो, लेकिन तुम नहीं गयी।

कमला बोली—मैंने तो आपसे कह दिया था कि मैं वैसी पार्टी में नहीं जाऊँगी। हमेशा से मैं यही कहती आयी हूँ।

जयसुन्दर बाबू ने कहा—इसीलिए तो मुझे फ्लैट किराये पर लेना पड़ा, ताकि अब से मैं अपने फ्लैट में पार्टी दे सकूँ।

—क्या इस बार फ्लैट में पार्टी दी थी ?

—नहीं, होटल में दी थी। बहुत बड़े फाइवस्टार होटल में यह पार्टी हुई थी। लिए बहुत पैसा फालतू खर्च हुआ। लेकिन कोई बात नहीं, फायदा भी काफी ा है। सारा खर्च निकालने के बाद भी लगभग पचास हजार रुपये मिले हैं।

कमला ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया।

इस पर जयसुन्दर बाबू ने कहा—अरे, तुम तो कुछ बोल नहीं रही हो ?

—बताइए, क्या बोलूं ?

—तुम क्या बोलोगी, यह भी मुझे बताना पड़ेगा ? क्या यह सुन कर तुम्हें खुशी नहीं हुई कि मैंने पचास हजार का फायदा किया है ?

कमला बोली—वह तो आपका रुपया है। दूसरों को शराब पिला कर आपने वह रुपया कमाया है। उससे मेरा क्या ?

—मेरा रुपया क्या तुम्हारा नहीं है ?

कमला ने कहा—आप बार-बार रुपये की बात मत करें। आप स्वस्थ रहें, सकुशल रहें, शांति से रहें। आपके बच्चे भी उसी तरह रहें। मैं हर समय भगवान से यही प्रार्थना करती हूँ।

—लेकिन सुख-शांति के लिए तो रुपये की जरूरत है !

कमला बोली—क्या मैंने कभी यह इनकार किया है ?

—अगर तुमने इनकार नहीं किया, तो पार्टी में क्यों नहीं गयी ?

कमला ने कहा—कहने पर तो आप विश्वास नहीं करेंगे, फिर भी कह रही हूँ कि मेरा भगवान वह पसंद नहीं करता।

जयसुन्दर बाबू ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया।

वह कुर्सी पर बैठे थे—खड़े हो गये। बोले—तुमसे कोई बात करना भी जहमत है। हर बात में बस भगवान और भगवान। अब तुम अपने भगवान को लेकर पड़ी रहो, मैं चला। अगर तुम अपने भगवान को लेकर ही पड़ी रहना चाहती हो तो रहो, लेकिन मुझको भूलना पड़ेगा।

यह कह कर जयसुन्दर बाबू उसी तरह वहाँ से चले, जिस तरह आये थे।



उसी के बाद से जयसुन्दर बाबू ने नन्दन स्ट्रीट जाना बन्द कर दिया था। उन्होंने तय कर लिया था कि अब कभी कमला के पास नहीं जाऊँगा। कमला से

कोई सम्बन्ध भी नहीं रखूँगा। बस, हर महीने कमला के पास रुपया भेज कर अपना कर्तव्य पूरा करूँगा। सिर्फ एक पति का कर्तव्य नहीं, बल्कि एक पिता का कर्तव्य भी नियम से पूरा करता जाऊँगा।

जयसुन्दर बाबू ने अपने बड़े बेटे का नाम रखा था—अजय।

छोटे बेटे का नाम रखा था—विजय।

दोनों लड़के साल-डेढ़ साल छोटे-बड़े थे।

शुरु-शुरु में जयसुन्दर बाबू कमला और इन दो बेटों के साथ बड़े आराम से रहने लगे थे। पति-पत्नी और दो बेटे! किसी का इससे सुखी परिवार और हो सकता था?

उन दिनों जयसुन्दर बाबू भी बहुत रुपया कमाने लगे थे। मानो रुपये की वर्षा होने लगी थी। कमला का मिजाज भी उतना चिड़चिड़ा नहीं था। हर वक्त उसके चेहरे पर हँसी रहती थी।

कमला कहती थी—मैं अजय को डाक्टरी पढ़ाऊँगी और विजय को इंजीनियरिंग।

जयसुन्दर बाबू कहते थे—क्या मेरे व्यवसाय में उनको आने नहीं दोगी? जब मैं बूढ़ा हो जाऊँगा, तब वे दोनों मेरे व्यवसाय की देखभाल नहीं करेंगे तो कौन करेगा?

कमला कहती थी—वह आप समझेंगे! लेकिन मैं अपने बेटों को आपके व्यवसाय में किसी तरह जाने नहीं दूँगी।

—लेकिन मेरे व्यवसाय में कौन-सी कमी है?

कमला कहती थी—आपके व्यवसाय में जितने फरेबियों और मक्कारों से साबिका पड़ता है, उतना किसी और काम में नहीं। वैसे लोगों की संगत में रहने पर मेरे बेटे बिगड़ जायेंगे!

—क्या हमेशा फरेबियों और मक्कारों से मेरा साबका होता रहता है?

—और नहीं तो क्या? सिर्फ फरेबी और मक्कार नहीं, जितने सारे शराबियों और कबाबियों के बीच आपको उठना-बैठना पड़ता है। वैसे लोगों का साथ करने पर क्या मेरे लड़के बिगड़ नहीं जायेंगे?

जयसुन्दर बाबू कहते थे—फिर क्या तुम मुझको भी उसी तरह का समझती हो?

—और नहीं तो क्या? आप क्या समझते हैं कि मैं आपको बहुत भला समझती हूँ?

जयसुन्दर बाबू फिर भी कमला की बात को हलके ढंग से लेते थे और कहते थे—क्यों लड़कों के सामने मुझे इस तरह गाली दे रही हो?

कमला कहती थी—मैंने कोई गाली नहीं दी। आप जो कुछ हैं, वही बता रही हूँ। इस समय ये लड़के छोटे हैं, इसलिए कुछ नहीं समझते। लेकिन जब ये बड़े होंगे, सब कुछ समझ जायेंगे। उस समय आप उनको क्या जवाब देंगे ? स्कूल में उनको जो कुछ पढ़ाया जायेगा, वे पढ़ेंगे। अच्छी-अच्छी बातें पढ़ेंगे और सीखेंगे। लेकिन बड़े होकर, समझदार होकर देखेंगे कि जो कुछ पढ़ा है और सीखा है, आप उसके विपरीत हैं।

यह सुन कर जयसुन्दर बाबू कमला की बातों को गम्भीरता से लेते थे और कहते थे—स्कूल में जो कुछ पढ़ेंगे वह तो पढ़ेंगे ही, लेकिन तुमसे जो कुछ पढ़ेंगे उसी को ज्यादा सीखेंगे। तुम्हारी ही बातों पर अधिक विश्वास करेंगे !

इस पर कमला कहती थी—इसीलिए तो कहती हूँ कि आप उन बच्चों को कहीं बाहर किसी स्कूल में भरती कर दीजिए। दार्जिलिंग में भी बढ़िया स्कूल है और देहरादून में भी। वहाँ रहने पर आपके बारे में उनकी धारणा बदल जायेगी।

फिर उसी के बाद जयसुन्दर बाबू अजय और विजय को दार्जिलिंग के बोर्डिंग स्कूल में भरती कर आये थे। तभी से वे बच्चे माँ-बाप से दूर रहने लगे थे। बीच-बीच में कमला जा कर उनको देख आती थी। इसमें खर्च तो अधिक होता था, लेकिन उसकी कोई चिन्ता नहीं थी। जयसुन्दर बाबू उन दिनों धुआंधार धन कमाने लगे थे। इसलिए उस समय उनके लिए कलकत्ते के बाहर जाना सम्भव नहीं था। जाने पर उन्हीं का नुकसान होता। लेकिन फायदा यही हुआ कि वह अपने बेटों से दूर होते गये।

यह सब जयसुन्दर बाबू के प्रारम्भिक जीवन की बातें हैं।

उन दिनों जयसुन्दर बाबू के जीवन में सफलता की शुरुआत थी। व्यवसाय से अच्छी आमदनी भी होने लगी थी। ज्यों-ज्यों उनकी आय बढ़ती जा रही थी, अधिक से अधिक रुपया कमाने का नशा भी बढ़ता जा रहा था। रुपया कमाने की जो भी तरकीब जो बताता था, जयसुन्दर बाबू वही करते थे। अगर कोई कहता था कि शराब पीने पर रुपया मिलेगा, तो वह शराब पीने लगते थे। अगर कोई कहता था कि पैंट-कोट पहन कर साहब बन जाने पर आमदनी बढ़ेगी तो वह वही करते थे। कलकत्ते के न्यू मार्केट में जा कर नयी-नयी साहबी पोशाक का आर्डर देते थे। यानी, जब जैसी जरूरत पड़ती थी, जयसुन्दर बाबू वैसा करते थे।

कभी किसी कांग्रेसी से काम पड़ता था तो जयसुन्दर बाबू अपना उल्लू सीधा करने के लिए वहाँ खद्दर पहन कर ही जाते थे। केवल शुरू-शुरू में नहीं, वह जिन्दगी भर यही करते थे। उनका हर काम रुपये से जुड़ा हुआ था। उन्होंने सोचा था कि पूरी जिन्दगी इसी तरह कट जायेगी। लेकिन ऐसा नहीं हुआ।

बुढ़ापे में पहुँच कर जयसुन्दर बाबू को अचानक बाधा मिली। यह अचानक बाधा निशिकान्त की तरफ से आयी। निशिकान्त ही उनके लिए परेशानी का कारण बन गया। लेकिन वह निशिकान्त से हार मानने को तैयार नहीं थे। शुरू से अनवरत संघर्ष कर उन्होंने धन-दौलत और इज्जत-आबरू आदि जो कुछ कमाया था, उसे जीवन के अंतिम दिनों में एक अदना निशिकान्त चौपट कर दे, यह उनके लिए बरदाश्त के बाहर की बात थी। निशिकान्त में ऐसी हिम्मत कैसे हो सकती थी कि उनकी प्रतिष्ठा के स्वर्ग-शिखर से उठा कर नीचे नरक की गन्दगी में पटक दे!

इसलिए जयसुन्दर बाबू ने सोचा था कि कमला को जा कर सब कुछ बताया जाय। निशिकान्त के पत्र ने उनको इतना विचलित कर दिया था कि दिल खोल कर किसी को वह सब बताये बिना वह अपने को हलका महसूस नहीं कर पा रहे थे। उन्होंने सोचा था कि कमला कम से कम मेरे दुख को समझ सकेगी। मुसीबत के समय कमला कम से कम धीरज बँधाने के लिए दो-चार शब्द कहेगी।

इनसान माफ भी तो करना जानता है। जयसुन्दर बाबू मानते थे कि उन्होंने गलत ढग से बहुत रुपया कमाया था। आयकर विभाग की आँखों में धूल झोंकता था। जीवन के सायंकाल में पहुँच कर वह स्वीकार करने लगे थे कि ऐसा कोई पाप नहीं था, जो धन कमाने के लिए उन्होंने नहीं किया था। कितनी ही विधवाओं की सम्पत्ति हड़प कर उनको भिखारिन बना कर छोड़ा था। कितने ही अमीरों के बेटों को शराब पिला कर बरबाद किया था और उनकी जायदाद अपने नाम लिखा कर खुद हड़प ली थी। यह सब चाहे और किसी को मालूम न हो, लेकिन निशिकान्त को खूब पता था।

कहना चाहिए कि जयसुन्दर बाबू ने जो बहुत धन कमाया था, उसके पीछे निशिकान्त की भरपूर मदद थी। वही धन जयसुन्दर बाबू ने '[illegible]' में लगाया था और किसी को कुछ पता भी न चल पाया था। यहाँ तक कि कमला भी यह सब नहीं जानती थी।

कमला यह नहीं जानती थी कि कैसे-कैसे तिकड़म से जयसुन्दर बाबू ने रुपया कमाया था, लेकिन वह यह तो जानती थी कि जयसुन्दर बाबू ने उसके लिए कितना रुपया खर्च किया था। लेकिन उसके लिए कमला उनका जरा भी एहसान नहीं मानती थी। कमला अपने पूजापाठ में दिनरात व्यस्त रहती थी। लेकिन उसके लड़कों की पढ़ाई के लिए जयसुन्दर बाबू ने हजारों रुपये खर्च किये थे। उन लड़कों को दार्जिलिंग में रख कर पढ़ाया था। एक लड़का डाक्टर बना था और इंजीनियर।

लेकिन उन लड़कों के लिए जयसुन्दर बाबू ने कैसे और कहाँ से रुपया

था, उससे कमला को कोई मतलब नहीं था। उसके लिए तो उसका पूजापाठ ही सब कुछ था। उसके बाहर उसने कभी कुछ सोचने-समझने की कोशिश नहीं की। कमला को मानो जयसुन्दर बाबू के सुख का हिस्सा लेना था और उसने लिया भी, लेकिन उनके दुख से उसे कोई मतलब नहीं था।

जयसुन्दर बाबू के दोनों लड़के भी कुछ नहीं जानते थे। उनको किसी बात की कमी नहीं थी और उसी से वे सन्तुष्ट थे। हाँ, बड़े हो कर वे यही जान सके थे कि माँ और बाप अलग-अलग मकान में रहते हैं।

अजय जब कुछ बड़ा हो गया था, उसने माँ से पूछा था—माँ, पिताजी अलग मकान में क्यों रहते हैं ?

इस पर कमला ने कहा था—तुम्हारे पिताजी के पास बहुत काम रहता है, इसलिए उनको इस घर में आने का समय नहीं मिलता।

—पिताजी के पास चाहे जितना काम हो, लेकिन रात को तो उनको घर आना चाहिए।

बेटे की बात सुन कर कमला ने कहा था—उनको मौका नहीं मिलता, इस-लिए नहीं आते। लेकिन उससे क्या, वही तो तुम लोगों के पढ़ने-लिखने और खाने-पीने का सारा खर्च देते हैं। यह मकान भी तो उन्हीं का है !

अजय ने कहा था—लेकिन यह कैसी बात है ! मेरे जितने साथी हैं, सबके माँ-बाप एक मकान में रहते हैं। आप लोगों का यह कैसा विचित्र नियम है माँ ?

कमला अपने बेटे के सवाल का जवाब सहसा न दे सकी थी। फिर भी उसने कहा था—यह सब ले कर तुम क्यों सोचते हो ?

इस पर अजय ने कहा था—नहीं माँ, मैं इसके बारे में पिताजी से पूछूंगा !

कमला ने हार कर कहा था—पूछ सकते हो। लेकिन यह भी बता देती हूँ कि वह बड़े व्यस्त रहते हैं। ऐसी बात पूछने पर नाराज हो सकते हैं !

अजय और विजय कुछ दिनों की छुट्टी में कलकत्ता आते थे और छुट्टी खत्म होते ही फिर हास्टल लौट जाते थे।

लेकिन उस दिन अजय अपनी बात पर अडिग था।

उस दिन रात को जयसुन्दर बाबू बहुत देर करके घर लौटे थे। आये दिन वह उसी तरह देर से घर लौटते थे, क्योंकि शाम होने पर ही उनका असली काम शुरू होता था। तमाम लोगों से मिलना पड़ता था। आये दिन पार्टी रहती थी। यह सब काम दिन में कम ही हो पाता था।

जयसुन्दर बाबू के लौटते ही उस रात नन्द ने कहा—आपसे मिलने के लिए एक बाबू बैठे हुए हैं।

—कौन है ? जयसुन्दर बाबू ने पूछा।

—यह तो बता नहीं सकता।

जयसुन्दर बाबू ने कहा—पता नहीं, इतनी रात को कौन मिलने आया! तूने कहा क्यों नहीं कि बाबू घर में नहीं हैं? फिर मैं घर पर किसी से मिलता भी नहीं।

नन्द बोला—मैंने कहा था। फिर भी उन्होंने कहा कि मैं इन्तजार कर रहा हूँ। दफ्तर में बैठे हुए हैं।

—क्या नाम है उस बाबू का?

—यह तो नहीं पूछा।

—अरे, यह तो पूछना चाहिए कि कौन आया है!

इतना कह कर जयसुन्दर बाबू नहीं रुके। वह सीधे अपने कार्यालय में चले गये। वह मन ही मन नाराज थे और आगन्तुक के सामने अपनी नाराजगी प्रकट भी करना चाहते थे। लेकिन आफिस रूम में पहुँच कर देखा कि अजय है।

अजय को देखते ही जयसुन्दर बाबू मानो सकपका गये।

बोले—अरे, तुम हो? खड़े क्यों हो गये, बैठो। क्या खबर है? कब आये?

—परसों आया।

—परसों आये? ठीक-ठाक हो न? पढ़ाई कैसी चल रही है? रुपये की जरूरत है?

—जी नहीं। आप तो नियम से रुपया भेजा करते हैं। रुपये के लिए हमें जरा भी असुविधा नहीं है।

फिर?

यह पूछ कर जयसुन्दर बाबू ने अजय की तरफ देखा तो उन पर मानो घड़ों पानी पड़ गया। क्या कोई जरूरत न हो तो बेटा बाप के पास नहीं आ सकता?

अजय थोड़ी देर चुप रहा।

जयसुन्दर बाबू बोले—कुछ बोल नहीं रहे हो? तुम्हारी माँ कैसी हैं?

—ठीक हैं।

—तुम्हें कोई जरूरत नहीं है?

—जी।

—बोलो न, क्या चाहिए? कुछ कहोगे तो? अगर कुछ भी नहीं कहना है तो आये क्यों? इतनी रात को क्या कोई किसी के घर आता है? क्या तुम नहीं जानते कि मैं हर समय कितना व्यस्त रहता हूँ? क्या तुम्हारी माँ ने तुमको यह सब नहीं बताया? देखते नहीं, तुम लोग नन्दन स्ट्रीट में रहते हो और मैं भी वहाँ जा नहीं पाता...

इतनी देर बाद अजय ने खामोशी तोड़ी और कहा—वही तो कहने

—क्या कहने आये हो ?

—आप हमारे साथ एक मकान में क्यों नहीं रहते ?

—अच्छा ! यह पूछ रहे हो ?

यह कह कर जयसुन्दर बाबू ने ठहाका लगाया।

उसके बाद बोले—बेटा, अभी तुम बच्चे हो। पहले बड़े हो जाओ और उसके बाद यह समझो कि दुनिया क्या है, फिर सब कुछ तुम्हारी समझ में आ जायेगा ! इस समय तुम दोनों सिर्फ मन लगा कर पढ़ो-लिखो, ताकि लायक बन सको। मैं जो इतना खटता हूँ, वह इसीलिए। मेरे पिता जी मेरे लिए एक पैसा नहीं छोड़ सके थे। इसलिए मुझे बड़ा कष्ट उठाना पड़ा था। इसी शहर में मेरा ऐसा समय बीता है, जब आये दिन मुझे भूखों रहना पड़ा। उसके बाद पन्द्रह रुपये महीने पर एक नौकरी मिली। एक मारवाड़ी की कोठी में बही-खाता लिखता था। वह नौकरी करते हुए शाम को सड़क पर घूम-घूम कर गमछा बेचता था। पन्द्रह रुपये की नौकरी और गमछे की फेरी, दोनों एक साथ करता रहा। उसके बाद उसी मारवाड़ी से, जिसके यहाँ नौकरी करता था, रुपया उधार ले कर साड़ी-धोती बेचने लगा। इस तरह मुझे आगे बढ़ना पड़ा था। यह सब तुम नहीं जानते, लेकिन तुम्हारी माँ जानती है। आज यह जो 'बोस एण्ड कम्पनी' देख रहे हो, इसके पीछे खटने और पिसने का लम्बा इतिहास है।

इतना कह कर जयसुन्दर बाबू ने थोड़ा दम लिया।

अजय बड़े आश्चर्य से पिताजी के जीवन-संघर्ष की कहानी सुनता रहा।

थोड़ा रुक कर जयसुन्दर बाबू कहने लगे—मेरी बात सुन कर शायद तुम्हें बड़ा आश्चर्य हो रहा है। बड़ा कष्ट उठा कर बड़ा बना हूँ। इसलिए मैं नहीं चाहता कि मैंने जैसा कष्ट उठाया है, वैसा तुम दोनों भाइयों और तुम्हारी माँ को उठाना पड़े। तुम लोगों का भविष्य सुरक्षित करने के लिए आज भी मैं इतना कष्ट उठा रहा हूँ।

अजय कुछ कहने जा रहा था, लेकिन बाधा पड़ी।

नन्द ने कमरे में आ कर कहा—मालिक, निशिकान्त बाबू आये हैं।

—ठीक है। यहाँ ले आ।

निशिकान्त आया तो जयसुन्दर बाबू ने अजय की तरफ देख कर कहा—अब तो तुमने सुन लिया अजय ? मेरी बातों को याद रखना। मैंने अपने जीवन में जो कुछ किया है, वह सब तुम लोगों को सुखी रखने के लिए। तुम दोनों भाई अपने जीवन में खूब बड़े बनो, सुखी रहो और दीर्घायु हो, यही मेरी कामना है। उसके बाद मैं तुम्हारी माँ के साथ काशी में जा कर जीवन के अन्तिम दिन बिताऊँगा। अब तो तुमने देख लिया कि मुझे कितना काम करना पड़ता है। दिन भर खटने के

बाद रात को भी मुझे चैन नहीं मिलता। अब यह संजन आये हैं और इनसे व्यवसाय के सम्बन्ध में बात करूँगा।

फिर अजय नहीं बैठा।

वह उठ कर बाहर जाने लगा।

जयसुन्दर बाबू ने कहा—बहुत रात हो गयी है, कैसे घर लौटोगे ?

अजय बोला—बस मिल गयी तो उसी से चला जाऊँगा, नहीं तो रिक्शा कर लूँगा।

—कहीं रिक्शा भी न मिला तो ?

—पैदल चला जाऊँगा।

जयसुन्दर बाबू बोले—उतनी दूर पैदल क्यों जाओगे ? मेरे पास कार है। मेरा ड्राइवर तुम्हें घर पहुँचा देगा।

इतना कह कर जयसुन्दर बाबू ने ड्राइवर बेणीलाल को बुलाने के लिए मन्द से कहा। बेणीलाल आया तो जयसुन्दर बाबू ने उसे आवश्यक निर्देश दिया।

अजय बेणीलाल के साथ बाहर निकला।



यह सब भी न जाने कब की बातें हैं। उसके बाद कितना लम्बा समय बीता।

उन दिनों अजय और विजय कितने छोटे थे। दार्जिलिंग में रह कर स्कूल में पढ़ते थे। वहाँ की पढ़ाई समाप्त कर एक ने डाक्टरी पढ़ी और दूसरे ने इंजीनियरी। उसके बाद एक अमरीका गया और दूसरा नौकरी ले कर मिडिल ईस्ट। फिर जयसुन्दर बाबू को बेटों की पढ़ाई का खर्च नहीं देना पड़ता था। दोनों बेटे आत्मनिर्भर हो गये थे। वे भी अच्छी आय करते लगे थे।

बेटों की तरफ से जयसुन्दर बाबू निश्चिन्त हो चुके थे। लेकिन कमला के साथ एक मकान में रहना उनके लिए सम्भव न हो सका था।

अब अगर कोई जयसुन्दर बाबू से उनके बड़े बेटे अजय की तरह यह सवाल पूछ बैठे कि आप अब भी कमला के साथ एक मकान में क्यों नहीं रहते, तो वह क्या उत्तर देंगे ?

अचानक बेणीलाल ने कार रोक दी।

कार रुकते ही जयसुन्दर बाबू की चिन्ता का तार टूटा।

बेणीलाल ने पूछा—कार गैरेज में कर दूँ ?

—हाँ ।

जयसुन्दर वाबू कार से वाहर निकले । उसके वाद वह धीरे-धीरे सीढ़ी तय करते हुए अपने मकान की ऊपरी मंजिल में जाने लगे । उस समय भी उनके कानों में कमला की वातें गूंज रही थीं । कुछ ही देर पहले कमला ने वह वातें कही थीं ।

कमला के घर में उस समय कीर्तन हो रहा था, जव जयसुन्दर वावू वहाँ गये थे । उस कीर्तन के पद भी उनके कानों में गूंज रहे थे ।

सचमुच, कमला को यह क्या हो गया है ? उस कीर्तन में उसे क्या रस मिला है ? जयसुन्दर वावू को उन दिनों की वात याद आयी जव कमला उनके पास नौकरी के लिए आयी थी । उस समय वह कितनी छोटी थी । सचमुच, क्या उम्र रही होगी उसकी ? उसके वाद नौकरी करते-करते एक दिन वह जयसुन्दर वावू की पत्नी वन गयी ।

निशिकान्त के उस पत्र ने जयसुन्दर वावू को अतीत की ओर मुड़ने के लिए मजवूर कर दिया था । पता नहीं, किस आकर्षण से जयसुन्दर वावू ने कमला से शादी की थी ?

अचानक नन्द का स्वर सुन कर जयसुन्दर वावू चौंक पड़े ।

—क्या है नन्द ? किसी ने टेलीफोन किया था ?

—जी हाँ, एक आदमी ने टेलीफोन किया था ।

—कौन था ?

नन्द वोला—नाम तो नहीं वताया ।

—क्या कहा ?

—पूछा कि आप घर में हैं कि नहीं ।

—तूने नाम क्यों नहीं पूछा ?

—पूछा था, लेकिन उन्होंने टेलीफोन रख दिया ।

जयसुन्दर वावू अपने फ्लैट में चले गये । वहुत दिनों से वह उस फ्लैट में उसी तरह अकेले रह रहे थे । वाहर की कितनी ही घटनाओं ने उन्हें विचलित किया था और अन्दर की कितनी ही घटनाओं ने विगलित । लेकिन वह सव घटनाएँ उन्हें विशेष याद नहीं थीं । उन्हें वस इतना ही याद था कि जीवन के हानि-लाभ के जोड़-वाकी से जो हासिल हुआ था, वह था रुपया । वहुत रुपया उन्होंने कमाया था ।

जव जयसुन्दर वावू को याद आया कि मेरे पास वहुत रुपया है, तभी उनको ख्याल हुआ कि निशिकान्त ने मौका समझ कर ही मेरे नाम यह पत्र भेजा है ।

तभी वाहर से नन्द की आवाज सुनाई पड़ी—मालिक, आपका खाना तैयार है ।

जयसुन्दर बाबू ने कहा—नहीं रे नन्द, आज खाना नहीं खाऊँगा। तू खा ले।

कमरे की बत्ती बुझा कर जयसुन्दर बाबू लेट गये।

अँधेरा ही जयसुन्दर बाबू को बड़ा अच्छा लगने लगा था। अँधेरे में ठीक से सोचने का मौका मिलता है। मनुष्य जब संकट में होता है, तभी शायद वह ठीक से अपने को देख पाता है।

क्या जयसुन्दर बाबू डर गये थे? लेकिन वह तो कभी डरते नहीं थे। कभी किसी बात से डरने वाले भी नहीं थे! उन्होंने सोचा, आखिर यह निशिकान्त क्या कर सकता है? क्या वह पुलिस को खबर करके मुझे गिरफ्तार करायेगा? लेकिन सबूत क्या है कि पुलिस मुझे पकड़ेगी? मैंने कभी कोई काम सबूत रख कर नहीं किया।

जयसुन्दर बाबू फिर बिस्तर से उठे। बत्ती जलाने के लिए स्विच दबाया। कमरे में रोशनी भर गयी।

थारड्रोब खोल कर जयसुन्दर बाबू ने कुरते की जेब से वह पत्र निकाला। फिर उस पत्र को पढ़ा। बार-बार पढ़ा। कहीं निशिकान्त के नाम से किसी और ने तो पत्र नहीं लिखा?

लेकिन नहीं। जयसुन्दर बाबू निशिकान्त की लिखावट को पहचानते थे।

एक बार जयसुन्दर बाबू के मन में आया कि इस चिट्ठी को लेकर थाने चला जाऊँ। थाने जा कर बताऊँ कि मुझे यह चिट्ठी मिली है। या सीधे डी० सी० के पास जाऊँ? डिप्टी कमिश्नर को मैं अच्छी तरह पहचानता हूँ। अच्छी जान-पहचान भी है। अनेक बार पार्टियों में उनसे मुलाकात हुई है। बड़े मिलनसार हैं!

अगर डिप्टी कमिश्नर ने यह पूछ लिया कि क्या आप निशिकान्त दास को जानते हैं?

तब क्या बताऊँगा? 'जानता हूँ' कहना ठीक रहेगा, या 'नहीं जानता'?

अन्त तक जयसुन्दर बाबू ने सही बताना निश्चय किया कि मैं निशिकान्त को जानता हूँ।

फिर जयसुन्दर बाबू पुलिस के डिप्टी कमिश्नर से मन ही मन सवाल-जवाब करने लगे—

—आपसे निशिकान्त का क्या संबंध है? क्या वह बोस एण्ड कम्पनी का पार्टनर है?

—जी नहीं, वैसा कोई पार्टनर नहीं है। मैं ही इस कम्पनी का एकमात्र मालिक हूँ। लगता है, यह आदमी मुझे ब्लैक मेल करना चाहता है।

—लेकिन यह अकारण आपको क्यों ब्लैक मेल करेगा? आप उसको जानते होंगे, क्योंकि यह आपको जानता है।

—हो सकता है कि उसे जानता हूँ। बिज़नेस में रह कर तमाम लोगों के सम्पर्क में आना पड़ता है, जिनमें से बहुतों को याद नहीं रख पाता। हो सकता है, यह निशिकान्त उन्हीं में से कोई हो। लेकिन उसकी हिम्मत तो देखिए। टेलीफोन नहीं किया, सीधे पत्र लिखा! एकदम ब्लैक एण्ड ह्वाइट में पत्र। उसने जरा भी नहीं सोचा कि यह पत्र पुलिस को दिखा सकता हूँ।

—ठीक है। आप यह पत्र मेरे पास रहने दीजिए।

जयसुन्दर बाबू ने सोचा, सचमुच पुलिस अगर मुझसे यह पत्र माँग कर अपने पास रख ले, तो? तो मैं क्या करूँगा? फिर निशिकान्त अगर अपने को बचाने के लिए मुझको मरवा डाले तो? निशिकान्त जिस स्वभाव का आदमी है, वह सब कुछ कर सकता है! फिर अगर वह मेरा खून न कराये तो पुलिस के पास मेरी सारी पोल-पट्टी खोल सकता है। उससे मेरी कलई खुल जायेगी और बड़ी बदनामी होगी।

न जाने क्या-क्या सोचते रहे जयसुन्दर बाबू। कलई खुल जाने का उन्हें बड़ा डर था। फिर तो सबको पता चल जायेगा कि जयसुन्दर बाबू की असलियत क्या है। अखबारों में उनका कच्चा चिट्ठा छपेगा तो क्या नाम छिपा रह जायेगा? फिर तो उनकी बदनामी देश भर में फैल जायेगी। सब उनके कारनामों को जान जायेंगे।

जयसुन्दर बाबू को जानने वालों की कमी नहीं थी। कोई उनका मित्र था तो कोई प्रशंसक। लेकिन उनकी असली सूरत को देख कर सभी लोग हँसेंगे। उनमें से कुछ लोग टेलीफोन करके पूछेंगे कि क्या माजरा है? फिर जयसुन्दर बाबू किस-किस का मुँह बंद करते फिरेंगे और किस-किस की जबान रोकेंगे? फिर तो मिट्टी खोद कर केंचुआ निकालने में साँप निकल आयेगा।

तब क्या होगा? जयसुन्दर बाबू ने सोचा।

जयसुन्दर बाबू को राधेश्याम बाबू का किस्सा याद आया।

राधेश्याम बाबू जयसुन्दर बाबू के हितचिन्तक थे। उन्होंने अनेक बार रुपया दे कर जयसुन्दर बाबू की मदद की थी। उन्हीं ने जयसुन्दर बाबू को रातों रात अमीर बनने का राज बताया था। लेकिन वही राधेश्याम बाबू बेमौत मारे गये थे। उन्हीं की कोठी में किसी ने उनकी हत्या कर दी थी। वह मामला पुलिस के रिकार्ड में दर्ज हुआ था और बहुत दिनों तक उसकी जाँच-पड़ताल हुई थी।

सिर्फ राधेश्याम बाबू की हत्या नहीं की गयी थी, बल्कि उनकी तिजोरी से कई लाख रुपये भी गायब किये गये थे। उसके बाद उस मामले की बहुत दिनों तक अखबारों में चर्चा हुई थी। बहुत से किस्से सामने आये थे। उन किस्सों को पढ़

कर देशभर के लोग राधेश्याम बाबू के नाम पर हँसे थे। फिर कोई नया सनसनीखेज मामला सामने आने पर राधेश्याम बाबू का मामला दब गया था।

लेकिन मेरे मामले में क्या होगा ? जयसुन्दर बाबू सोचते रहे।

निशिकान्त को तो हर बात का पता है। जयसुन्दर बाबू के जीवन की बहुत सी ऐसी घटनाएँ निशिकान्त जानता है, जो और कोई नहीं जानता। इसलिए निशिकान्त चाहे तो जयसुन्दर बाबू का सर्वनाश कर सकता है।

उस बेरल वाली घटना से निशिकान्त का आगमन हुआ था। मामूली काक-टेल पार्टी देकर जयसुन्दर बाबू ने हजारों रुपया कमाया था। उसी के बाद से निशिकान्त बराबर आने लगा था।

जयसुन्दर बाबू ने इसी तरह पार्टी दे-दे कर 'बोस एण्ड कम्पनी' की आमदनी दिन दूनी और रात चौगुनी बढ़ायी थी। उन्होंने हर आर्डर में जो मुनाफा कमाया था, निशिकान्त ने उसमें से हिस्सा लिया था। यह हिस्सा पाँच सौ रुपये से ले कर कभी-कभी दस हजार रुपये तक होता था।

एक दिन निशिकान्त ने आ कर कहा—सर, आज मैंने नौकरी छोड़ दी।

यह सुन कर जयसुन्दर बाबू को बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने पूछा—यह क्या किया ? उतनी अच्छी नौकरी तुमने छोड़ दी ?

निशिकान्त बोला—खाक अच्छी नौकरी थी ! आठ सौ रुपये की नौकरी को आप अच्छी नौकरी कह रहे हैं ? अगर मैं अपनी एनर्जी बिजनेस में लगाऊँ तो रोज आठ सौ रुपये कमा सकता हूँ ! लेकिन एक बात है—आप मेरी सहायता करेंगे न ?

—मैं क्या सहायता करूंगा ?

निशिकान्त ने कहा—यह मैं आपको बाद में बताऊँगा।

उसके काफी दिन बाद निशिकान्त आ धमका।

बोला—सर, बड़ी अच्छी खबर है। किसी को कानो कान खबर न होने पाये।

—पहले खबर तो बताओ। जयसुन्दर बाबू ने कहा।

निशिकान्त ने बड़ी धीमी आवाज में मानो फुसफुसा कर कहा—एक लाख रुपये का एक मकान बड़े सस्ते में बिक रहा है। लेंगे ?

जयसुन्दर बाबू बोले—मकान की कोई जरूरत नहीं है। फिर मकान ले कर क्या करूंगा ?

—अच्छा मुनाफा कमायेंगे, और क्या करेंगे ?

—उ_ मकान के लिए कितना देना पड़ेगा ?

निशिकान्त बोला—यही समझ लीजिए कि आठ-दस हजार।

—क्या कहते हो ? ठीक-ठीक मालूम है न ? एक लाख रुपये का मकान आठ-दस हजार में कौन बेचेगा ? फिर तुम क्यों नहीं ले रहे हो ?

निशिकान्त ने कहा—मैं ? उतना रुपया मुझे कहाँ से मिलेगा ?

फिर उस मकान के लिए चार-छः दिन दौड़-धूप करनी पड़ी।

निशिकान्त ने जो कुछ कहा था, सही था। वह एक विधवा का मकान था। विचौलिये वकील को कुछ खिलाना पड़ा। निशिकान्त ने भी कुछ खाया। लेकिन जो कुछ बचा, वह जयसुन्दर बाबू की तिजोरी में गया।

लेकिन बाद में कैसे क्या हो गया, यह जयसुन्दर बाबू आज भी नहीं समझ पाते। उन्होंने इस पर बहुत सोचा, लेकिन कोई संगत कारण समझ में नहीं आया। उनको इतना ही याद है कि एक दिन वह विधवा उनके दफ्तर के सामने आ कर धाड़-मार कर रोने लगी थी। उसका उस तरह रोना सुन कर लोग जुट गये थे। रास्ते में भीड़ लग गयी थी।

सबने उस विधवा बुढ़िया से पूछा था—क्या हुआ माई, क्यों रो रही हो ?

लेकिन बहुत देर तक जयसुन्दर बाबू को वह दृश्य नहीं देखना पड़ा था।

बोस एण्ड कम्पनी के दरबान ने पास के थाने में खबर की थी और एक कान्स्टेबिल आ कर उस बुढ़िया को न जाने कहाँ ले गया था।

कलकत्ते में अगर किसी के पास रुपया हो तो उसके लिए किसी का मकान हड़प लेना कोई मुश्किल काम नहीं है। तमाम गिरवी रखे मकान मिट्टी के मोल बिकते रहते हैं। निशिकान्त वैसे मकानों का पता लगाता रहता था। ऐसे कितने मकानों और जमीन-जायदाद का पता निशिकान्त देता था। गिरवी रखे मकान या जमीन-जायदाद को छुड़ा कर खरीद लिया जाता था। बाद में उसी मकान या जमीन-जायदाद को ऊँचे दाम पर बेचा जाता था। जयसुन्दर बाबू को यह सब सलाह निशिकान्त ही देता था। फिर जयसुन्दर बाबू उस सलाह के मुताबिक काम करते थे और रुपया देते थे।

इस तरह जयसुन्दर बाबू ने बहुत कमाया था—लाखों रुपया कमाया था। निशिकान्त को उसमें से हिस्सा जरूर मिला था, लेकिन वह ऊँट के मुँह में जीरा जैसा था।

सबसे भयानक और हृदय-विदारक घटना थी राधेश्याम बाबू की हत्या। दूसरों का खून चूसते-चूसते निशिकान्त खून का प्यासा बन गया था।

एक दिन आधी रात को चोर की तरह निशिकान्त आ पहुँचा।

—क्या बात है ? इतनी रात को ?

जयसुन्दर बाबू उस समय थके-मारे सो गये थे। उनको जगाया गया था।

निशिकान्त पसीने से तरबतर हो रहा था। उसकी हालत देख कर जयसुन्दर बाबू को बड़ा आश्चर्य हुआ था।

चारों तरफ एक निगाह डाल कर निशिकान्त ने कहा था—कुछ रुपये की जरूरत पड़ गयी है।

—रुपये की ? कितने रुपये की ? किसलिए जरूरत पड़ गयी ?

निशिकान्त बोला—पुलिस को देना पड़ेगा। फिलहाल दो हजार से काम चल जायेगा।

दो हजार रुपये दे कर जयसुन्दर बाबू ने निशिकान्त को विदा किया।

निशिकान्त भी रुपया मिलते ही चला गया।

लेकिन दूसरे दिन सवेरे अखबार पढ़ते ही जयसुन्दर बाबू चौंके। डाकुओं ने राधेश्याम बाबू की हत्या कर उनकी कोठी लूट ली थी। पुलिस किसी को गिरफ्तार न कर सकी थी। जांच चल रही थी।

यह खबर पढ़ कर जयसुन्दर बाबू का मन न जाने क्यों बेचैन हो उठा।

फिर तीसरे दिन सवेरे भी अखबार में राधेश्याम बाबू की हत्या से संबंधित खबर निकली। उस खबर में था कि पुलिस ने राधेश्याम अगरवाल हत्याकांड में निशिकान्त दास नामक एक व्यक्ति को गिरफ्तार किया है।

आज भी याद है कि यह खबर पढ़ते ही जयसुन्दर बाबू बुरी तरह डर गये थे। उनको यह सोच कर डर लगा था कि निशिकान्त कहीं इस मामले में उन्हीं को न फंसा दे !

फिर उसी दिन जयसुन्दर बाबू कलकत्ता छोड़ कर चले गये थे।

लेकिन जाने से पहले जयसुन्दर बाबू ने एक काम किया था। उन्होंने अपने एक क्लायंट के नाम एक खत डाल दिया था। उस खत में तीन दिन पहले की तारीख डाली गयी थी। अगर कभी उस मामले में जयसुन्दर बाबू को अदालत जाना पड़ता तो वह उस चिट्ठी को पेश कर साबित करते कि जिस दिन राधेश्याम अगरवाल की हत्या हुई थी, उस दिन मैं कलकत्ते में नहीं था।

क्लायंट के नाम वैसा खत भेज कर जयसुन्दर बाबू सीधे बम्बई चले गये थे।

राधेश्याम अगरवाल हत्याकांड के कारण जयसुन्दर बाबू जितने चिन्तित हुए थे, उतना दुःख भी नहीं हुआ। बम्बई जा कर वह कलकत्ते के अखबारों को ध्यान से देखते थे।

एक दिन खबर छपी कि राधेश्याम अगरवाल की हत्या के संबंध में पुलिस ने जिस निशिकान्त दास को गिरफ्तार किया है, उसने बयान दिया है कि मैं निर्दोष हूं। मैंने कभी किसी की हत्या नहीं की है। राधेश्याम अगरवाल को मैं जानता तक नहीं। इस बयान पर पुलिस को शक है कि असली हत्यारा फरार है।

महीना भर बम्बई में रहने के बाद जयसुन्दर बाबू कलकत्ते लौट आये थे। उनके लौटने के बाद राधेश्याम बाबू की हत्या का मामला सुनवाई के लिए अदालत में पहुँचा था।

मुकदमे की सुनवाई के दौरान निशिकान्त पुलिस की हिरासत में ही था। उसे जमानत पर छोड़ा नहीं गया था। उसके बाद उसे दस साल कैद की सजा मिली थी।

लेकिन वही निशिकान्त दास कब जेल से छूट कर आया, जयसुन्दर बाबू को इसका पता नहीं था। ये दस साल कब बीत गये, जयसुन्दर बाबू को ख्याल ही न था। फिर उन्होंने मन ही मन हिसाब लगा कर देखा कि हाँ, दस बरस बीत चुके हैं! फिर इतने दिनों बाद जेल से छूटते ही निशिकान्त दास ने उनको पत्र लिखा था!



बोस एण्ड कम्पनी का आफिस रोज जैसे साढ़े दस बजे खुलता था, उस दिन भी वैसे सही समय पर खुला था। आफिस कोई खास बड़ा नहीं था। फिर भी एक आफिस में जो कुछ होना चाहिए, वह सब कुछ था। मैनेजर, क्लर्क, टाइपिस्ट और दरबान आदि सभी कर्मचारी थे। वे सब कर्मचारी बीस वर्षों से वहाँ काम कर रहे थे।

हाँ, कुल मिला कर बीस वर्ष हुए थे।

कम्पनी के मालिक थे जयसुन्दर बाबू। वह आयें, चाहे न आयें, दफ्तर के काम में फर्क पड़ने वाला नहीं था। वह जिस दिन अचानक चले आते थे, उस दिन जो चिट्ठियां रहती थीं, उन पर दस्तखत करते थे। फिर टाइपिस्ट को बुला कर कई चिट्ठियों के लिए डिक्टेशन देते थे।

उस दिन भी आफिस आते ही मैनेजर को रोज की तरह कुछ पत्र मिले। वह एक-एक कर उन पत्रों को उठा कर देखने लगे। पहला पत्र जबलपुर से आया था और दूसरा मद्रास से। कई पत्र थे। मैनेजर सुशीतल बाबू हर पत्र को खोल कर पढ़ने लगे। सभी पत्र पुरानी पार्टियों के थे।

अचानक एक पत्र पर निगाह पड़ते ही सुशीतल बाबू रुक गये।

वह पत्र स्वयं मालिक ने, यानी जयसुन्दर बाबू ने लिखा था।

सुशीतल बाबू ने जल्दी-जल्दी लिफाफा फाड़ा। चर-चर की आवाज हुई।

फिर पत्र निकाल कर सुशीतल बाबू ने देखा कि उन्हीं के नाम मिस्टर बोस, यानी जयसुन्दर बाबू ने लिखा है। पता 'होटल सागर', पुरी का है। मिस्टर बोस ने वहीं से पत्र लिखा है।

सुशीतल बाबू ने जरा जोर से निरापद को बुलाया।

निरापद टाइपिस्ट था।

सुशीतल बाबू ने उसी से कहा—अरे निरापद, बड़े साहब पुरी गये हैं!

निरापद टाइप मशीन छोड़ कर मैनेजर साहब के पास आ गया।

कहा—अचानक पुरी क्यों चले गये?

सुशीतल बाबू बोले—क्यों गये, यह मैं कैसे बताऊँ? चिट्ठी में बड़े साहब ने जो कुछ लिखा है, वही बता रहा हूँ। हर बार तो वह बता कर जाते हैं। इस बार शायद बताने का मौका नहीं मिला।

फिर तो दफ्तर भर के लोग जान गये कि आज बड़े साहब, यानी मिस्टर बोस नहीं आयेंगे। इसलिए आराम से धीरे-धीरे काम करो। जल्दबाजी या हड़बड़ी करने की जरूरत नहीं है। दस-पाँच मिनट की देर होने पर आज कोई डाँटने वाला नहीं है। इस खबर से दफ्तर में मानो शान्ति छा गयी।

जिस दिन बड़े साहब नहीं आते, उस दिन कम्पनी के लोगों को बड़ा आराम मिलता है। उस दिन सुशीतल बाबू को भी बड़ा चैन रहता है। किसी के हुक्म की तामील नहीं करनी पड़ती।

बड़े साहब का पत्र पढ़ लेने के बाद सुशीतल बाबू ने दरबान को आवाज दी—दुखमोचन, एक कप चाय लाओ, भैया।

काम की जल्दी न रहने पर हर दफ्तर में चाय का दौर शुरू होता है।

जयसुन्दर बाबू यह सब नहीं जानते, ऐसी बात नहीं थी। वह अच्छी तरह जानते थे कि कलकत्ते से हटते ही उनके दफ्तर के लोग काम में ढिलाई करेंगे लेकिन वह भी तो एक काम था।

रात भर नींद नहीं आयी थी। जयसुन्दर बाबू दस मिनट भी सो न सके थे। इसमें नींद का क्या कुसूर था? जिन्दगी भर उन्हें न जैसा-तैसा झमेला झेलना पड़ा था। कैसी-कैसी मुसीबत उठानी पड़ी थी।

जिन दिनों जयसुन्दर बाबू कालीघाट के काली मन्दिर में सोते थे, उन दिनों भी वह रात को ठीक से सो नहीं पाते थे। बरसात के दिनों में तो कभी नहीं, क्योंकि पानी बरसते ही उसकी बौछार से नींद खुल जाती थी। रात भर एक मिनट भी सो नहीं पाते थे।

अब निशिकान्त के कारण जयसुन्दर बाबू सो नहीं पा रहे थे। सचमुच वह निशिकान्त भी एक आश्चर्य था। उसके लिए जयसुन्दर बाबू ने क्या नहीं किया

था, लेकिन उसी ने उनको कितना कष्ट दिया। यदि शुरू से हिसाब किया जाय तो पता चलेगा कि कई वर्षों में उसने जयसुन्दर बाबू से एक लाख से अधिक रुपया लिया था। उसने आ कर जब भी हाथ फैलाया, जयसुन्दर बाबू ने कुछ न कुछ दिया। कभी उसको खाली हाथ नहीं लौटाया।

लेकिन सुशीतल बाबू ने कितनी बार जयसुन्दर बाबू से कहा है—आप उस निशिकान्त को ज्यादा मुंह न लगाइए सर, वह आदमी ठीक नहीं है।

इस पर जयसुन्दर बाबू ने पूछा है—तुम्हें कैसे पता चला, सुशीतल?

किसी का चेहरा देख कर मैं बता सकता हूँ। सुशीतल ने कहा है।

—फिर यह बताओ कि मैं कैसा आदमी हूँ?

सुशीतल बाबू ने कहा है—मैं आपका नमक खाता हूँ सर! मैं तो आपका गुण ही गाऊँगा। मेरी बात रहने दीजिए।

मालिक के बारे में कभी नौकर को अपने मन में बुरी धारणा नहीं बना लेनी चाहिए। सुशीतल बाबू वगैरह कितने दिनों से जयसुन्दर बाबू के आफिस में काम कर रहे थे, वे लोग क्यों उनकी निन्दा करेंगे? यदि बुराई करनी भी हो तो पीठ पीछे करेंगे। सामने कभी नहीं। सामने सभी जयसुन्दर बाबू की तारीफ करेंगे। लेकिन वे लोग निशिकान्त को सही पहचान सके थे।

सुशीतल बाबू ने और भी कहा था—देख लीजियेगा, वह कभी न कभी आपको चक्कर में डालेगा।

अन्त तक सुशीतल बाबू की बात ही सही निकली। इसलिए उस दिन जयसुन्दर बाबू खूब सबेरे ही घर से निकल पड़े थे। नन्द ने उनको देख लिया था और पूछा था—नहीं। तू किसी से कुछ मत कहना।

—अगर कोई पूछे तो क्या कहूँगा?

—अगर कोई तुझसे मेरे बारे में पूछता है तो बता देना कि मुझे कुछ नहीं मालूम।

उस समय दिन की रोशनी भी ठीक से नहीं निकली थी। कलकत्ता शहर का वह रूप जयसुन्दर बाबू ने बहुत दिनों से नहीं देखा था। पहले जब उनके सोने की जगह नहीं थी, खाने का ठिकाना नहीं था, तब उन्होंने शहर का वह रूप अनेक बार देखा था।

जयसुन्दर बाबू निशिकान्त के मकान का पता भी ठीक से नहीं जानते थे। फिर वह थी भी तो बहुत दिन पहले की बात। उन दिनों वह अनेक बार अपनी कार से निशिकान्त को उसके घर के पास छोड़ गये थे। फिर वह अभी तक उसी मकान में है या नहीं, इसका भी क्या ठिकाना है। जयसुन्दर बाबू ने सोचा।

निशिकान्त के जेल जाने के बाद शायद उसके घरवालों ने वह मकान बदल

दिया होगा। जयसुन्दर बाबू सोचते रहे। निशिकान्त के घर में कौन-कौन है, जयसुन्दर बाबू यह भी नहीं जानते थे। वह उतने दिनों तक निशिकान्त के सम्पर्क में रहे, लेकिन कभी उन्होंने यह सब जानने की कोशिश नहीं की। उसकी जरूरत भी नहीं पड़ी थी। निशिकान्त से उनका रुपये का सम्बन्ध था। निशिकान्त उनको रुपया ला कर देता था और वह उसको उसका हिस्सा देते थे। हिस्सा दे कर ही वह फुरसत पा जाते थे।

जहां किसी से किसी का सम्बन्ध रुपये का होता है, वहां प्राणों के सम्बन्ध का सवाल ही नहीं उठता। किसी कम्पनी का मालिक क्या अपने हर कर्मचारी के घर का पता याद रखता है? वह तो सिर्फ उसी कर्मचारी के घर का पता जानता है, जिससे उसका व्यक्तिगत स्वार्थ जुड़ा होता है।

निशिकान्त तो जयसुन्दर बाबू की कम्पनी का कर्मचारी भी नहीं था। इसलिए निशिकान्त का पता जानने का सवाल भी नहीं उठता था। फिर भी उस समय जय-सुन्दर बाबू उसका मकान ढूंढने निकल पड़े थे, क्योंकि उनका व्यक्तिगत स्वार्थ था।

जयसुन्दर बाबू ने पहले ही एक टैक्सी कर ली थी। एक जगह पहुँच कर उन्होंने टैक्सीवाले से कहा—रुको! रुको!

वह जगह जयसुन्दर बाबू को जानी-पहचानी लगी। बहुत दिन उसी सड़क के मोड़ पर उन्होंने अपनी कार से निशिकान्त को छोड़ा था। उसी जगह खड़े हो कर उनको नमस्कार करने के बाद निशिकान्त अपने घर की तरफ चला गया था।

टैक्सी से उतर कर सामने एक आदमी को देखा तो जयसुन्दर बाबू ने उससे पूछा—भैया, निशिकान्त नाम का कोई आदमी यहाँ रहता है?

—निशिकान्त दास?

यह कह कर वह आदमी जयसुन्दर बाबू की तरफ देखता रहा। उसके बाद उसने पूछा—आप कहाँ से आ रहे हैं?

जयसुन्दर बाबू को यह सवाल अच्छा नहीं लगा। फिर भी उन्होंने मन का गुस्सा मन में दबा कर कहा—श्याम बाजार से।

इस उत्तर से भी उस आदमी को सन्तोष नहीं हुआ।

उसने फिर पूछा—कितने दिनों से उससे आपकी मुलाकात नहीं हुई?

जयसुन्दर बाबू ने कहा—कई साल हो गये होंगे?

यह सुन कर उस आदमी ने कहा—अच्छा! इसीलिए। वह तो जेल काट रहा है। आपको पता न होगा।

—जेल काट रहा है? क्या किया था उसने?

उस आदमी ने कहा—बड़े बाजार के एक मारवाड़ी की हत्या के आरोप में पकड़ा गया था। फांसी हो जाती, लेकिन पुलिस को बहुत पैसा खिला कर बच गया।

—पुलिस को पैसा खिला कर ? कितना खिलाना पड़ा ?

—यह सब बाहर का आदमी कैसे जान सकता है ? लेकिन सुनने में आया कि जिन्दगी भर की पूरी कमाई पुलिस की जेब में गयी है। एक कहावत है न, चोरी का धन मोरी में जाय !

वह आदमी अपनी बातों से रसिक भी लगा ! शायद निशिकान्त के बारे में वह बहुत कुछ जानता है। आखिर एक ही मुहल्ले का है न। जयसुन्दर बाबू ने सोचा।

फिर भी उस आदमी को एक बात की जानकारी नहीं थी कि निशिकान्त जेल से छूटा है।

जयसुन्दर बाबू ने पूछा—इस समय निशिकान्त के घर में कौन-कौन हैं ?

उस आदमी ने कहा—यह तो नहीं जानता। आप स्वयं जा कर पता कर लें।

जयसुन्दर बाबू ने किराया दे कर टैक्सी छोड़ दी। उसके बाद वह पैदल उस मकान की तरफ गये।

बहुत पुराना मकान था। दीवार पर जगह-जगह पलस्तर उखड़ चुका था। बहुत दिनों से उस मकान की न मरम्मत हुई थी और न सफेदी। बाहर दरवाजे में ताला नहीं लगा था, इसलिए समझ में आया कि अंदर जरूर कोई है।

जयसुन्दर बाबू बाहर वाले दरवाजे की कुंडी खटखटाने लगे।

बहुत देर कुंडी खटखटाने के बाद अन्दर से किसी पुरुष की आवाज सुनाई पड़ी —कौन ?

जयसुन्दर बाबू ने बाहर से पूछा—निशिकान्त दास हैं ?

—नहीं।

विचित्र कर्कश स्वर था। लेकिन किसी ने दरवाजा खोलने का नाम नहीं लिया। मानो अन्दर से 'नहीं' कह देना ही उसके लिए काफी था।

जयसुन्दर बाबू ने फिर कहा—जरा दरवाजा खोलिए न।

अन्दर से जवाब आया—बताइए, क्या कहना है ?

जयसुन्दर बाबू ने पूछा—निशिकान्त दास घर पर नहीं हैं तो कहाँ गये हैं ?

—पुरी।

—पुरी ?

जयसुन्दर बाबू वह छोटा सा जवाब पाकर सन्तोष न कर सके। उन्होंने पूछा —कब गये हैं ?

—बहुत दिन हो गये।

—कब लौटेंगे ?

अन्दर से जवाब आया—यह तो बता कर नहीं गये।

—आप कौन हैं ? आप निशिकान्त बाबू के कौन हैं ?

—यह सब जान कर आप क्या करेंगे ?

बात करने के ढंग पर जयसुन्दर बाबू बिगड़ गये । उन्होंने सोचा कि अब यही पूछा जाय कि निशिकान्त कब जेल से छूटा है ?

लेकिन नहीं, यह पूछने की जरूरत नहीं है । ऐसा सवाल करने पर जवाब देने वाला बिगड़ जायेगा । इससे मेरा काम बिगड़ जायेगा । इसलिए मीठा बोल कर सारी जानकारी लेनी होगी । जयसुन्दर बाबू ने सोचा । फिर उन्होंने पूछा—आप नाराज क्यों हो रहे हैं ? दरवाजा खोलिए न !

अन्दर से उस आदमी ने कहा—मैं दरवाजा नहीं खोलूंगा । आपको जो कुछ करना हो, करें ।

जयसुन्दर बाबू बोले—आप तो गजब कर रहे हैं ! आप बाहर आयेंगे तो क्या मैं आपको खा जाऊंगा ? मेरा नाम है जयसुन्दर बोस । मैं बोस एण्ड कम्पनी का मालिक हूं । कल निशिकान्त बाबू ने मुझे एक पत्र भेजा था । वही पत्र पा कर मैं मिलने आया हूं । निशिकान्त बाबू ने मुझे कल पत्र लिखा और तीन-चार दिन पहले वह पुरी भी चले गये, यह कैसे हो सकता है ?

अब उस आदमी ने दरवाजा खोला ।

जयसुन्दर बाबू अब उस आदमी को ठीक से देख सके ।

अधेड़ था । सिर के बाल खिचड़ी थे । एक दांत नहीं था । पान खाने से दांत काले पड़ चुके थे ।

जयसुन्दर बाबू ने पूछा—आप निशिकान्त बाबू के कौन हैं ?

उस आदमी ने कहा—मैं उनका कोई नहीं हूं । मैं उनके काम-काज की देख-भाल करता हूं ।

—निशिकान्त बाबू की फैमिली कहां है ? उनकी पत्नी और बाल-बच्चे कहां हैं ? क्या वे इस मकान में नहीं रहते ?

उस आदमी ने कहा—बाबूजी का कहीं कोई नहीं है ।

जयसुन्दर बाबू ने पूछा—आपको ठीक से पता है न कि निशिकान्त बाबू पुरी गये हैं ?

उस आदमी ने कहा—मुझको तो यही बता कर गये हैं ।

—क्या वह पुरी का पता दे गये हैं ? यानी, वहां किस होटल में ठहरे हैं, कुछ पता है ?

उस आदमी ने सिर हिला दिया । यानी, उसको वह सब मालूम नहीं था ।

जयसुन्दर बाबू समझ गये कि उस आदमी से और कोई जानकारी नहीं मिल सकती ।

फिर यहां खड़े हो कर समय नष्ट करने से फायदा ? जयसुन्दर बाबू ने सोचा ।

उसके बाद वह वहां नहीं रुके। वह वहां से चल कर सड़क पर आ गये। उसी समय वहां से एक टैक्सी जा रही थी। उसी को बुला कर वह उसमें बैठ गये।



पुरी में 'होटल सागर' का बड़ा नाम है।

'होटल सागर' में जो भी ठहरता है, उसके मालिक के आदर-सत्कार से प्रसन्न हो जाता है। वहां कौन क्या खायेगा, उसके लिए उसको सोचना नहीं पड़ता। होटल के लोग ही आ कर पूछते हैं—मछली का झोल खायेंगे या मांस का सालन ? हमारे यहां हर तरह का इंतजाम है। अगर शाकाहारी भोजन करना चाहेंगे तो वह भी मिल जायेगा।

उस दिन सवेरे वाली ट्रेन से जो युवती आयी थी, उससे भी उन लोगों ने वही सब पूछा था।

—मछली का झोल और भात खाऊंगी। उस युवती ने कहा था।

— दोपहर में लंच के साथ दही और रात को डिनर में दूध लेंगी न ?

—दे सकते हैं।

—दूध न लेना चाहें तो पुडिंग भी ले सकती हैं। जैसी आपकी इच्छा।

उस युवती ने कहा—ठीक है। दूध के बदले पुडिंग दे सकते हैं।

—जी हां। वही होगा। इस समय ब्रेकफास्ट में क्या लेंगी ? रसगुल्ला, गुलाबजामुन और चाय भेजूं ?

—भेजें।

झुंझला कर यह कहे बिना कोई चारा नहीं था।

होटल वाले से जान छुड़ा कर उस युवती को मानो चैन मिला।

लेकिन थोड़ी देर बाद वह आदमी फिर आया। लम्बा सा रजिस्टर और कलम ले कर आया। उस युवती के सामने वह रजिस्टर रखते हुए उस आदमी ने कहा—कृपा करके आप यहां अपना नाम लिख दें।

लिखने के लिए कलम उठा कर वह युवती रुक गयी। फिर उसने जल्दी-जल्दी लिखा—वरुण चौधरी।

—कहां से आयी हैं ?

—कलकत्ते से।

—फिर वह भी यहां लिख दीजिए।

वरुणा ने वह भी लिख दिया। उसके बाद उसने एक खाना दिखा कर पूछा —यहाँ क्या लिखूंगी?

—वहाँ लिखिए कि आप कितने दिन पुरी में रहना चाहती हैं।

वरुणा बोली—उसका तो अभी से कोई ठीक नहीं है। चार दिन भी रह सकती हूँ और अच्छा लगा तो पन्द्रह दिन भी।

होटल वाले ने कहा—फिर वहाँ कुछ लिखने की जरूरत नहीं है। बाद में जब जाने लगेंगी, तभी लिख देने से काम चल जायेगा। फिर इस कालम में लिखिए कि किस लिए पुरी आयी हैं।

—किस लिए पुरी आयी! घूमने के लिए, और क्या?

उस आदमी ने कहा—फिर वहाँ वही लिख दीजिए।

वरुणा ने वही लिखा।

लिखना पूरा होते ही उस आदमी ने कलम और रजिस्टर ले लिया।

फिर पूछा—आपका ब्रेकफास्ट तो इसी कमरे में लाऊँगा?

—जी हाँ।

वरुणा ने ज्यों कहा, वह आदमी बाहर चला गया। वरुणा जरा अकेले में रहना चाहती थी, लेकिन वैसा नहीं हो सका। वह जब से आयी थी, होटलवाला उसे परेशान करने लगा था—आदर-सत्कार के नाम पर या औपचारिकताएँ पूरी करने के लिए।

रात भर ट्रेन में बड़ी तकलीफ हुई थी। एक मिनट भी वरुणा सो न सकी थी। समुद्र के पास होटल होने के कारण समुद्र-गर्जन सुनाई पड़ रहा था। लेकिन अचानक वरुणा को न जाने कैसा सन्देह हुआ। यह समुद्र का गर्जन है या मेरे दिल धड़कने की आवाज? वरुणा ने सोचा। एक-दो बार उसे लगा कि वह आवाज उसके वक्ष में से आ रही है। लेकिन दिल की धड़कन क्या कानों से सुनाई पड़ती है?

फिर एकाएक उस आदमी के आते ही वरुणा चौंक पड़ी। उसके हाथ की ट्रे में मिठाई की प्लेट और पानी का गिलास था। उसी के पास चाय का कप रखा था। वह सब टेबिल पर रख कर वह आदमी जाने लगा।

वरुणा ने उसे रोका।

कहा—जरा रुक जाइए। मैं खा लेती हूँ। आप यह सब लेते जाँय। बार-बार आपको कष्ट करके यहाँ आने की जरूरत नहीं है।

उस आदमी ने कहा—नहीं-नहीं, कष्ट किस बात का बहन जी, यही तो मेरा काम है। आप लोगों की सेवा करना मेरी ड्यूटी है।

फिर भी वरुणा ने झटपट मिठाइयाँ खा कर पानी पी लिया। उसके बाद उसने ठंडी चाय मुँह में उड़ेल ली। तब कहीं मानो उसे छुटकारा मिला।

कहा—जाइए। अब यहाँ आने की जरूरत नहीं है। नहाने के बाद मैं थोड़ी देर सो लूंगी।

—दोपहर का भोजन कब करेंगी ?

वरुणा बोली—यही साढ़े बारह या एक बजे। उसके पहले नहीं।

प्लेट और कप ट्रे पर रख कर उस आदमी ने ट्रे उठा ली और कमरे के बाहर चला गया।

जाते समय उसने कहा—अगर किसी चीज की जरूरत पड़े तो मुझे बुलाइयेगा, बहन जी। मेरा नाम है फिकर। याद रहेगा न ?

वरुणा बोली—ठीक है। अब आप जायें।

—बस, मेरा नाम याद रखें फिकर, बुलाते ही मैं आ जाऊँगा। अच्छा चला।

उसके जाते ही वरुणा ने दरवाजा बंद कर लिया।



'होटल सागर' दुमंजिले मकान में है। सीढ़ी ज्यादा चौड़ी नहीं, बल्कि ऊँची-ऊँची है। लेकिन बार-बार ऊपर-नीचे करते-करते फिकर को आदत पड़ गयी है। होटल का आफिस नीचे है। वहीं हिसाब की किताबें लिए मैनेजर बैठे रहते हैं। उसी कमरे में चीनी का बोरा, दाल का बोरा और चावल का बोरा रखा रहता है। सभी कीमती सामान मैनेजर अपने कमरे में रखते हैं। इससे चोरी होने का भय नहीं रहता। जब जरूरत पड़ती है, रसोइया आ कर उनके सामने चावल, दाल या तेल नाप कर ले जाता है।

असल में 'होटल सागर' के मैनेजर ही मालिक हैं। प्रोप्राइटर-कम-मैनेजर। पैसा दे कर मैनेजर रखने से होटल का काम नहीं चलता। इसलिए मैनेजर का काम शेखर बाबू स्वयं करते हैं।

फिकर के दिखाई पड़ते ही शेखर बाबू ने उसे बुलाया—क्यों रे, बारह नंबर रूम में नाश्ता दे आया ?

—जी हां। फिकर बोला।

शेखर बाबू ने एक किताब में न जाने क्या लिख लिया। हर कमरे में कौन क्या खा रहा है, कब खा रहा है, कौन कब आ रहा है, यह सब कुछ शेखर बाबू लिखते रहते हैं। वह हिसाब के बड़े पाबंद हैं और मुश्किल से उनके हिसाब में कभी गलती होती है।

बहुत दिन पहले अपना स्वास्थ्य सुधारने शेखर बाबू पुरी आये थे। यहाँ आ कर उनका गठिया ठीक हो गया था। उसके बाद जब वह घर लौट गये थे, तब फिर वह गठिया शुरू हो गया था। फिर वह जब भी पुरी आये, उनका गठिया ठीक हुआ और घर लौटते ही वह रोग हो गया। कई बार ऐसा होने के बाद उन्होंने तय किया कि अब घर नहीं लौटूँगा।

फिर शेखर बाबू इसी होटल में स्थायी रूप से रह गये। उसके बाद जब इस होटल के बिकने की बात चली, उन्होंने इसे किस्त बाँध कर खरीद लिया। तब से इस होटल की दिन पर दिन उन्नति होती गयी। बाद में शेखर बाबू ने होटल को बड़ा किया और कई नये कमरे बनवाये। कई कमरों को बड़ा अच्छा बनवाया गया। उनमें बड़े-बड़े लोग आ कर ठहरते हैं। उन कमरों का किराया कुछ अधिक है। लेकिन बड़े लोगों के ठहरने के लिए भी तो कोई जगह होनी चाहिए। अगर वैसी जगह न हो तो वे लोग कहाँ ठहरेंगे?

गरमी के दिनों में 'होटल सागर' के सभी कमरे भरे रहते हैं। कभी-कभी होटल खाली भी हो जाता है। लेकिन सवेरे जब पुरी एक्सप्रेस स्टेशन पर पहुँचती है, तब सभी होटलों के एजेण्टों के साथ 'होटल सागर' का एजेंट भी पैसेंजर पकड़ने के लिए स्टेशन पहुँचता है। 'होटल सागर' के एजेंट का नाम है गुणेश्वर।

शेखर बाबू गुणेश्वर को छपे हुए हैंडबिल थमा देते हैं। प्लेटफार्म पर पुरी एक्सप्रेस के आने के बाद जब पैसेंजर उतरने लगते हैं, गुणेश्वर सबको एक-एक हैंडबिल देता है। उसी के साथ वह कहता जाता है—सर, एक बार हमारा 'होटल सागर' भी ट्राई करके देखें। हवा और रोशनी की कमी नहीं है। एकदम समुद्र पर है। कृपया एक बार जरूर ट्राई करें। चार्ज भी माडरेट है।

वरुणा चौधरी भी जब पुरी स्टेशन के प्लेटफार्म पर ट्रेन से उतरी थी, गुणेश्वर ने उसे भी हैंडबिल दिया था। वरुणा के साथ एक सज्जन भी थे।

उस सज्जन से वरुणा चौधरी ने पूछा था—'होटल सागर' में ठहरूँ?

—ठहरो। उस सज्जन ने कहा था।

—और आप?

उस सज्जन ने कहा था—मेरे लिए क्यों परेशान होती हो? तुम 'होटल सागर' में जाओ, मैं कहीं और ठहर जाऊँगा। बाद में तुम्हारे होटल में आ कर तुमसे मिल लूँगा।

इतना कह कर वह सज्जन अपना सामान लिये दूसरी तरफ चले गये थे।



शेखर बाबू शायद ही कभी आराम करते हैं। उनको नींद भी मानो बहुत कम आती है। बीस वर्ष पहले पता नहीं कब उन्होंने यह होटल खरीदा था और तब से चावल-दाल-तेल-चीनी रखने के उसी कमरे में रहते आ रहे हैं। वहीं बैठे-बैठे वह रुपये-पैसे का हिसाब भी करते हैं। ये कई वर्ष उन्होंने उसी छोटे से कमरे में बिता दिये। कब रात हुई और कब दिन हुआ, उनको मानो पता भी न चल पाया। वह सिर्फ इतना ही जान सके कि उनके पास बहुत रुपया हो गया है। रुपये का पहाड़ लग गया है।

इसके अलावा शेखर बाबू यह भी जान सके कि कैसे-कैसे लोग कैसे-कैसे मकसद से जिन्दगी बिता रहे हैं। कोई समुद्र देखने आया, लेकिन घंटे भर के लिए भी उसने समुद्र नहीं देखा और कमरे का दरवाजा बंद कर सारा समय बोतल पर बोतल शराब पीने में बिता दिया। कोई अपनी पत्नी के साथ आया। प्रतिदिन उसने सपत्नीक जगन्नाथ मंदिर के दर्शन में ही सुबह, शाम और रात का अधिकांश समय बिता दिया। प्रेमी-प्रेमिका की जोड़ी भी आयी। पति-पत्नी के रूप में यहाँ एकान्त में तीन दिन बिता कर चौथे दिन वे कलकत्ते लौट गये। इससे शेखर बाबू को कोई नुकसान नहीं, बल्कि फायदा हुआ है। इस तरह हजारों लोग आये और उनके 'होटल सागर' में ठहरे। उनमें शायद ही कोई शेखर बाबू को याद है।

उस दिन शेखर बाबू ने देखा कि एक अपरचित व्यक्ति उनके होटल में आया।

शेखर बाबू ने पूछा – किसको चाहते हैं?

उस व्यक्ति ने कहा —आपके होटल में वरुणा चौधरी आयी हुई हैं। वह किस नंबर में हैं?

खाता देख कर शेखर बाबू बोले—बारह नंबर कमरे में देखिए। दूसरी मंजिल में है।

नंबर पूछ कर व्यक्ति दूसरी मंजिल में चला गया।

शेखर बाबू ने फिर हिसाब की बही में मन लगाया।

होटल का काम कच्चे माल का धंधा है। निगाह चूकी कि चोरी हुई। इसी चोरी से बचने के लिए शेखर बाबू रात-दिन चावल-दाल-चीनी के बोरे और तेल-घी के कनस्तर अगोरते रहते हैं।

दिन निकलने से पहले ही शेखर बाबू को काम में जुट जाना पड़ता है। रात

तीन बजे वह उठ जाते हैं। उस समय चाहे जितनी नींद आये, बिस्तर पर पड़े रहना सम्भव नहीं है। होटल के सभी बोर्डर सो कर उठें न उठें चाय मांगेंगे। रसोइया चीनी और चाय की पत्ती मांगने आयेगा। शेखर बाबू अपने हाथ से चीनी और चाय की पत्ती निकाल कर देते हैं। आजकल चीनी का दाम कितना बढ़ गया है, चाय का रेट बढ़ाये बिना काम नहीं चलता।

उसके बाद गुणेश्वर को बुलाना पड़ता है। गुणेश्वर को बुलाते हुए शेखर बाबू कहते हैं—अरे गुणेश्वर, उठ जा! उठ जा! चार बज गये हैं। स्टेशन जाना है। जल्दी तैयार हो ले!

गुणेश्वर झटपट बिस्तर से उठ कर चाय पीने के लिए रसोईघर की तरफ जाता है।

इधर शेखर बाबू जल्दी मचाते रहते हैं—अब तुझे चाय पीने की जरूरत नहीं है। रास्ते में चाय पी लेना। यह ले, पैसा रख।

दो-दो कमरे खाली पड़े हैं। इससे बहुत नुकसान हो रहा है। रोज बीस-बीस रुपये करके चालीस रुपये का नुकसान मामूली बात नहीं है। आज गुणेश्वर एक भी बोर्डर लाये तो वह नुकसान किसी हद तक पूरा हो सकता है। इस मँहगाई के जमाने में बीस रुपये भी कौन देता है?

गुणेश्वर छपे हुए हैंडबिल लेकर चला जाता है। वह जब स्टेशन पहुँचता है, तभी पुरी एक्सप्रेस प्लेटफार्म पर आती है। गुणेश्वर प्लेटफार्म पर जा कर खड़ा हो गया। ठीक उसी जगह, जहाँ से यात्री बाहर आयेंगे। एक-एक पैसेंजर कुली के सिर पर बक्सा-बिस्तर रख कर आगे बढ़ने लगेगा तो गुणेश्वर अपनी रटी-रटायी बात कहेगा—हमारे 'होटल सागर' में एक बार ट्राई करके देखें सर। होटल एकदम समुद्र पर है। कृपया एक बार जरूर ट्राई करें सर। माडरेट चार्ज है।

अन्य सभी होटलों के एजेंट कतार में खड़े हैं। उनके पास भी हैंडबिल हैं। वे भी पैसेंजरों को अपनी तरफ खींचने की कोशिश करेंगे। उसके बाद पंडे भी हैं। जो लोग तीर्थ करने आते हैं, उनकी तरफ पंडों का ध्यान अधिक रहता है। यात्रियों की शक्ल देखने से पता चल जाता है कि कौन तीर्थ करने आया है और कौन नहीं। फिर जो लोग घूमने आते हैं, वे होटल में ठहरते हैं। गुणेश्वर जैसे होटल के एजेंटों की निगाह उन पर अधिक रहती है।

इतने में एक पैसेंजर ट्रेन से बाहर निकला तो गुणेश्वर उसकी तरफ बढ़ा।

उस पैसेंजर के पास जा कर गुणेश्वर अपनी रटी-रटायी बात कहने लगा—हमारे 'होटल सागर' को एक बार ट्राई करके देखें सर। हवा और रोशनी की कमी नहीं है। एकदम समुद्र पर है सर। हमारे 'होटल सागर' को जरूर देखें। चार्ज भी माडरेट है।

जयसुन्दर बाबू के पास सिर्फ एक बड़ा सा सूटकेस था। वह उस समय वही सूटकेस कुली के सिर पर रख रहे थे। गुणेश्वर की बात सुन कर उन्होंने पूछा—कौन सा होटल बताया?

गुणेश्वर बोला—'होटल सागर' सर।

जयसुन्दर बाबू ने पूछा—कैसा होटल है? ठीक रहेगा न?

गुणेश्वर ने कहा—जी हाँ, बहुत ठीक रहेगा सर। अगर आपको होटल पसंद नहीं आता तो दूसरे होटल तक जाने में कितनी देर लगती है?

—खाने का कैसा इन्तजाम है?

—आप जैसा कहेंगे सर, वैसा दिया जायेगा। आप लोगों की सेवा करना ही हमारा काम है।

फिर एक टैक्सी में सूटकेस रखा गया।

जयसुन्दर बाबू पीछे की सीट पर बैठ गये।

गुणेश्वर के बताये रास्ते से टैक्सी चलने लगी। वह आगे की सीट पर ड्राइवर के पास बैठा था।

जयसुन्दर बाबू टैक्सी में बैठे बाहर देखने लगे। सड़क पर अनगिनत लोग थे। जयसुन्दर बाबू सबको अच्छी तरह देखने की कोशिश करने लगे। हो सकता है, अचानक निशिकान्त दिखाई पड़ जाय!

यह सोच कर जयसुन्दर बाबू को बड़ा आश्चर्य हुआ कि इतनी जगह रहते निशिकान्त पुरी क्यों आया? फिर सोचा, मेरे पते पर चिट्ठी भेजने के पहले ही क्या वह पुरी आया है? लेकिन उसे पैसा कहाँ से मिला? यहाँ आ कर वह जरूर किसी होटल में ठहरा होगा? हालांकि कलकत्ते में उसका अपना घर है। उसके घर पर जो आदमी मिला था, वह कौन है?

ट्रेन में भी जयसुन्दर बाबू यही सब सोचते हुए आये थे। निशिकान्त जेल से कब छूटा? फिर जेल से छूट कर उसने रुपये का कहाँ से इन्तजाम किया? जो आदमी दस वर्ष जेल काटता है, उसके पास रुपया होना सम्भव नहीं है! हो सकता है कि उसने पहले ही बहुत रुपया इकट्ठा करके रखा था। लेकिन कहाँ रखा था? बैंक में?

फिर जयसुन्दर बाबू को याद आया था कि निशिकान्त बैंक में रुपया रखने वाला आदमी नहीं है। लेकिन उसने कम रुपया नहीं कमाया था। जयसुन्दर बाबू ने ही उसको कितना रुपय. दिया था। शायद उसने वह रुपया पूरा खर्च नहीं किया था और उसमें से कुछ बचा कर रखा था। फिर राधेश्याम अगरवाल की कोठी से जो कई लाख रुपये ग़ायब हो गये थे, पुलिस वह रुपया बरामद न कर सकी थी। अंत तक एक सिगरे केस पुलिस के हाथ लगा था। फिर उसी सिगरेट केस

के जुर्म पर निशिकान्त पकड़ा गया था। बहुत दिनों तक वह मुकदमा चला था।

उन दिनों बसन्तकुमार निशिकान्त के केस की खबर नियमित अखबार में पढ़ते थे। जब भाग्य में दुर्दिन बदे रहते हैं, तभी ऐसा होता है। नहीं तो निशिकान्त जैसा बूढ़ा आदमी थोड़े से रुपये के लिए क्यों पकड़ा जाता? निशिकान्त के साथ और जो दो आदमी पकड़े गये थे, बाद में उनको फाँसी हो गयी थी। लेकिन निशिकान्त का भाग्य अच्छा था, इसलिए अन्त तक उसे फाँसी से नहीं लटकाया गया था।

अदालत में खड़े हो कर पुलिस के वकील ने निशिकान्त से बहुत जिरह की थी।

उस वकील ने बार-बार वह सिगरेट केस निशिकान्त को दिखाया था और पूछा था—क्या यह सिगरेट केस आपका है? अच्छी तरह देखिए, फिर बताइए।

निशिकान्त जैसा आदमी भी वह सिगरेट केस देख कर पहले घबड़ा गया था।

फिर उस सिगरेट केस को अच्छी तरह देखने का बहाना करके कहा था—जी नहीं। यह सिगरेट केस मेरा नहीं है।

—अगर नहीं है तो इसमें आपका नाम क्यों खुदा हुआ है?

निशिकान्त को वह बात एकदम याद नहीं थी।

फिर निशिकान्त ने अपनी गलती को सुधारते हुए कहा था—जी हाँ, अब मुझे याद आया। यह मेरा ही पुराना सिगरेट केस है। [illegible] सिगरेट केस चोरी चला गया था।

वकील की जिरह से उस दिन निशिकान्त पागल हो गया था।

चोरी, जालसाजी और मिलावट का धंधा करते-करते उन दिनों निशिकान्त का दुस्साहस इतना बढ़ गया था कि अपने [illegible] करने लगा था। उसी लापरवाही के कारण उससे वह छोटी-सी गलती हो गयी थी और उसे उसी की सजा भुगतनी पड़ी थी।

निशिकान्त कहेगा—यह तो बताइए कि मेरे कारण आप कितना रुपया कमा सके ? उस रुपये पर मेरा भी तो कोई हिस्सा बनता है ?

जयसुन्दर बाबू कहेंगे—कमाया तो क्या तुम मुझे डराते हुए पत्र लिखोगे ? तुम्हारी इतनी हिम्मत हो गयी ?

इस पर निशिकान्त शायद चुप्पी साधे रहेगा ।

जयसुन्दर बाबू फिर कहेंगे—मैंने जो रुपया कमाया, क्या उसका हिस्सा तुम्हें नहीं मिला ? क्या तुम नहीं जानते कि मुझसे तुम्हें कितना रुपया मिला है ? जब भी तुमने माँगा, मैंने दिया । जितना माँगा, उतना दिया । जब तुमने अपना मकान बनवाना चाहा था, तब भी तुमने कहा था कि मेरे पास रुपया नहीं है । उस समय मैंने तुम्हें कितना रुपया दिया था, क्या तुम्हें याद नहीं है ?

इस पर निशिकान्त शायद कहेगा—सिर्फ एक मकान बनाने से चल जायेगा ? क्या और भी खर्च नहीं हैं ? जिस समय मुझ पर मुकदमा चला था, उस समय कितना पैसा खर्च हुआ था, आपको पता है ? फिर मैं कोई नौकरी नहीं करता कि उस पैसे से मेरा खर्च चलता ?

—अगर तुम्हें रुपये की इतनी जरूरत पड़ी तो तुम सीधे मेरे पास क्यों नहीं चले आये ? क्या रुपया माँगने पर मैं न देता ? लेकिन तुमने धमकी भरा पत्र क्यों लिखा ? जानते हो, मैं वह पत्र पुलिस को दिखा कर तुम्हें गिरफ्तार करवा सकता हूँ ?

शायद इस पर निशिकान्त कहेगा– आपके भी बहुत से पत्र मेरे पास हैं । बहुत से सबूत भी हैं । मैं भी वह सब पुलिस को दिखा सकता हूँ । उससे मेरा कुछ नहीं बिगड़ेगा, बल्कि आपका नुकसान होगा ।

—क्या नुकसान होगा ?

निशिकान्त कहेगा— देखिए, आप मुझे डराने की कोशिश मत कीजिए । मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि आप कैसे इतने अमीर बने हैं ? मैं वह सब भंडाफोड़ कर दूँगा । आपने किस-किस की जायदाद हड़पी है, उसकी पूरी लिस्ट मेरे पास है । मैं जेल जाऊँगा, आप बच जायेंगे, ऐसा नहीं हो सकता । आप यह समझ लीजिए कि मैं भी आपको जेल भेज सकता हूँ । लेकिन आप मुझे दो लाख रुपये दे देंगे तो मैं किसी से कुछ नहीं कहूँगा ।

इस पर जयसुन्दर बाबू कहेंगे—देखो निशिकान्त, तुम एक बार जेल काट चुके हो । लगता है, फिर तुम जेल काटना चाहते हो ? अगर ऐसी बात है तो बताओ, मैं उसका भी इन्तजाम कर सकता हूँ ।

अचानक आवाज होते ही जयसुन्दर बाबू का सपना टूटा ।

गुणेश्वर बोला—आइए सर, उतर आइए । 'होटल सागर' आ गया है ।

जयसुन्दर बाबू ने टैक्सी का किराया दे दिया।

गुणेश्वर ने जयसुन्दर बाबू का सूटकेस ले कर सीढ़ी चढ़ते हुए कहा—आइए सर, ऊपर चले आइए।

जयसुन्दर बाबू भी सीढ़ी से ऊपर चढ़ने लगे।

अन्दर वाले कमरे में बैठे शेखर बाबू हिसाब का खाता देख रहे थे। गुणेश्वर की आवाज पा कर उन्होंने सिर उठा कर देखा।

शेखर बाबू को लगा कि गुणेश्वर मालदार पैसेंजर लाया है। है तो गुणेश्वर काम का। शेखर बाबू ने सोचा। लेकिन पता नही, यह सज्जन कितने दिन रहेंगे। देखने से तो लगता है कि काम-काजी आदमी हैं, अधिक दिन नही रहेंगे। ठीक है, न रहे। लेकिन एक बार जब आये हैं, तब अपने इष्ट-मित्रों से इसी होटल में ठहरने के लिए कहेंगे। इनके दोस्त-अहबाब भी इन्ही की तरह मालदार होंगे। फिर एक बार जब आये है, तब दूसरी बार जरूर आयेंगे। इस बार भले ही कम दिन रहे, लेकिन दूसरी बार ज्यादा दिन रहेंगे।

—ठाकुर। शेखर बाबू ने रसोइये को आवाज दी।

रसोइया आया।

शेखर बाबू ने कहा—ठाकुर, बड़ा अच्छा कस्टमर आया है। अभी तक आर्डर नही मिला, लेकिन आज ढंग से तेल-मसाला दे कर खाना बनाना। कस्टमर को खुश होना चाहिए। समझ गये?

रसोइया बोला—फिर आज बाजार से बढ़िया मछली मँगवा दीजिए। अगर मीट बनाने को कहते हैं, तो जरा बढ़िया लाने को कहियेगा। फिर खाना तो ऐसा बना दूँगा कि यह सज्जन जब भी पुरी आयेंगे, यहीं ठहरेंगे।

—यह रहा आपका कमरा हुजूर।

गुणेश्वर एक कमरे का ताला खोल कर अन्दर गया।

पीछे-पीछे जयसुन्दर बाबू भी गये।

—यह देखिए, कितनी बड़ी खिड़की है। फिर यह दरवाजा खोल दीजिए, सामने बारजा है। यहाँ बैठ कर आप सुबह-शाम समुद्र देख सकेंगे। तड़के नींद खुलते ही यहाँ आ कर बैठ जाइए, सूर्योदय देख सकेंगे। देखिए, आरामकुर्सी लगी है।

जयसुन्दर बाबू ने गुणेश्वर की बातों पर ध्यान नही दिया, लेकिन गुणेश्वर अपना काम करता रहा।

गुणेश्वर ने उस कमरे से लगे बाथरूम का दरवाजा खोल कर कहा—यह देखिए सर, जरा बाथरूम तो देख लीजिए। चौबीस घंटे पानी रहता है। ऐसा साफ-सुथरा बाथरूम आपको पुरी के किसी भी होटल में नहीं मिलेगा। फिर गरम पानी के लिए कहेंगे तो वह भी मिल जायेगा।

जयसुन्दर वावू ने फिर भी गुणेश्वर की वातों पर ध्यान नहीं दिया। उनके दिमाग में वस निशिकान्त चक्कर काट रहा था।

अचानक जयसुन्दर वावू ने पूछा—सुनो, तुम्हारे यहाँ निशिकान्त दास नाम का कोई वोर्डर आया है?

गुणेश्वर होटल की तारीफ करने में मशगूल था। उसने जयसुन्दर वावू की पूरी वात नहीं सुनी। पूछा—आपने क्या नाम वताया?

—निशिकान्त दास।

गुणेश्वर ने जरा सोच कर कहा—निशिकान्त दास? नहीं सर, इस नाम का कोई सज्जन इस समय होटल में नहीं है।

जयसुन्दर वावू ने पूछा—पहले कभी आया था?

गुणेश्वर वोला—फिर तो रजिस्टर देखना पड़ेगा सर। तुरंत वताना मुश्किल है। आप कितने दिन पहले की वात कर रहे हैं? रजिस्टर देख कर वता सकता हूँ।

जयसुन्दर वावू वोले—नहीं, रहने दो। उसकी जरूरत नहीं है।

—ब्रेकफास्ट में क्या लेंगे सर।

जयसुन्दर वावू खाने के लिए पुरी नहीं आये थे। इसलिए वोले—जो चाहो, लाओ।

गुणेश्वर कमरे के वाहर चला गया।

जयसुन्दर वावू ने कुरता उतारते हुए खिड़की में से समुद्र की तरफ देखा। वाह! समुद्र तो देखने में वड़ा अच्छा लग रहा है। क्या विशाल कारोवार शुरू कर दिया है उसने! जयसुन्दर वावू को अपने मन की प्रतिच्छवि उस समुद्र में देखने को मिली। उन्हीं के मन की तरह वह समुद्र अस्थिर था।

नहीं, जयसुन्दर वावू के पास सौंदर्य देखने का समय नहीं था। नहा-धो कर उसी वक्त उनको निकलना था। एक-एक कर सभी होटलों में पता लगाना था कि किस होटल में निशिकान्त ठहरा था।



इस छोर से उस छोर तक पुरी के समुद्र किनारे अनेक गलियाँ हैं। शहर के विभिन्न भागों से वे गलियाँ आ कर समुद्र की रेत में मिली हैं। उन गलियों में भी छोटे-छोटे वहुत से सस्ते होटल हैं। उन होटलों में भी कितने लोग ठहरते हैं। जिनके पास पैसा कम है, उनके लिए वही होटल अच्छे हैं।

शाम के धुंधलके में वरुणा निशिकान्त के साथ वैसे ही एक होटल में गयी।

एक कमरे का ताला खोलने के बाद अन्दर आ कर निशिकान्त ने वरुणा से कहा—वैठो। उसी तखत पर बैठ जाओ।

कमरे में सिर्फ एक तखत, एक टेबिल और एक कुर्सी थी। और कोई फर्नीचर नहीं था।

निशिकान्त ने कहा—होटल में कमरा तो तुम्हें बढ़िया मिला है। वहां कोई परेशानी तो नहीं है?

वरुणा बोली—नहीं।

—खाना कैसा देता है?

वरुणा ने कहा – ठीक ही देता है।

—अब तुमसे जो कहा है, कर सकोगी न? डर तो नहीं रही हो? जयसुन्दर बाबू देखने में बड़ा गम्भीर और रोबीला लगता है, लेकिन अन्दर ही अन्दर बड़ा डरपोक है। असल में उसके पास बहुत रुपया है, इसलिए बाहर से बड़ा रोबीला लगता है। लेकिन है बड़ा बेवकूफ। बड़ा कंजूस भी है। पत्नी बहुत पैसा खर्च करती है, इसलिए उसे घर पर रख कर खुद अलग फ्लैट में रहता है। यह सब तो तुमको पहले भी बता चुका हूं। बोलो, बताया है न?

—हां, बताया है।

—बताया है, लेकिन फिर इसलिए बता रहा हूं कि तुम्हें अच्छी तरह याद रहे।

वरुणा बोली—मुझे और कुछ रुपये दीजिए न।

—रुपये? पांच सौ रुपये तो तुम्हें पहले ही दे चुका हूं। पहले काम तो पूरा करो, उसके बाद तुम्हें और पांच सौ रुपये दूंगा। कुल हजार रुपये ही तो तुम्हें देने हैं। फिर अगर तुम्हारे काम से खुश होता हूं तो तुम्हें और पांच सौ रुपये दे सकता हूं। चलो, यह पांच रुपये देने का वादा करता हूं।

वरुणा का चेहरा फिर भी उतरा हुआ देख कर निशिकान्त ने कहा—क्या हुआ? मेरी बात पर विश्वास नहीं हो रहा है?

इस पर वरुणा बोली—और कुछ रुपये मिल जाते तो अच्छा होता।

—क्यों? वह पांच सौ रुपये से क्या किया?

वरुणा बोली—वह रुपया खर्च हो गया है।

—पांच सौ रुपये खर्च हो गये? उतने रुपये किसमें खर्च किये?

वरुणा बोली—कुछ उधार था, आते समय चुकता किया। जो रुपया बचा, उससे मैंने यह साड़ी खरीदी।

—तुम पर कैसा कर्ज था?

वरुणा बोली—वाह ! मेरे खर्च नहीं हैं ? मैं जिस मेस में रहती हूँ, वहाँ खाने का खर्च महीने में डेढ़ सौ रुपये पड़ता है। वह भी हम सब लड़कियाँ दाल-भात और साग-सब्जी खाती हैं, तब भी हरेक के पीछे इतना खर्च होता है। इससे ज्यादा हम कुछ भी नहीं खातीं। इसके अलावा सीट रेंट हरेक के लिए तीस रुपये है। यही हो गये हर महीने एक सौ अस्सी रुपये। फिर और भी तो खर्च हैं। इसलिए हर महीने बाकी बीस रुपये से पूरा नहीं पड़ता। उधार लेना पड़ता है। तब दूसरी लड़कियों से रुपया माँगती हूँ।

—अभी तक कोई नौकरी नहीं मिल सकी ?

वरुणा बोली—आप तो नहीं जानते कि आजकल नौकरी मिलना कितना मुश्किल है ! जो लड़कियाँ नाज-नखरे करना जानती हैं, उन्हीं को नौकरी मिलती है।

—लेकिन तुमने तो कहा है कि बी० ए० पास हो ?

वरुणा बोली—सिर्फ बी० ए० पास नहीं, स्टेनोग्राफर भी हूँ।

—तब तो और अच्छा है। लेकिन तुम जैसी क्वालिफायड लड़की को नौकरी नहीं मिलती, यह कैसे विश्वास हो सकता है ? इसके अलावा तुम देखने में भी अच्छी हो !

वरुणा बोली—इससे क्या होता है ? नौकरी के लिए मैंने सभी दफ्तरों में दरखास्त दी है। अखबार में विज्ञापन देख-देख कर कितनी जगह एप्लाई की है, लेकिन सिर्फ नाज-नखरे के बल पर मुझसे हजार गुना कम क्वालिफिकेशन वाली लड़कियों को नौकरी मिल गयी। मुझमें नाज-नखरे नहीं हैं तो कैसे नौकरी मिलेगी ? फैशन भी मैं नहीं कर सकती। मेरी साड़ी की हालत नहीं देख रहे हैं ? मैंने इसी लिए कहा न, मुझे और कुछ रुपये दीजिए। यहाँ बाजार से दो साड़ियाँ खरीद लूँ ! ऐसी साड़ी पहन कर जयसुन्दर बाबू को कैसे मोह सकती हूँ ?

—कितने रुपये चाहिए ?

वरुणा बोली—दो अच्छी साड़ियाँ और ब्लाउज खरीदने में ही दो सौ रुपये लग जायेंगे। फिर स्नो-पाउडर चाहिए ! उसके लिए भी पैसे की जरूरत है।

निशिकान्त ने जेब से मनीबैग निकाला।

कहा—ठीक है। अभी यह लो, बाद में और दूँगा।

इतना कह कर निशिकान्त ने बैग से एक सौ रुपये के तीन नोट निकाले और गिन कर वरुणा के हाथ में दिये। फिर कहा—तीन सौ ही दिये। नोट गिन लो।

वरुणा ने नोटों को गिन कर अपने बैग में रखा।

कहा—ठीक है। अब मैं जा रही हूँ। बाजार जाना है।

निशिकान्त बोला—इतनी जल्दी किस बात की ? फिर तुम अकेली क्यों

जाओगी ? मैं भी तुम्हारे साथ जा सकता हूँ। नयी जगह पर क्या तुम बाजार पहचान पाओगी ? इसके पहले कभी पुरी आयी तो नहीं !

वरुणा बोली—रिक्शेवाले से कहने पर वही मुझे बाजार ले जायेगा।

निशिकान्त बोला—लेकिन इतनी जल्दी क्यों कर रही हो ? क्या तुम्हारे पास साड़ी एकदम नहीं है ?

वरुणा बोली—है। लेकिन जयसुन्दर बाबू को अच्छी लगे, ऐसी साड़ी नहीं है। आप तो मेरी हालत के बारे में जानते हैं। क्या आपके मित्र ने मेरे बारे में आपसे कुछ नहीं कहा ?

निशिकान्त बोला—अरे, वह मेरा मित्र कहाँ है ? किसी जमाने में उससे जान-पहचान थी, बस ! बहुत दिन बाद अचानक उससे रास्ते में मुलाकात हो गयी। मैंने उससे कहा, मुझे कोई लड़की दे सकते हो ? तो उसने पूछा, लड़की क्या करोगे ? मैंने कहा, मेरे यहाँ नौकरी करेगी। तब वह तुम्हें मेरे पास लाया।

वरुणा ने कहा—मैं उस समय समझ न सकी थी कि कैसा काम है।

—तुमने अपने मेस की किसी लड़की से तो नहीं कहा कि कैसा काम है ?

वरुणा बोली—नहीं। मैंने उनसे सिर्फ इतना कहा है कि मैं एक नौकरी ले कर पुरी जा रही हूँ। उस समय मैं भी नहीं जानती थी कि कैसी नौकरी है। आपने तो बाद में सब बताया।

निशिकान्त बोला घबड़ाओ मत। फिलहाल यह काम तुम कर दो। सब कुछ ठीक-ठाक हो जायेगा तो मैं भी एक आफिस खोल कर बैठ जाऊँगा। तब अपने आफिस में तुम्हें अच्छी तनखाह पर रख लूँगा।

वरुणा बोली—देखिए, आप मुझे अब भी अच्छी तरह नहीं समझ पा रहे हैं, क्योंकि आप नहीं जानते कि कितनी गरीबी में मैं पली हूँ और घर से किस हालत में कलकत्ते आयी हूँ। कलकत्ते आ कर कितने लोगों से अपमानित हुई और मुँह बंद कर यह सब किस तरह बरदाश्त किया, यह सब मेरे अलावा कोई नहीं जानता ? इस लिए आपने जब यह काम देना चाहा, आगा-पीछा सोचे बिना मैं राजी हो गयी। यह नौकरी किये बिना मेरे लिए कोई चारा नहीं था !

यह कहते हुए वरुणा की आँखों से आँसू निकल आये।

निशिकान्त बोल पड़ा—अरे, तुम तो सचमुच रोने लगी ! दिल को इतना कमजोर कर लोगी तो तुमसे यह काम नहीं हो पायेगा। इसके लिए दिल को कड़ा करना पड़ेगा। होटल में तुमको इस तरह रहना होगा कि जयसुन्दर बाबू यह समझ जायें कि तुम बहुत चालाक-चतुर लड़की हो। नहीं तो तुम्हारी तरफ उनका मन कैसे खिंचेगा ?

वरुणा बोली—आप मुझे बता दीजिए कि क्या करना होगा ?

निशिकान्त बोला—कितनी बार बताऊँगा ?

—अगर वह हमारे होटल में न ठहरें ?

निशिकान्त ने कहा—उसके लिए तुम्हें सोचना नहीं है। मैंने गुणेश्वर को अलग बुला कर सब कुछ समझा दिया है। उसके हाथ पर दस रुपये का एक नोट भी रखा है। उसको बता दिया है कि कल वह सज्जन आयेंगे।

—आपको कैसे पता कि कल आयेंगे ?

—कल ही आयेंगे। अगर किसी कारण से कल नहीं आये तो परसों जरूर आयेंगे। बिना आये वह रह नहीं सकते। मैंने सब बंदोबस्त कर रखा है।

वरुणा बोली—तो कल ही आयेंगे ?

निशिकान्त बोला—मुझको तो लगता है, कल ही आयेंगे।

—आ कर अगर तीसरी मंजिल के किसी कमरे में ठहरते हैं ?

निशिकान्त ने कहा—तुम क्या समझती हो कि मैंने उसका इंतजाम नहीं किया है ? ऐसा इंतजाम किया है कि उसे ठीक तुम्हारे बगल वाले कमरे में रखा जायेगा, ताकि आते-जाते तुमको देख सके। तुम हर वक्त सज-धज कर रहना। समझ गयी, हर वक्त सज-धज कर रहना।

वरुणा बोली—इसी लिए अभी बाजार जाना चाहती हूँ। सजने लायक साड़ी-ब्लाउज मेरे पास नहीं हैं। बढ़िया स्नो-पाउडर-क्रीम भी नहीं है।

निशिकान्त बोला—चलो, मैं भी तुम्हारे साथ बाजार चलता हूँ। मैं देख-भाल कर अच्छी चीज तुम्हें खरीद दूँगा।

वरुणा बोली—लेकिन मुझे सचमुच बड़ा डर लग रहा है।

निशिकान्त बोला—डर किस बात का ? एक मर्द को तुम अपनी मुट्ठी में नहीं ला सकती ? मर्द एक औरत से क्या चाहता है, एक औरत में कौन सी चीज देखने पर उसे अच्छा लगता है, यह सब क्या तुम नहीं जानती ? अगर नहीं जानती तो एक औरत हो कर क्यों पैदा हुई थी ?

लजा कर वरुणा ने सिर नीचा कर लिया।

निशिकान्त ने कहा—क्या हुआ ? सिर झुकाये क्यों खड़ी हो गयी ? जवाब दो। चेहरा ऊपर करो।

चेहरा ऊपर करने की कोशिश में वरुणा ने दोनों हाथों में चेहरा छिपा लिया।

—देखो, इतना शरमाने से काम नहीं चलेगा। तुमने पाँच सौ रुपये पेशगी ली है। अभी तुमको तीन सौ रुपये दिये। फिर भी तुम्हें शरम लग रही है ?

वरुणा बोली—मुझसे न होगा निशिकान्त बाबू, मुझसे यह सब काम न होगा।

निशिकान्त बोला—इतना आगे बढ़ कर 'ना' कहने से काम नहीं चलेगा।

ट्रेन के किराये में कितना खर्च हो गया है ! अभी होटल का कितना चार्ज देना होगा ! अब अगर तुम पीछे हट जाओगी तो मुझे यह रुपया कौन देगा ?

—लेकिन मैंने पहले कभी ऐसा काम नहीं किया।

निशिकान्त बोला—तुम्हारी इतनी उम्र हो गयी है, तुमने अभी तक किसी से प्यार नहीं किया ? कभी किसी लड़के को नहीं चाहा ?

वरुणा चुप रही।

निशिकान्त बोला—क्या सोच रही हो ? जवाब दो।

थोड़ी देर न जाने क्या सोच कर वरुणा बोली—मुझे अपनी जिन्दगी में अभी तक किसी से प्यार नहीं मिला। बचपन में मेरी माँ मर गयी थी। उसके बाद बाप ने दूसरी शादी कर ली। सौतेली माँ मुझे फूटी आँखों देख नहीं सकती थी। बहुत सताती थी। जब मैं कुछ बड़ी हो गयी, तब किसी को कुछ बताये बिना कलकत्ते चली आयी। उसके बाद उन लोगों से मेरा कोई सम्पर्क नहीं है।

—तुम्हारे भाई-बहन नहीं हैं ?

वरुणा बोली—सौतेले भाई-बहन हैं। उनसे भी कोई सम्बन्ध नहीं है। इस दुनिया में मैं एकदम अकेली हूँ।

—फिर तुम पढ़-लिख कैसे गयी ? पैसा कहाँ से मिला ? कालेज में पढ़ने के लिए बहुत पैसा लगता है। वह किसने दिया ?

वरुणा बोली—ट्यूशन करके मैंने अपनी पढ़ाई का खर्च निकाला है। सुबह-शाम-रात मैं लड़कियों को पढ़ाती हूँ। उससे जो कुछ मिलता है, उसी से मैं मेस में रहने-खाने का खर्च चलाती हूँ। लेकिन ट्यूशन हर समय नहीं रहता। लड़कियाँ पास हो जाती हैं तो ट्यूशन बंद हो जाता है। तब फिर बेकार हो जाती हूँ। तभी परेशानी होती है।

इतना कह कर वरुणा रुक गयी। फिर बोली—मुझ पर दया कीजिए। मुझे जाने दीजिए। यह काम मुझसे न हो सकेगा।

निशिकान्त मुश्किल में पड़ गया। इतने दिनों तक सोच-समझ कर बनायी गयी योजना इस तरह विफल हो चली।

बोला—नहीं। यह कहने से काम न चलेगा। तुमको यह काम करना ही पड़ेगा!

—अगर पकड़ी गयी तो वह मुझे पुलिस के हवाले करेंगे।

निशिकान्त बोला—क्यों घबराती हो ? मैं किस लिए हूँ ? तुम क्यों इतना सोच रही हो ? क्या तुम समझ रही हो कि तुम्हें मुसीबत में डाल कर खिसक जाऊँगा ? मैं वैसा आदमी नहीं हूँ। तुम मुझे नहीं जानती, इसलिए इस तरह घबड़ा रही हो। मैंने जब तुम्हें यह काम सौंपा, तब सारी जिम्मेदारी मेरी

देखो वरुणा, तुम डरो मत। मैं अलग होटल में रह रहा हूँ, लेकिन समझ लो कि मैं हर वक्त तुम्हारे पास हूँ। तुम्हारे होटल की हर खबर मुझे बराबर मिलती रहती है।

वरुणा बोली—अगर वह मुझसे बोलना ही पसन्द न करें तो ?

—यह तो तुम पर निर्भर करता है। तुम उससे ऐसा व्यवहार करोगी कि वह लाख न चाहते हुए भी तुमसे बोलेगा। औरतों के मामले में जयसुन्दर बड़ा कमजोर है। समझती नहीं, इसी लिए वह अपनी पत्नी से अलग रहता है। देख लेना, तुम अगर उसकी तरफ देख कर एक बार मुस्करा दोगी तो वह तुम्हारे आगे-पीछे घूमने लगेगा। लेकिन तुम्हें भी ऐसा हाव-भाव दिखाना पड़ेगा कि मानो तुम उस पर लट्टू हो। उसके बाद फिल्मी ड्रामा करोगी। कभी तो फिल्म देखी होगी ?

वरुणा बोली—नहीं। मैं फिल्म नहीं देखती।

—क्या ? तुम फिल्म नहीं देखती ?

वरुणा फिर बोली—नहीं।

निशिकान्त को जरा आश्चर्य हुआ। मानो वह वरुणा की बात पर विश्वास न कर सका। पूछा—क्यों ? फिल्म क्यों नहीं देखती ? आजकल तो सभी लड़कियाँ फिल्म देखती हैं।

वरुणा बोली—हाँ। सभी लड़कियाँ देखती हैं। लेकिन मेरे पास इतना पैसा कहाँ कि फिल्म देखूंगी ?

—चलो, फिल्म नहीं देखती न सही, लेकिन उपन्यास तो पढ़ती होगी ?

वरुणा बोली—पिताजी मेरा उपन्यास पढ़ना पसन्द नहीं करते थे।

निशिकान्त बोला—मैं तो तुमको ले कर परेशान हो गया वरुणा। अब तुम्हारी जगह किसी दूसरी लड़की को लाया भी नहीं जा सकता। इतना समय भी नहीं है। अब जो कुछ करना हो, तुम्हीं करो।

थोड़ा रुक कर फिर कहा—अब जैसे भी हो, तुम उसको अपनी मुट्ठी में करो। बस, इतना कर दो।

वरुणा बोली—अगर मुझसे न हो सका तो ?

निशिकान्त बोला—तुम पहले से क्यों घबड़ाने लगी ? कोशिश तो करके देखो। अगर न हो सके तो मैं बता दूंगा कि कैसे होगा। मैं तो यहीं हूँ। बस, तुम इतना याद रखो कि जयसुन्दर बाबू रुपये का बड़ा लालची है। तुम्हें उस लालची को अपने वश में करके उससे रुपया ऐंठना होगा।

अचानक बाहर से किसी ने कमरे के दरवाजे की कुंडी खटखटायी।

निशिकान्त ने आवाज दी—कौन ?

—चाय लाऊँ साहब ?

निशिकान्त ने दरवाजा खोला।

वरुणा से पूछा—चाय पियोगी ?

—नहीं। वरुणा बोली।

निशिकान्त बोला—ठीक है। हम यहाँ कुछ नहीं खायेंगे। बाहर खा लेंगे।

होटल का बच्चा नौकर चला गया।

निशिकान्त ने कुरता पहन कर पूछा—आज दोपहर में क्या खाया ? खाना बढ़िया मिला था न ?

वरुणा बोली—हाँ।

निशिकान्त बोला—चलो। तुम्हें क्या-क्या जरूरत है, खरीद लो।

कमरे में ताला लगा कर निशिकान्त वरुणा के साथ बाहर निकला।



जयसुन्दर बाबू जल्दी-जल्दी तैयार हो गये।

होटल का नौकर किकर चाय-नाश्ता और मिठाइयाँ दे गया।

लेकिन जयसुन्दर बाबू ज्यादा नहीं खा सके।

असल में जयसुन्दर बाबू खाने के लिए पुरी नहीं आये थे। और न घूमने के लिए। उस समय उनको दूसरी ही चिन्ता सताने लगी थी।

किकर ने पूछा—और एक कप चाय दूँ ?

—आपने तो मिठाई एक भी नहीं ली ? कुछ भी नहीं खाया ? किकर ने फिर कहा।

जयसुन्दर बाबू बोले—अभी भूख नहीं है।

यह कह कर जयसुन्दर बाबू उठे। फिर कमरे के बाहर आ गये।

किकर बाहर खड़ा था।

बोला—दरवाजे में ताला लगा दें सर। ताला लगा कर चाभी अपने पास रख लें।

जयसुन्दर बाबू ने वैसा ही किया।

उसके बाद जयसुन्दर बाबू सीढ़ी उतर कर नीचे आ गये। नीचे आ कर उन्होंने चारों तरफ निगाह दौड़ायी। लगा कि सभी कमरों में बोर्डर हैं। लेकिन उस समय अधिकांश बोर्डर बाहर थे। सम्भवतः वे समुद्र-स्नान करने गये थे।

सदर दरवाजे से बाहर निकलते ही समुद्री पवन के झोंके ने आ कर

बाबू को मानो परेशान कर दिया। उन्होंने सीधे सामने की तरफ देखा। जितनी दूर निगाह गयी, केवल जल ही जल दिखाई पड़ा।

इसके पहले जयसुन्दर बाबू कभी पुरी नहीं आये थे। शायद इस बार भी नहीं आते। लेकिन उसी निशिकान्त के कारण आना पड़ा। सारा काम-काज छोड़ कर निशिकान्त के चक्कर में यहाँ आये।

एक-एक बार हवा का झोंका आने लगा और उसी के संग महीन बालू जयसुन्दर बाबू के मुँह में भरने लगी।

जयसुन्दर बाबू ने पीछे मुड़ कर देखा।

समुद्र के किनारे-किनारे कतारों में मकान थे। देखने से लगा कि वे सब होटल हैं। सामने साइनबोर्ड लगा था। जयसुन्दर बाबू आगे बढ़े जा रहे थे। उन्होंने सोचा, नहीं, लौट कर एकदम पीछे से शुरू किया जाय।

जयसुन्दर बाबू एक होटल के सामने जा खड़े हुए। उसके बाद दरवाजे से अन्दर गये।

सामने एक आदमी मिला तो जयसुन्दर बाबू ने पूछा—होटल के मैनेजर कहाँ मिलेंगे?

उस आदमी ने कहा—बायें हाथ सीधे चले जायँ। सामने मैनेजर मिल जायेंगे।

जयसुन्दर बाबू ने वही किया। वहाँ एक कमरे में टेबिल के सामने एक सज्जन बैठे थे।

वहीं जयसुन्दर बाबू गये।

मैनेजर ने पूछा—बताइए, क्या चाहिए?

जयसुन्दर बाबू बोले— मैं एक आदमी की तलाश कर रहा हूँ।

—बताइए। किसको चाहिए? क्या नाम है?

—निशिकान्त दास। मैं यह पता करने आया हूँ कि वह इस होटल में ठहरे हैं या नहीं?

मैनेजर ने कहा—निशिकान्त दास? बता सकते हैं, वह कब आये हैं?

—यह तो नहीं बता पाऊँगा। लेकिन इसी हफ्ते आये हैं। सही तारीख नहीं जानता।

—आप बैठें। मैं देखता हूँ।

यह कह कर मैनेजर रजिस्टर के पन्ने पलटने लगे।

बड़ा भारी रजिस्टर था। कब कौन इस होटल में आया है, उसका पूरा रिकार्ड उस रजिस्टर में मौजूद था।

लेकिन देर तक खोजने के बाद भी निशिकान्त नाम नहीं मिला। पूरा रजिस्टर

देख लेने के बाद मैनेजर ने कहा—उस नाम का कोई आदमी इस होटल में नहीं आया है।

जयसुन्दर बाबू कुर्सी पर बैठे थे। अब उठे।

मैनेजर ने कहा—आप दूसरे होटल में पता कीजिए।

जयसुन्दर बाबू छोटा सा नमस्कार कर बाहर निकले।

समुद्र के किनारे उस समय अच्छी-खासी भीड़ थी। मजे की धूप निकल आयी थी। उसी के संग तेज हवा चल रही थी। तमाम लोग समुद्र-स्नान कर रहे थे। उनमें औरत-मर्द-बच्चे सभी थे। लेकिन पुरुषों की संख्या अधिक थी। एक जगह कुछ मेम-साहब स्वीमिंग कॉस्ट्यूम पहन कर तैरते हुए गहरे पानी में आ कर नहा रहे थे।

फिर एक होटल सामने ही दिखाई पड़ा।

जयसुन्दर बाबू रुक गये। उन्होंने साइनबोर्ड को अच्छी तरह पढ़ लिया। उसके बाद वह सीधे अन्दर गये।

सामने एक सज्जन टेबिल पर खाता-बही सजाये बैठे थे।

जयसुन्दर बाबू उस सज्जन के पास गये।

बोले—आपके होटल में निशिकान्त दास नाम का कोई है?

—निशिकान्त दास? जरा रुकिए। रजिस्टर देखना पड़ेगा।

यह कह कर वह सज्जन होटल का रजिस्टर देखने लगे।

फिर पूछा—बतायेंगे, यह निशिकान्त दास कब पुरी आये हैं?

जयसुन्दर बाबू बोले—यह तो नहीं बता पाऊंगा। लेकिन इसी हफ्ते आये हैं। इसके पहले नहीं।

मैनेजर ने रजिस्टर बंद कर कहा—माफ कीजिए। उस नाम के कोई सज्जन हमारे यहां नहीं आये।

—अच्छा। नमस्कार।

जयसुन्दर बाबू फिर उसी रास्ते से बाहर निकले।

पैदल चलते-चलते जयसुन्दर बाबू थक चुके थे।

बाहर धूप की तपन बढ़ने लगी थी। लेकिन समुद्री हवा में भरपूर नमी रहने के कारण धूप की तपन बुरी नहीं लग रही थी।

जयसुन्दर बाबू को बहुत दिनों से पैदल चलने की आदत नहीं थी। इस लिए उनको तकलीफ हो रही थी। लेकिन पहले वह कितना पैदल चलते थे। कालीघाट से पैदल चल कर बड़े बाजार में राधेश्याम अगरवाल की कोठी तक आते थे।

राधेश्याम अगरवाल की बात याद आते ही जयसुन्दर बाबू को कलकत्ते की बा
याद आयी। सचमुच इस संसार में क्या-क्या नहीं होता है! निशिकान्त ने उस
राधेश्याम अगरवाल की हत्या कर दी। इस पाप का दंड एक दिन निशिकान्त क

भोगना ही पड़ेगा। फिर दंड तो उसे मिला है। दस साल जेल काटना क्या कम है ? लेकिन नहीं, निशिकान्त के लिए वह कुछ भी नहीं है। उसे तो फाँसी से लटकाना चाहिए था।

जयसुन्दर बाबू अपने जीवन के प्रारम्भ में जब तरक्की करने लगे थे, तभी धूमकेतु की तरह निशिकान्त का उदय हुआ था। जयसुन्दर बाबू जो जीवन में एकाकी हो गये और उनकी गृहस्थी छिन्न-भिन्न हो गयी, इसके लिए कौन जिम्मेदार है ? यही निशिकान्त न !

कहाँ चली गयी कमला और कहाँ चले गये अजय और विजय। जयसुन्दर बाबू सबसे अलग-थलग हो कर रह गये। यह सब तो निशिकान्त के परामर्श से हुआ। हालांकि उससे 'बोस एण्ड कम्पनी' की पूंजी बढ़ी और जयसुन्दर बाबू की गरीबी जीवन भर के लिए दूर हुई। उसी की बदौलत उनके पास मकान हुए और कारें हुईं। उसी रुपये के कारण उन्हें कलकत्ते के धनी समाज में प्रवेश मिला।

लेकिन निशिकान्त न आता, तब भी तो जयसुन्दर बाबू के पास रुपया होता। बाद में वही निशिकान्त उनके सर्वनाश के लिए साजिश करने लगा। फिर तो जयसुन्दर बाबू समझ गये कि जब तक निशिकान्त जिन्दा रहेगा, मुझे परेशान होना पड़ेगा। अब निशिकान्त को बरदाश्त नहीं किया जा सकता। भला-बुरा कोई न कोई फैसला करना ही पड़ेगा। इसी लिए सारा काम-काज छोड़ कर जयसुन्दर बाबू पुरी आये थे।

एक रिक्शा सामने से आ रहा था। जयसुन्दर बाबू एक किनारे हट कर खड़े हो गये। रिक्शा भी रुक गया।

रिक्शावाले ने पूछा—मन्दिर जायेंगे बाबू ?

—मन्दिर ?

जयसुन्दर बाबू ने एक बार सोचा कि रिक्शा कर लें या नहीं।

कहा—सब होटलों को घुमा कर दिखाने में कितना लोगे ?

—पांच रुपये लूंगा साब।

—अच्छा, चलो।

कह कर जयसुन्दर बाबू रिक्शे पर बैठ गये। रिक्शे पर बैठने से बड़ा आराम मिला। सूखी बालू पर जूता पहन कर चलने में बड़ी तकलीफ होती है। फिर पैदल चलने में समय भी नष्ट होता है।

रिक्शा चला जा रहा था। जयसुन्दर बाबू चारों तरफ देखते जा रहे थे। चारों तरफ चमचमाती धूप थी।

जयसुन्दर बाबू ने सोचा, कलकत्ते में अब तक मेरे आफिस में मैनेजर सुशीतल बाबू ने काम शुरू कर दिया होगा। दुखमोचन फाटक के पास स्टूल पर जरूर बैठा

होगा। आज टाइपिस्ट निरापद के पास क्या काम होगा? शायद वह बैठा-बैठा अखबार पढ़ रहा है।

ये लोग कुछ भी काम नहीं करते। फिर भी इनको रखना पड़ता है। एक आफिस रखने के लिए इनको भी रखना जरूरी है। जयसुन्दर बाबू ने सोचा। आफिस न रखने पर लोग तरह-तरह का संदेह करते हैं। इतने रुपये का लेन-देन कैसे हो रहा है? बाहर से जो रुपया आता है, वह किसके नाम से आता है? वह रुपया जयसुन्दर बाबू के नाम नहीं, उसी आफिस के नाम आता है। फिर इनकम टैक्स वालों को खर्च दिखाना पड़ता है। आफिस न हो तो वह खर्च कैसे दिखाया जाय?

जयसुन्दर बाबू ने सोचा, निशिकान्त को जो रुपया देता था, उसको आफिस के खर्च में दिखाया जाता था। उससे जयसुन्दर बाबू को भी सुविधा थी और निशिकान्त को भी। निशिकान्त ने जिन्दगी में कभी इनकम टैक्स नहीं दिया। लेकिन उसने हमेशा अच्छी आमदनी की। मकान की दलाली और खून-कत्तल कर उसने जो पैसा कमाया, वह हमेशा काला होता रहा। वह रकम किसी भी हिसाब में दर्ज नहीं हुई।

—साब, यह भी एक होटल है।

जयसुन्दर बाबू रिक्शे से उतरे। फिर उस होटल के अन्दर गये। फिर निराश लौट आये। फिर रिक्शे पर बैठे।

अब जयसुन्दर बाबू ने रिक्शेवाले से कहा—बस करो। अब होटल ले चलो।

—कौन होटल बाबू?

—होटल सागर।

रिक्शावाला जयसुन्दर बाबू को ले कर चलने लगा।

जयसुन्दर बाबू रिक्शे पर बैठ कर निशिकान्त के बारे में ही सोचते रहे। इसी निशिकान्त के कारण उनको अपना काम-काज छोड़ कर पुरी आना पड़ा। उन्होंने तय कर लिया कि निशिकान्त को पकड़े बिना मैं कलकत्ते नहीं लौटूंगा। इससे मेरा चाहे जितना नुकसान हो जाय, बरदाश्त कर लूंगा।



'होटल सागर' के मालिक शेखर वावू का भाग्य वड़ा अच्छा है। वीस वर्ष पहले उन्होंने होटल का व्यवसाय शुरू किया था, जो आज तरक्की करते-करते इस हालत में पहुँचा है।

शेखर वावू वस वैठे-वैठे वही-खाता देखते हिसाव जोड़ते रहते हैं। वह मन ही मन हिसाव लगाते हैं कि मेरे पास कितने रुपये हो गये हैं। मुनाफे की रकम को वह वैंक में नहीं डालते। उस रकम से वह अपनी पूँजी को वढ़ाते हैं।

पहले होटल का मकान इकमंजिला था। वाद में उसे दुमंजिला वनाया गया। उसके वाद उसे तिमंजिला किया गया। होटल के कमरों में फर्नीचर भी वढ़े। उन पर नयी पालिश की गयी।

उस दिन भी शेखर वावू हिसाव का खाता देखने में व्यस्त थे। तभी उनको कुछ याद आया तो उन्होंने किंकर को वुलाया।

किंकर आया तो शेखर वावू ने पूछा—क्यों, वारह नंवर की वोर्डर अभी तक नहीं आयी ?

—आयी है मालिक।

—तो खाना क्यों नहीं खाया ? खाया है ?

किंकर वोला—मैंने पूछा था। लेकिन वताया कि वाहर खा कर आयी हूँ। होटल में नहीं खाऊँगी।

इतनी देर वाद शेखर वावू को याद आया। हाँ ! दोपहर में एक आदमी आया था और वह महिला उसी के साथ निकली थी।

किंकर वोला—शायद शहर में कुछ सामान खरीदने गयी थी। जव लौटी तव देखा कि उसके हाथ में साड़ी का पैकट है।

शेखर वावू वोले—ठीक है।

फिर उन्होंने पूछा—और ग्यारह नंवर कमरे के सज्जन ? जयसुन्दर न क्या उनका नाम है ? वह ?

किंकर वोला—वह तो आज आते ही कपड़े वदल कर दोपहर में कहीं निकले थे। उन्होंने दोपहर में यहीं खाना खाया था। उसके वाद चाय पी कर निकले हैं। अभी तक नहीं लौटे।

सिर्फ ग्यारह और वारह नंवर नहीं, वीस, इक्कीस, वाईस, पचीस, जितने

कमरे हैं, सबके बोर्डरों की खोज-खबर रखनी पड़ती है। शेखर बाबू की चारों तरफ निगाह रहती है। किसने खाया, किसने नहीं खाया, शेखर बाबू हर बात की जानकारी करते रहते हैं।

शेखर बाबू किंकर से पूछा-ताछ कर ही रहे थे कि तभी उन्होंने देखा, ग्यारह नंबर के बोर्डर बाहर से आ रहे हैं।

—अरे, ग्यारह नंबर आ रहे हैं। पूछ लो किंकर, कब खाना खायेंगे? शेखर बाबू ने किंकर से कहा।

भाग कर जयसुन्दर बाबू के पास जा कर किंकर ने पूछा—सर, आपका खाना तैयार है। खायेंगे?

जयसुन्दर बाबू ने पीछे मुड़ कर कहा—ठीक है, लाओ। मैं अभी आता हूँ।

इतना कह कर जयसुन्दर बाबू सीढ़ी चढ़ने के बाद अपने ग्यारह नंबर कमरे की तरफ बढ़े। बारह नंबर कमरा पार कर ग्यारह नंबर में जाना पड़ता है।

बारह नंबर कमरे के सामने से जाते समय जयसुन्दर बाबू को एक दृश्य दिखाई पड़ा। उस दृश्य में कुछ तो आकर्षण था ही, क्योंकि पल भर के लिए उनके पाँव रुक गये।

यह लड़की, यानी बारह नंबर रूम की बोर्डर, उस समय आईने में अपना चेहरा देख रही थी। उसकी पीठ दरवाजे की तरफ थी। लेकिन उसकी आँखें अचानक जयसुन्दर बाबू की तरफ देख कर झुक गयीं।

जयसुन्दर बाबू ने भी संयोग से उस युवती की तरफ देखा।

दोनों की आँखें मिलीं, लेकिन उस शीशे के माध्यम से।

लेकिन जयसुन्दर बाबू के शिष्टता-बोध को गवारा न हुआ तो उन्होंने आँखें फेर लीं। फिर वह जिस तरह अपने कमरे की तरफ जा रहे थे, चलते चले गये। लेकिन उस पल भर में वह जो कुछ देख सके, उसी से समझ गये कि यह युवती देखने में अच्छी है।

फिर भी जयसुन्दर बाबू यह समझ न सके कि उस लड़की ने अपने कमरे के दरवाजे को खुला क्यों रख छोड़ा है! सजे-धजे कोई बात नहीं, लेकिन दरवाजा खुला रखे बिना क्या सजा-धजा नहीं जा सकता? लोगों को दिखा कर उस तरह मेक-अप करना जयसुन्दर बाबू को अशोभनीय लगा।

अपने कमरे के दरवाजे का ताला खोल कर जयसुन्दर बाबू अन्दर गये। उसके बाद उन्होंने बत्ती जलायी।

फिर जितनी देर में जयसुन्दर बाबू ने कपड़ा बदल लिया, उतनी देर में किंकर लौट आया।

आते ही किंकर ने कहा—सर, आपका खाना तैयार है। चलें।

घूम-घूम कर जयसुन्दर बाबू थक गये थे। कई होटलों में जा कर उन्होंने निशिकान्त का पता लगाया था। उसी काम से वह दोपहर में निकले थे और शाम को भी। लेकिन निशिकान्त का कहीं पता नहीं चला।

कल रात को ट्रेन में ठीक से नींद नहीं आयी थी। इस लिए जयसुन्दर बाबू ने सोचा, आज अच्छी नींद आयेगी। खाना खा कर ही लेट जाऊँगा।

थकावट के मारे जयसुन्दर बाबू यह समझ न सके कि उन्होंने क्या खाया और वह कैसा लगा। सामने खाना परोसा गया था, इस लिए वह एक-एक चीज मुंह में डालने लगे।

किंकर पास ही खड़ा था।

उसने कहा—एक रोटी और लीजिए सर। महाराज, रोटी लाओ।

जयसुन्दर बाबू बोले—नहीं।

यह कह कर जयसुन्दर बाबू थाली छोड़ कर उठे। हाथ-मुंह धोने के बाद वह फिर सीढ़ी चढ़ कर दूसरी मंजिल में अपने कमरे की तरफ जाने लगे। अपने कमरे की तरफ मुड़ते ही उनको वे आँखें याद आयीं।

लेकिन नहीं। जयसुन्दर बाबू ने देखा कि बारह नंबर कमरे का दरवाजा बंद है। शायद वह लड़की खाना खा कर सो गयी है। पुरी के होटल में अकेली ठहरी है। कम हिम्मती नहीं है।

जयसुन्दर बाबू के साथ ही साथ किंकर भी ऊपर आया। उसने जयसुन्दर बाबू के सामने हाथ बढ़ाया।

—क्या है ?

—जी, पान है।

जयसुन्दर बाबू ने कहा—लेकिन मैं तो पान नहीं खाता।

किंकर जाने लगा।

जयसुन्दर बाबू ने एक बार उससे पूछना चाहा—बगल वाले कमरे में जो लड़की है, वह कौन है ?

पूछना चाह कर भी जयसुन्दर बाबू ऐसा पूछ न सके। उनके बगल वाले कमरे में चाहे जो रहे, उसके बारे में उनको कोई कौतूहल नहीं रहना चाहिए।

किंकर रुक गया था।

उसने पूछा—मुझसे कुछ कहेंगे ?

जयसुन्दर बाबू बोले—नहीं। हाँ, एक बात है। मुझे कल सवेरे जरा जल्दी जगा देना। घूमने निकलूंगा।

इतना कह कर जयसुन्दर बाबू ने दरवाजा बंद कर लिया।



आधी रात को न जाने कैसे शोरगुल से जयसुन्दर बाबू की नींद खुल गयी। इससे उन्हें बड़ा आश्चर्य लगा। इतनी रात को कौन शोर मचा रहे हैं? किस बात पर हो-हल्ला हो रहा है?

खिड़की खुली थी। बाहर से समुद्र की लहरों की उठाने वाली आवाज आ रही थी। लेकिन शोरगुल की आवाज के आगे वह आवाज मानो दबती गयी।

नहीं। उधर ध्यान नहीं दूँगा। जयसुन्दर बाबू ने सोचा। सम्भवतः वह अपने मन की उथल-पुथल को बाहरी शोरगुल समझ बैठे थे।

अपनी आदत के मुताबिक जयसुन्दर बाबू ने आवाज दी—नन्द, इतना शोरगुल क्यों हो रहा है?

लेकिन नहीं। जयसुन्दर बाबू को याद आया कि यह कलकत्ता नहीं है। यह तो पुरी है। यहाँ नन्द कहाँ से आयेगा? यहाँ नन्द होता तो उनके कमरे में पीने के लिए एक गिलास पानी रख देता!

फिर यह कलकत्ता होता तो क्या जयसुन्दर बाबू इतनी जल्दी सोने की तैयारी करते? कलकत्ता होता तो उनके घर लौटते-लौटते रात के बारह या एक बज जाता। शाम को वहाँ उनका कोई न कोई काम रहता है। इसके अलावा वह कितने ही क्लबों के मेम्बर हैं। रोटरी से ले कर लायन्स—सभी अच्छे क्लबों में उनको जाना पड़ता है। अच्छे क्लबों से मतलब है रईसों के, अमीरों के।

लेकिन थोड़ी ही देर बाद धम-धम आवाज होने लगी।

फिर तो जयसुन्दर बाबू उठ कर बैठ गये।

खिड़की खुली थी।

जयसुन्दर बाबू ने खिड़की से बाहर देखा। अरे! सवेरा हो गया है? आकाश में इतनी रोशनी क्यों दिखाई पड़ रही है?

खिड़की के पास जा कर जयसुन्दर बाबू ने बाहर झाँक कर अच्छी तरह देखा। सचमुच पूरब में सूरज निकला है।

जयसुन्दर बाबू के उठने में बहुत देर हो गयी थी! एक ही नींद में उन्होंने पूरी रात बिता दी थी।

दरवाजा खोलते ही जयसुन्दर बाबू ने देखा कि किंकर खड़ा है।

किंकर बोला—आपने तड़के ही जगा देने के लिए कहा था।

—हाँ। बहुत अच्छा किया कि जगा दिया। मैं तो सोया पड़ा था।

यह कह कर जयसुन्दर बाबू ने फिर दरवाजा बंद कर लिया। उसके बाद वह हाथ-मुँह धो कर तैयार हुए। फिर कपड़े बदल कर कमरे से निकले।

सवेरे घूमने निकलने का उद्देश्य यह था कि इसी बहाने अगर निशिकान्त से मुलाकात हो जाय तो बुरा क्या? जयसुन्दर बाबू ने सोचा कि अगर निशिकान्त पुरी आया है तो सवेरे जरूर टहलने निकलेगा। चाहे वह जिस होटल में ठहरा हो, सवेरे समुद्र किनारे तक जरूर जायेगा। बाहर से जो भी आता है, सवेरे समुद्र देखने जाता है। जयसुन्दर बाबू ने भी समुद्र किनारे टहलते रहने का निश्चय किया। अगर निशिकान्त दिखाई पड़ा तो उसे वहीं पकड़ा जा सकेगा।

दूसरी मंजिल से नीचे जाते समय जयसुन्दर बाबू ने बारह नंबर कमरे की तरफ मुड़ कर देखा।

उस समय भी बारह नंबर कमरे का दरवाजा बंद था।

जयसुन्दर बाबू ने सोचा, लड़की खूब सो रही है।

—चाय नहीं पियेंगे?

किंकर चाय का कप लिये एकदम सामने आ पहुँचा।

—आपको चाय देने जा रहा था।

जयसुन्दर बाबू ने चाय का कप हाथ में लिया। देखा, उधर वाले कमरे में उस समय बहुत भीड़ थी। सब लोग वहाँ बैठ कर चाय पी रहे थे। शायद सभी लोग हवाखोरी के लिए निकलेंगे। समुद्र की साफ हवा सेहत के लिए अच्छी है। सिर्फ जयसुन्दर बाबू के उठने में देर हो गयी थी। भोजन-कक्ष में बैठ कर चाय पीने वालों में बहुत से लोग समुद्र में नहाने वाले थे।

वहीं खड़े-खड़े जयसुन्दर बाबू ने चाय खत्म की। उनको समुद्र में नहाना नहीं था। सेहत सुधारने के लिए भी वह नहीं आये थे। तीर्थ-भ्रमण भी उनका उद्देश्य नहीं था। वह तो निशिकान्त की खोज में आये थे। वह उद्देश्य सफल होते ही कलकत्ते लौट जायेंगे। इस तरह समय नष्ट करना उनके लिए सम्भव नहीं है। उनके पास बहुत काम है। कलकत्ते में उनके तमाम काम रुके पड़े हैं।

चाय का कप रख कर जयसुन्दर बाबू निकले।

झुंड के झुंड विभिन्न उम्रों के औरत-मर्दों से समुद्र का किनारा भरा हुआ था। रेत उस समय चींटा लगी मिठाई की परात की तरह लग रही थी। जितनी दूर निगाह जाती थी, मनुष्य ही मनुष्य दिखाई पड़ते थे।

जयसुन्दर बाबू धीरे-धीरे उन लोगों के सामने से गुजरने लगे। हर एक चेहरे को वह अच्छी तरह देखते जा रहे थे। लेकिन एक भी चेहरा निशिकान्त का नहीं था। सभी दूसरे लोग थे।

बहुत से लोग पुण्य कमाने आये थे। फिर बहुत से लोग मुँह बाये जोर-जोर से सांसें ले रहे थे। सभी लोग अपने फेफड़ों को स्वस्थ बनाना चाहते थे।

जयसुन्दर बाबू ने सोचा, सचमुच इस दुनिया में कैसे-कैसे विचित्र लोग हैं। कोई स्वास्थ्य चाहता है तो कोई धन और कोई प्रतिष्ठा। इस दुनिया में किसी चीज की कमी होने पर काम नहीं चलता। सभी लोग सब कुछ चाहते हैं।

बहुत से लोग जयसुन्दर बाबू की तरफ देख रहे थे। जयसुन्दर बाबू उनमें से किसी को नहीं जानते थे। उनके लिए यह बड़ी अच्छी बात थी कि कोई जान-पहचान का नहीं मिल रहा था। उन्होंने भी मन ही मन मनाया कि किसी परिचित से मुलाकात न हो जाय।

घड़ी की तरफ देख कर जयसुन्दर बाबू समझ गये कि दिन काफी चढ़ गया है। समुद्र की रेत पर टहलते-टहलते न जाने कब दो घंटे बीत गये हैं। पैर भी दुखने लगे थे। उन्होंने सोचा कि बस, और नहीं। अब लौटना पड़ेगा। रेत पर चलने से पांवों में ज्यादा दर्द होता है। सड़क पर चलना इससे आसान है। वह सड़क पर आ कर चलने लगे।

—बाबू, मंदिर जायेंगे?

एक झुंड रिक्शावाले सवारी की आशा में कतार बांधे खड़े थे।

कल जो रिक्शावाला मिला था, बड़ा अच्छा था। जयसुन्दर बाबू ने सोचा। जब से वह पुरी आये थे, सभी उनसे अच्छा व्यवहार कर रहे थे।

जयसुन्दर बाबू ने कहा—नहीं भैया, मैं मन्दिर नहीं जाऊँगा। मैं तो हवा-खोरी के लिए निकला हूँ।

बात तो सही है। जयसुन्दर बाबू क्यों मन्दिर जायेंगे? उन्हें किस बात का दुख है? कौन सा पाप उन्होंने किया है। जो पापी है और दुखी है, वे मन्दिर जायें। जयसुन्दर बाबू तो अपने जीवन में सुखी हैं।

जयसुन्दर बाबू सचमुच अपने जीवन में सुखी थे। उनके दोनों बेटे अपने-अपने क्षेत्र में प्रतिष्ठित हो चुके थे। उनकी पत्नी भी अपने ठाकुर-देवता ले कर सुखी थी। वह भी अपनी 'बोस एण्ड कम्पनी' ले कर मजे में थे। उनको किसी बात की कमी नहीं थी तो वह मन्दिर जा कर देव-दर्शन क्यों करते? देवता से उनकी कोई मांग नहीं थी, कोई कामना भी नहीं।

होटल लौट कर जयसुन्दर बाबू ने घड़ी देखी। ग्यारह बज गये थे।

लेकिन होटल में कदम रखते ही जयसुन्दर बाबू चौंक पड़े। सीढ़ी से ऊपर जाने लगे तो पुलिसवालों को देख कर वह रुक गये। उन्हीं के कमरे के सामने भीड़ थी।

क्या हुआ? पुलिस क्यों आयी है?

जयसुन्दर बाबू को देख कर शेखर बाबू सामने आये।

बोले—आ गये ? आइए। देखिए, इधर क्या बवाल मचा है।

—क्या हो गया है ?

शेखर बाबू होटल के मालिक हैं। इस लिए उन्हीं के चेहरे पर ज्यादा परेशानी है।

बोले—आप तो ग्यारह नंबर में रहते हैं। आपके बगल वाले कमरे में एक महिला रहती हैं। उनका नाम है वरुणा चौधरी। कल तो आपने उनको देखा होगा ?

क्या जवाब दिया जाय, जयसुन्दर बाबू समझ न सके।

सिर्फ बोले—उस महिला के साथ क्या हुआ ?

—अरे साहब, वही महिला जहर खा कर आत्महत्या करने चली थी। फिर पुलिस बुला कर दरवाजा तोड़ा गया। बताइए, झमेला कम है ?

जयसुन्दर बाबू को कल की देखी वे दोनों आंखें याद आयीं। तभी उनको उस लड़की की दृष्टि न जाने क्यों अस्वाभाविक लगी थी।

पूछा—बच गयी या चल बसी ?

शेखर बाबू बोले—सवेरे से उसने दरवाज़ा नहीं खोला तो मुझे शक हुआ। तब मैंने फिकर से कहा तो वह दरवाजे पर दस्तक देने लगा। लेकिन तब भी दरवाजा नहीं खुला। अंत में पुलिस को खबर करने के लिए कहा। सोचा, अगर दरवाजा तोड़ना ही है तो पुलिसवाले आ कर अपने हाथ से तोड़ें।

जयसुन्दर बाबू ने कहा—फिर क्या हुआ ?

लेकिन शेखर बाबू इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सके। उधर से एक सज्जन गले में स्टेथिस्कोप लटकाये आ गये।

शेखर बाबू ने उस सज्जन से पूछा—कहिए डाक्टर साहब, कैसा देखा ?

डाक्टर साहब बोले—ठीक है। अब घबड़ाने की कोई जरूरत नहीं है। नींद की गोलियां खायी थीं उस लड़की ने, लेकिन मात्रा कुछ अधिक हो गयी थी। और कोई बात नहीं।

शेखर बाबू ने पूछा—बात कर रही है ? मुझे तो बड़ा डर लगा था।

डाक्टर साहब बोले—उस लड़की ने खुद बताया कि नींद की गोलियां खायी थीं।

—अब तो कोई खतरा नहीं है ? देखिए डाक्टर साहब, मैं होटल चला कर खाता हूं। अगर मेरे यहां कोई बोर्डर इस तरह मर जाय तो मेरे होटल की कितनी बदनामी होगी ?

होटल के तमाम बोर्डर ग्यारह नंबर कमरे में, जहां वह लड़की ठहरी थी, जा

कर जमा हो गये थे। डाक्टर साहब के निकल आते ही वे कमरे से निकले। दोनों पुलिसजन भी बाहर आये।

शेखर बाबू ने डाक्टर साहब को आठ रुपये दिये।

कहा—मैं तो बुरी तरह डर गया था डाक्टर साहब। अगर वह मर जाती तो मेरा सर्वनाश हो जाता। खैर, आज उसे खाने के लिए क्या दूंगा?

डाक्टर साहब ने आठ रुपये जेब में डाल कर सीढ़ी से नीचे उतरते हुए पूछा—यह महिला कौन है? होटल में अकेली क्यों आयी है? क्या इसके साथ कोई नहीं है?

शेखर बाबू बोले - लगता तो है कि इसके साथ कोई नहीं है। लेकिन आज इसे क्या खाने को दूंगा?

डाक्टर साहब ने कहा—इस वक्त सालिड फुड न देना ही ठीक रहेगा। अभी एक गिलास गरम दूध दीजिए। और कुछ देने की जरूरत नहीं है।

उसके बाद डाक्टर साहब ने शेखर बाबू को अलग बुला कर कहा—एक काम कीजिए। इन पुलिसवालों के हाथ में कुछ दे दीजिए। नहीं तो उस लड़की का चाहे जो हो, आपको बिलावजह परेशान होना पड़ेगा। मेरी भी फजीहत होगी। अगर मामला आगे बढ़ा तो बीसियों बार कचहरी का चक्कर लगाना पड़ेगा।

शेखर बाबू ने कहा—आपने सही कहा। मैं पुलिसवालों को सँभालता हूँ।

यह कह कर शेखर बाबू ग्यारह नंबर कमरे की तरफ गये। जयसुन्दर बाबू भी उनके साथ चले।

उस समय भी वहां लोगों की भीड़ जमा थी। सभी 'होटल सागर' के बोर्डर थे। वहीं दोनों सिपाही खड़े थे।

शेखर बाबू उन दोनों पुलिसवालों को बुला कर एक तरफ ले गये और बोले—चलें सर! मेरे आफिस में चलें।

सबने समझ लिया कि आफिस में ले जा कर शेखर बाबू उन पुलिसवालों को उनका पावना दे देंगे।

जयसुन्दर बाबू ने मौका पा कर उस युवती की तरफ देखा।

इतने में किंकर आ गया। शायद जयसुन्दर बाबू को देख कर ही वह आया।

किंकर बोला—और जरा देर हो जाती तो सर्वनाश हो जाता सर, बहुत बच गये हैं। अगर वह मर जाती तो हमारे होटल की कितनी बदनामी होती।

जयसुन्दर बाबू उस लड़की की तरफ देख रहे थे। चेहरा बड़ा गोरा है। उम्र बीस या ज्यादा से ज्यादा पचीस होगी। उससे अधिक नहीं। उसकी आँखों में उस समय भी नींद की खुमारी थी।

किंकर बोला—देखिए सर, पहले हमारे होटल में कभी ऐसा नहीं हुआ! यही

पहला है। कितने ही लोग यहाँ आते हैं, पाँच-सात दिन रह कर चले जाते हैं। लेकिन कभी ऐसा नहीं हुआ। हमने तो सोचा था कि बचेंगी नहीं, मर जायेंगी।

जयसुन्दर बाबू उस समय भी उस लड़की की तरफ एकटक देख रहे थे।

किंकर की बातें शायद जयसुन्दर बाबू के कानों में नहीं गयीं।

जयसुन्दर बाबू ने अचानक पूछा—इस लड़की के साथ कोई नहीं है?

किंकर बोला—जी नहीं। परसों एक सज्जन इनसे मिलने आये थे और यह उनके साथ बाहर गयी थीं। उसके बाद जब रात को लौटीं तो हाथ में एक पैकेट था।

—कौन मिलने आया था?

किंकर बोला—यह तो नहीं बता सकता।

—क्या उस सज्जन को खबर नहीं भिजवायी जा सकती?

किंकर बोला—कैसे खबर भेजें, बताइए? वह सज्जन कौन हैं, कहाँ रहते हैं, यह सब हम कुछ भी नहीं जानते।

शेखर बाबू फिर कमरे में आये। वह महिला कैसी है, यही देखने आये होंगे।

जयसुन्दर बाबू की तरफ देख कर शेखर बाबू ने कहा—बताइए, कैसा झमेला है! मैं होटल के धंधे के बारे में कह रहा हूँ। न जान, न पहचान, जो भी आता है, उसी को अपने यहाँ टिकाना पड़ता है। यह तो कहिए कि थोड़े में बच गये। कहीं फांसी लगा लेती तो हमारे ही हाथों में हथकड़ियां पड़तीं। अब आज रात भर में बढ़ई बुला कर इस दरवाजे की मरम्मत करानी पड़ेगी। सवेरे से मेरा कोई काम-काज न हो सका। कैसा-कैसा झमेला मेरे ही भाग्य से आता है!

तभी अचानक उस युवती ने आँखें खोलीं। धुंधली दृष्टि से वह सबको देखने लगी।

शेखर बाबू ने उसके पास जा कर पूछा—अब आपको कैसा लग रहा है?

उस लड़की ने कोई जवाब नहीं दिया। वह उसी तरह सूनी आँखों से देखती रही।

शेखर बाबू ने जयसुन्दर बाबू की तरफ देख कर कहा—जानते हैं, नींद की पन्द्रह गोलियां एक साथ खा ली थीं!

जयसुन्दर बाबू ने पूछा—आपको कैसे पता चला?

शेखर बाबू ने कहा—उन गोलियों की पत्तियाँ पुलिस ने आ कर ढूंढ़ निकालीं। फर्श पर पड़ी थीं। मुफ्त में मुझे डाक्टर को आठ रुपये देने पड़े और पुलिसवालों को सौ रुपये।

—क्यों, पुलिस को क्यों सौ रुपये देने पड़े?

शेखर बाबू बोले—वाह! पुलिसवाले तो ऐसे ही मौके की ताक में रहते हैं।

अगर उनको घूस न देता तो पता नहीं कितना झमेला भोगना पड़ता ! तब क्या होता ? फिर यह खबर अखबार में छप जाती तो मेरे ही होटल की बदनामी होती। दूसरे होटलवाले तो यही चाहते हैं । अगर किसी तरह यह होटल बदनाम हो जाय तो उन्हीं को फायदा है । आज के जमाने में कोई किसी का भला नहीं चाहता ।

तभी उस लड़की ने मानो कुछ कहना चाहा ।

शेखर बाबू ने उस लड़की तरफ देख कर पूछा—क्या चाहिए ?

लेकिन वह लड़की कुछ न बोली । शायद उसके पास कहने लायक कुछ नहीं था ।

शेखर बाबू ने पूछा—पानी पियेंगी ?

उस लड़की ने सिर हिला दिया ।

जयसुन्दर बाबू बोले—ठहरिए । मेरे कमरे में पानी है । लाता हूँ ।

यह कह कर जयसुन्दर बाबू अपने कमरे से एक गिलास पानी ले आये और उस लड़की को पिलाने लगे । पानी पिलाते समय उसका चेहरा बायें हाथ से थामना पड़ा ।

जयसुन्दर बाबू को उस लड़की का चेहरा बड़ा मुलायम लगा । आम तौर पर लड़कियों का चेहरा जितना मुलायम होता है, उससे ज्यादा मुलायम ।

पानी पिलाते समय थोड़ा पानी गिरा । गिरा तो एकदम उस लड़की के गले पर गिरा ।

जयसुन्दर बाबू ने धोती के खूँट से वह पानी पोंछ दिया ।

यह देख कर शेखर बाबू बोले—आप क्यों तकलीफ कर रहे हैं सर ? किंकर तो है, पिला देगा ।

उसके बाद किंकर की तरफ देख कर शेखर बाबू ने कहा—किंकर, खड़े क्यों हो ? पानी पिला दो न ।

जयसुन्दर बाबू ने शेखर बाबू की बातों पर ध्यान नहीं दिया । उन्होंने उस लड़की से पूछा—और पानी पियोगी ?

फिर भी उस लड़की ने कुछ नहीं कहा । वह जयसुन्दर बाबू की तरफ एकटक देखती रही ।

जयसुन्दर बाबू ने फिर उस लड़की के मुँह में पानी डाला ।

वह पानी भी उस लड़की ने पी लिया ।

फिर उस लड़की की तरफ देख कर जयसुन्दर बाबू ने पूछा—अब कैसा लग रहा है ?

उस लड़की ने सिर हिलाया ।

जयसुन्दर बाबू ने शेखर बाबू की तरफ देखा ।

कहा—थोड़ा दूध दिया जाता तो ठीक रहता।

कह कर जयसुन्दर बाबू ने जेब से दस रुपये का नोट निकाला। वह नोट किंकर की तरफ बढ़ाया और कहा—जरा चले जाओ भैया, दूध ले आओ।

शेखर बाबू बोले—लेकिन आपने क्यों रुपया दिया ? होटल में तो दूध है।

जयसुन्दर बाबू ने कहा—रहने दीजिए। यहाँ उसका कोई नहीं है। अगर हममें से कोई उसकी देखभाल न करे तो कौन करेगा ? इसका कलकत्ते वाला पता आपके पास है ?

शेखर बाबू बोले—कलकत्ते का पता कैसे रहेगा ? हमारे पास किसी का पता नहीं रहता।

—अगर रहता तो खबर भेजी जाती।

तब तक किंकर न जाने कहाँ से दूध ले आया।

जयसुन्दर बाबू ने किंकर से कहा—जरा गरम कर के नहीं लाये ? ठंडा दूध पिलाना ठीक न होगा।

शेखर बाबू बोले—हाँ-हाँ, गरम दूध देना ठीक रहेगा। जाओ किंकर, गरम कर के लाओ।

किंकर दूध गरम करने चला गया।

शेखर बाबू बोले—उधर मेरा बहुत सारा काम पड़ा हुआ है। तीस-तीस बोर्डर खायेंगे, उसका इंतजाम करना होगा और तभी यह झमेला हो गया। अब बताइए, मैं अकेला किधर-किधर सम्भालूँ ?

जयसुन्दर बाबू ने शेखर बाबू से कहा—आप अपने काम से जाइए। मैं तो यहाँ हूँ।

—लेकिन आपने भी अभी तक खाना नहीं खाया ! आप कब तक इसको ले कर पड़े रहेंगे ?

जयसुन्दर बाबू बोले—अगर कोई मरने लगे तो कौन खा सकता है ? कम से कम मैं तो नहीं खा सकता। यह पहले कुछ ठीक हो जाय तो मैं खाना खा लूँगा। आप दूसरे बोर्डरों को खिला दीजिए, तब तक मैं यहीं हूँ।

शेखर बाबू ने फिर कुछ नहीं कहा। वह अपने काम से कमरे के बाहर चले गये।

तभी उस लड़की ने अचानक आँखें खोल कर जयसुन्दर बाबू को देखा।

जयसुन्दर बाबू ने पूछा—अब कैसा महसूस कर रही हो ?

इतनी देर बाद वह लड़की बोली।

सिर हिला कर उसने कहा—ठीक हूँ।

जयसुन्दर बाबू ने पूछा—गरम दूध पियोगी ?

उस लड़की ने कहा—जी हाँ।

—तुम्हारे लिए दूध लाने गया है। गरम कर के ला रहा होगा। कलकत्ते में तुम्हारा कौन है, बता दो। मैं टेलीग्राम कर दूँगा। कौन है कलकत्ते में ? बता दो। कोई तो होगा।

उस लड़की ने सिर हिलाया।

कहा—नहीं।

—कोई नहीं है ? माँ-बाप या भाई-बहन कोई नहीं है ?

—जी नहीं।

—फिर ? फिर तुम क्या करने पुरी आयी हो ?

उस लड़की ने कोई उत्तर नहीं दिया।

जयसुन्दर बाबू बोले—क्या हुआ ? जवाब नहीं दे रही हो ? यहाँ क्यों आयी हो ? घूमने ?

—जी हाँ।

—लेकिन तुमने नींद की गोलियाँ क्यों खायी ?

कोई उत्तर न दे कर वह लड़की रोने लगी।

जयसुन्दर बाबू समझ गये कि एक साथ इतने सवाल करने का यह समय नहीं है।

इस लिए जयसुन्दर बाबू चुप हो गये।

किंकर गरम दूध लाया।

आते ही उसने जयसुन्दर बाबू से कहा—आप जा कर खाना खा लें। बहुत देर हो गयी है। मैं इनको दूध पिला रहा हूँ।

जयसुन्दर बाबू खाने के लिए नीचे गये।

खाना खाते समय भी जयसुन्दर बाबू उस लड़की के बारे में सोचने लगे। क्या खा रहे थे, उधर उनका ध्यान ही नहीं था।

शेखर बाबू जयसुन्दर बाबू के पास आ कर खड़े हो गये।

बोले—बताइए सर, अब क्या करना चाहिए ? अचानक वह लड़की आत्महत्या करने क्यों चली थी ? अगर वह सचमुच मर जाती तो मैं क्या करता ? मैं तो कहीं का न रहता।

जयसुन्दर बाबू बोले—मैंने उससे पूछा था कि कलकत्ते में [illegible] है, लेकिन उसने बताया कि कहीं कोई नहीं है।

—तो क्या वह मेरे होटल का बिल भी नहीं [illegible]

जयसुन्दर बाबू ने कहा—यह मैं कैसे बता [illegible] है, आप समझें।

शेखर वावू बोले—जी नहीं। मैं यों ही पूछ रहा हूँ। अगर वाद में उसने वताया कि मेरे पास पैसा नहीं है, तव क्या करूँगा? तव अगर उसे पुलिस के हवाले करता हूँ, तो भी लोग मुझे वदनाम करेंगे।

जयसुन्दर वावू खाना खा चुके थे। उठ कर उन्होंने हाथ-मुँह धो लिया।

उसके वाद ऊपर अपने कमरे में जाते समय जयसुन्दर वावू ने पूछा—वह किस लिए पुरी आयी है, आपको कुछ पता है?

शेखर वावू वोले—मैं कभी किसी से यह नहीं पूछता कि आप यहाँ किस लिए आये हैं। यह पूछना भी उचित नहीं है। कोई जगन्नाथ दर्शन करने आता है तो कोई घूमने। हाँ, अगर कोई वताता है तो सुन लेता हूँ। जव यह लड़की अकेली आयी थी, तभी मुझे संदेह हुआ था। लेकिन सोचा था कि शायद डाक्टर की सलाह पर जलवायु-परिवर्तन के लिए आयी है।

शायद शेखर वावू और भी कुछ कहते, लेकिन जयसुन्दर वावू रुके विना ऊपर जाने के लिए सीढ़ी की तरफ वढ़े।



निशिकान्त उस दिन अपने होटल में ही दिन भर था। वाहर कहीं नहीं निकला था।

होटल छोटा था और सस्ता भी।

दिन भर होटल में पड़े रहने से क्या होता, निशिकान्त का मन 'होटल सागर' में पड़ा था।

निशिकान्त जिस होटल में ठहरा था, उसका कोई नाम नहीं था। वाहर कोई साइनवोर्ड भी नहीं टँगा था। यह भी कोई होटल है, वाहर से देख कर समझने का उपाय नहीं था।

दिन भर निशिकान्त कहीं नहीं निकलता था।

लेकिन दिन भर होटल के एक कमरे में वंद भी नहीं रहा जा सकता। फिर भी निशिकान्त रहता था। उसे तकलीफ होती थी, लेकिन कोई उपाय नहीं था। दिन भर होटल के कमरे में वंद रहने के वाद शाम हो जाने पर थोड़ी देर के लिए वाहर निकलता था।

वाहर निकलने पर निशिकान्त वड़ी सावधानी वरतता था। जिधर रोशनी

रहती थी, उधर वह नहीं जाता था। जिधर जाने पर किसी का चेहरा नहीं दिखाई पड़ता, निशिकान्त उधर ही थोड़ा टहल आता था।

उस दिन समुद्र के किनारे चलते-चलते निशिकान्त एकदम 'होटल सागर' के सामने पहुँच गया। जहाँ समुद्र की लहरें आ कर टूट रही थीं, वहीं खड़े हो कर वह 'होटल सागर' की तरफ देखता रहा।

—अरे, विपिन बाबू ! आप कब आये ?

—बस, परसों आया।

—कहाँ ठहरे हैं ?

—इसी 'होटल सागर' में। और आप ?

—मैं तो 'विक्टोरिया' में ठहरा हूँ। 'होटल सागर' में खाने-पीने का कैसा इन्तजाम है ?

ये बातें निशिकान्त के कानों में पड़ीं।

टहलने निकल कर दो परिचित व्यक्तियों की मुलाकात हो गयी थी। दोनों कलकत्ते के थे। उनकी बातों से इसका पता चला।

निशिकान्त अँधेरे में खड़े हो कर दोनों की बातें सुनता रहा।

—आज हमारे होटल में बड़ा बवाल हो गया।

—क्या हुआ ?

—एक लड़की आत्महत्या करने चली थी।

—अरे ! फिर ? बच गयी ?

—हाँ। सुना कि नींद की पन्द्रह गोलियाँ खा ली थीं। फिर डाक्टर आया, पुलिस आयी और बड़ा झमेला हुआ। आखिर डाक्टर की दवा से वह लड़की बच गयी।

—क्या उस लड़की के साथ कोई नहीं था ?

—नहीं।

बात करते-करते दोनों सज्जन आगे निकल गये। फिर निशिकान्त उनकी बातें नहीं सुन सका।

निशिकान्त देर तक वहीं खड़े हो कर सोचता रहा। फिर तो मैंने वरणा से जो कुछ कहा था, उसने वही किया।

वरुणा पहले जरा डर गयी थी।

कहा था—एक साथ उतनी गोलियाँ खाने पर कहीं मर न जाऊँ ?

निशिकान्त ने कहा था—मर कैसे जाओगी ? अगर मर ही जाओगी तो ये गोलियाँ खाने के लिए क्यों कहता ? क्या तुमने पहले कभी नींद की गोली नहीं खायी ? -

वरुणा ने कहा था—नहीं।

निशिकान्त ने कहा था—अरे ! आजकल तो नींद की गोलियाँ सभी खाते हैं। जैसा जमाना पड़ा है, उससे नींद की गोलियाँ खाये बिना कैसे काम चल सकता है ?

—किस लिए नींद की गोली खाते हैं ?

निशिकान्त ने कहा था—मन की जलन मिटाने के लिए।

—कैसी जलन ?

निशिकान्त ने कहा था—आज लोगों के मन में जलन क्या कम है ? यही तुम अपनी बात देखो न। तुम्हारी इतनी उम्र हो गयी, लेकिन शादी नहीं हुई और न तुम्हें कोई नौकरी मिली। सिर्फ ट्यूशन करके तुम अपना खर्च चलाती हो। फिर भी मेस में रहने-खाने का खर्च पूरा करने के लिए तुम्हें उधार लेना पड़ता है। अगर पैसे की जरूरत न पड़ती तो तुम क्या यह काम करने के लिए तैयार होती ?

वरुणा समझ न पायी कि क्या उत्तर देगी। इसलिए वह चुपचाप निशिकान्त की बातें सुनती रही।

निशिकान्त ने फिर कहा था—तुम क्या समझ रही हो कि ऐसी लड़की तुम्हीं एक हो ? और कोई नहीं है ? हजारों, लाखों लड़कियाँ तुम्हारी तरह हैं ? फिर दूसरी तरह के लोग भी हैं। इस संसार में ऐसे भी लोग हैं, जिनके पास रुपये की कमी नहीं है। वे खुद भी नहीं जानते कि उनके पास कितने रुपये हैं। तुम नहीं जानती कि उन लोगों को कितना कष्ट है।

—उनको क्या कष्ट है ?

—वाह ! बहुत रुपये रहने में कष्ट नहीं है ? रुपये की चिन्ता से उन्हें रात को नींद नहीं आती। इसलिए उनको भी नींद की गोलियाँ लेनी पड़ती हैं। तुम नहीं जानती, जयसुन्दर बाबू भी नींद की गोलियाँ खाते हैं।

यह सब बातें वरुणा के लिए नयी थीं।

सब कुछ सुन कर वरुणा ने कहा था—लेकिन नींद की गोलियाँ खा कर उनको कैसे मुट्ठी में करूँगी, यह नहीं समझ पा रही हूँ।

—तुम मेरी आसान सी योजना नहीं समझ सकी ? जयसुन्दर बाबू के कमरे के बगल में तुम्हारा कमरा है। जब तुम नींद की गोलियाँ खा कर खूब सोती रहोगी, तब होटल के लोग समझेंगे कि तुमने आत्महत्या कर ली है। वे तुम्हारे कमरे का दरवाजा तोड़ कर अन्दर घुसेंगे। फिर जयसुन्दर बाबू भी तुम्हारे कमरे में आयेंगे। तब तक तुम्हारी गहरी नींद खुल जायेगी और लोग समझेंगे कि तुम बच गयी। फिर जयसुन्दर बाबू तुमसे पूछेंगे कि तुम क्यों आत्महत्या करने लगी थी ? तब तुम अपने दुख-दर्द के बारे में बताओगी। तुम कहोगी कि मेरा कोई नहीं है। मैं बहुत गरीब हूँ। एक-एक पैसे के लिए परेशान रहती हूँ।

—फिर ?

निशिकान्त ने वरुणा को समझाते हुए कहा था—फिर तुम ऐसा नाटक करोगी कि मानो आत्महत्या करने के अलावा तुम्हारे लिए कोई चारा नहीं है। समझ गयी ?

—लेकिन मैं क्यों आत्महत्या करने गयी, इसका क्या जवाब दूँगी ?

—कोई जवाब नही देना पड़ेगा। तुम केवल रोती रहोगी। फिर देखोगी कि जयसुन्दर बाबू के मन में तुम्हारे प्रति दया आयेगी। फिर तो बड़ी आसानी से काम बन जायेगा। देख लेना, मैं जैसा कह रहा हूँ, ठीक वैसा होगा। मैं तो जयसुन्दर बाबू को पहचानता हूँ। अगर तुम उनको अपनी मुट्ठी में कर लोगी तो कभी तुम्हें रुपये की कमी नही रहेगी।

निशिकान्त की पूरी बातें सुन लेने के बाद वरुणा थोड़ी देर न जाने क्या सोचती रही थी।

उसके बाद कहा था—फिर भी मुझे बड़ा डर लग रहा है।

निशिकान्त ने कहा था—डरने की कोई बात नही। मैं तो हूँ। फिर जब भी कोई परेशानी हो, तुम मेरे पास चली आना। मैं तुम्हें अकल बता दूँगा। अब निश्चिन्त हो कर जाओ।

दो साड़ियाँ और नींद की गोलियाँ निशिकान्त ने ही खरीद दी थी। फिर उसने वह सब वरुणा को दे कर उसे एक रिक्शे मे बिठा दिया था। रिक्शेवाले से कहा था—बहन जी को 'होटल सागर' तक पहुँचा दो।

समुद्र के किनारे उन लोगों की बातें सुन कर निशिकान्त जरा निश्चिन्त हुआ। सोचा, वरुणा ने अपनी बात रखी है! अब उसने नींद की गोलियाँ खायी हैं, पुलिस आयी है और दरवाजा तोड़ा गया है, तब सबने यही समझा होगा कि वह लड़की बहुत दुखी है। बेसहारा है। इसी लिए उसने आत्महत्या कर मुक्ति पाना चाहा था।

निशिकान्त समुद्र के किनारे उसी जगह खड़े हो कर 'होटल सागर' की तरफ देखने लगा।

'होटल सागर' की दूसरी मंजिल मे ग्यारह नंबर कमरे मे [illegible] में बारह नंबर कमरा था। ग्यारह नंबर में जयसुन्दर बाबू ठहरे [illegible] नंबर में वरुणा चौधरी ठहरी थी। ग्यारह नंबर [illegible] निशिकान्त समझ गया कि जयसुन्दर बाबू इस समय वरुणा के [illegible] के कमरे में रोशनी थी।

हे जगन्नाथ! हे प्रभु! मेरी योजना सफल हुई है [illegible] मन ही मन इस जगत् के नाथ को स्मरण किया।

सामने से एक रिक्शा जा रहा था। उसको बुला कर निशिकान्त उस पर बैठ गया।

बोला—स्वर्गद्वार चलो।



कई दिनों से जयसुन्दर बाबू बाहर नहीं निकल पा रहे थे।

शेखर बाबू उस दिन कह रहे थे—आप थे, इसलिए मुझे बड़ा सहारा मिला। नहीं तो मैं किस तरह डर गया था, क्या बताऊँ।

जयसुन्दर बाबू बोले—अब तो बहुत ठीक है।

शेखर बाबू ने फिर पूछा—कब कलकत्ते लौटेगी, कुछ बताया है?

जयसुन्दर बाबू को यह बात अच्छी नहीं लगी।

बोले—आप अपने रुपये के बारे में सोच रहे हैं? उसके लिए आपने जो खर्च किया है, वह मैं आपको दे देता हूँ। यह लीजिए।

शेखर बाबू ने अपनी गलती सुधार कर कहा—जी नहीं। मैं वह नहीं कह रहा हूँ।

जयसुन्दर बाबू बोले—मैं भी वह नहीं कह रहा हूँ। मैं यह कह रहा हूँ कि यह आपका व्यवसाय है। आपने पुलिस को रिश्वत दी है, डाक्टर को फीस दी है और दूध के लिए कितना खर्च किया है, वही सब मैं आपको दे रहा हूँ। यह दो सौ रुपये आप रख लीजिए। बाद में पूरा हिसाब हो जायेगा कि कितना खर्च हुआ है। अब बारह नंबर के लिए जो कुछ खर्च होगा, उसका बिल आप मेरे नाम बनायेंगे।

यह कह कर जयसुन्दर बाबू शेखर बाबू के टेबिल पर सौ रुपये के दो नोट रख कर ऊपर चले गये।

वरुणा उस समय बिस्तर पर चुपचाप बैठी थी।

जयसुन्दर बाबू सीधे वरुणा के कमरे में जा कर कुर्सी पर बैठ गये।

फिर पूछा—खाना खाया है?

वरुणा ने सिर हिलाया।

बोली—जी हां।

—आज क्या खाने को दिया था?

वरुणा बोली—मुर्गे की करी और भात।

—अच्छा लगा ? मैंने मैनेजर से कह दिया है कि रोज तुम्हें मुर्गा दिया जाय। मैंने और भी कह दिया है कि तुम्हारे रहने-खाने के लिए जो कुछ खर्च होगा, उसका बिल मेरे नाम से बनेगा। डाक्टर की फीस, पुलिस की रिश्वत और दरवाजे की मरम्मत का खर्च भी मैं दूँगा।

वरुणा बोली—मेरे कारण आपका बहुत पैसा खर्च हो गया। आपका कर्ज कैसे चुका पाऊँगी, समझ नहीं पा रही हूँ।

जयसुन्दर बाबू बोले—फिर वही सब कह रही हो ? जानती हो, मुझे यह सब सुनना अच्छा नहीं लगता।

—लेकिन मैं आपकी कौन होती हूँ कि आप मेरे लिए इतना पैसा खर्च करेंगे ?

जयसुन्दर बाबू बोले—एक इनसान अगर दूसरे इनसान की जरूरत पर कुछ खर्च न करे तो यह पैसा कमाना किस लिए है ? इनसान क्या सिर्फ अपने लिए जिन्दा रहता है ? समाज या मनुष्य के प्रति क्या उसका कोई कर्तव्य नहीं है ?

वरुणा बोली—मेरे लिए कोई कुछ करता है तो मुझे रुलाई आती है।

जयसुन्दर बाबू ने पूछा—क्या कभी किसी ने तुम्हारे लिए कुछ नहीं किया ?

वरुणा बोली—कौन करेगा भला ? इस दुनिया में मेरा कोई नहीं है।

—क्या कहती हो ? तुम्हारे माँ-बाप और भाई-बहन ? क्या उन लोगों ने भी तुम्हारे लिए कुछ नहीं किया ?

वरुणा बोली—अगर कोई रहता तो मुझे किस बात की चिंता होती ? अगर मेरा अपना कोई होता तो क्या मैं जहर खा कर आत्महत्या करना चाहती ?

जयसुन्दर बाबू ने पूछा—फिर तुम पुरी क्यों आयी ? यहाँ कौन सा काम पड़ गया ?

क्या जवाब देगी, वरुणा समझ न पायी। इस सवाल का जवाब निशिकान्त ने उसे नहीं बताया था।

जयसुन्दर बाबू ने फिर कहा—चुप क्यों हो गयी ? क्या बताने में संकोच हो रहा है ?

फिर वरुणा ने अपने मन में एक उत्तर गढ़ कर कहा—नौकरी की कोशिश में पुरी आयी थी।

—नौकरी की कोशिश कलकत्ते में न कर पुरी चली आयी ? कलकत्ते की तुलना में यह तो छोटा शहर है।

—जी हाँ। अखबार में विज्ञापन देख कर अप्लिकेशन भेजा था।

—कैसी नौकरी ?

—गर्ल्स स्कूल में टीचर की नौकरी। यहाँ आ कर उन लोगों

लेकिन नौकरी नहीं मिली। मैं बी. ए. पास हूँ। उन लोगों ने जो

माँगी थीं, सब मुझमें हैं। मैंने सोचा था कि नौकरी मिल जायेगी। लेकिन इंटरव्यू में उन लोगों ने मुझे रिजेक्ट कर दिया।

जयसुन्दर बाबू बोले—फिर उसी दुख से तुम आत्महत्या करने चली? तुम तो बड़ी सेंटिमेंटल लड़की हो।

वरुणा बोली—आप अगर मेरी स्थिति में होते तो आप भी आत्महत्या करने की बात सोचते। मेरे पास इतना रुपया नहीं है कि कलकत्ते लौट जाऊँ। आप शायद विश्वास नहीं करेंगे, लेकिन मेरे पास एक पैसा नहीं है।

यह कहते-कहते वरुणा फफक-फफक कर रोने लगी।

जयसुन्दर बाबू ने कहा—रोओ मत। रोओ मत। होटल में किसी को यह पता चल जाय तो पता नहीं वह क्या सोचे!

रोते हुए वरुणा ने कहा—आपने मुझे क्यों बचा लिया? बताइए, आपने क्यों बचा लिया? मैंने आपका कौन सा अहित किया है?

जयसुन्दर बाबू बोले—फिर रो रही हो? चुप हो जाओ। मेरी भी पहले क्या हालत थी, सुनोगी तो तुम्हें आश्चर्य होगा। मेरी भी हालत तुम्हारी जैसी थी। नौकरी नहीं थी। बेरोजगार था। किराये पर कमरा लेने के लिए पैसा नहीं था। कालीघाट के काली मन्दिर के चबूतरे पर रात को सोता था। गंगा में नहाता था और सड़क पर गमछा बेचा करता था।

वरुणा मन लगा कर जयसुन्दर बाबू की बातें सुन रही थी।

जयसुन्दर बाबू कहने लगे—अब जरा सोचो कि उस समय मेरी क्या दशा थी। सोच सकती हो कि उतने बड़े शहर कलकत्ते में मेरी सहायता करने वाला कोई नहीं था। अक्सर मैं अकेले में रोया करता था। तुम्हारी तरह एक दिन मैं भी आत्महत्या करने चला था।

वरुणा को बड़ा आश्चर्य हुआ यह सुन कर और उसके मुंह से निकला—आप भी?

—हाँ मैं। आज तुम देख रही हो कि मैं बहुत अमीर हूँ, लेकिन उस समय मैं भी नहीं सोच सका था कि कभी मेरी हालत सुधरेगी।

वरुणा बोली—फिर भी आपकी बात अलग है। आप मर्द हैं। लेकिन मैं? मैं तो औरत पैदा हुई हूँ। क्या कभी मेरे भाग्य में सुख होगा?

जयसुन्दर बाबू बोले—निराश क्यों होती हो? निराश होना ही पाप है। मैंने अपने जीवन में सिर्फ इतना सीखा है कि किसी भी हालत में मनुष्य को निराश नहीं होना चाहिए। वह दिन जरूर आयेगा जब तुम्हारा विवाह होगा, अपना घर होगा और भाग्य में है तो तुम भी समाज में सिर ऊँचा करके खड़ी हो सकोगी। उस समय शायद तुम मुझे पहचान भी न पाओगी।

वरुणा बोली—आप क्या कह रहे हैं ? मैं इस जीवन में कभी आपको भूल नहीं सकती।

जयसुन्दर बाबू बोले—मुसीबत में पड़ने पर सभी ऐसा कहते हैं, लेकिन अच्छे दिन आने पर किसी को नहीं पहचान पाते। लोग अपने हमदर्दों को भूल जाते हैं।

वरुणा बोली—आप विश्वास कीजिए, मैं आपको कभी भूल नहीं सकती।

जयसुन्दर बाबू बोले—मैं तुम्हारी बात नहीं कर रहा हूं। लेकिन ऐसा होता है। अब रही मेरी बात। मेरी मुसीबत में जिसने भी मेरी मदद की, मैं उसको अभी तक नहीं भूल सका।

फिर जरा रुक कर जयसुन्दर बाबू बोले—अब तुम लेट जाओ। मैं अपने कमरे में जाऊँगा।

वरुणा बोली—मुझे आराम करने की जरूरत नहीं है।

जयसुन्दर बाबू बोले—ठीक है। मैं बाद मे आ जाऊँगा। इस समय मेरा एक काम है।

वरुणा बोली—क्या आप किसी काम से पुरी आये हैं ?

जयसुन्दर बाबू कुर्सी छोड़ कर खड़े हो गये थे।

बोले—हाँ। जिस तरह तुम नौकरी के लिए इंटरव्यू देने यहाँ आयी थी, उसी तरह मैं भी एक काम से आया हूं। नहीं तो मेरे पास इतना समय नहीं है कि यहाँ घूमने आऊँ। कलकत्ते में मेरा बहुत काम पड़ा हुआ है। लेकिन एक आदमी की तलाश में मुझे आना ही पड़ा।

—आप किसी को खोजने यहाँ आये है ?

जयसुन्दर बाबू बोले—हाँ। वह आदमी बड़ा शैतान है। उसका नाम निशिकान्त है। वह मेरा सर्वनाश करना चाहता है। सबके सामने वह मुझे अपमानित करना चाहता है। मुझे पता चला है कि वह पुरी आया हुआ है। इसी लिए हर होटल में उसे खोजता फिर रहा हूँ। खून करने के आरोप में उस पर मुकदमा चला था। आरोप सिद्ध होने पर उसे जेल जाना पड़ा था। इतने दिनों बाद वह जेल से छूटा है। जेल से छूटते ही उसने मुझे एक पत्र लिखा है। उस पत्र मे उसने मुझे धमकी दी है।

वरुणा ने पूछा—क्यों ? उसने आपको धमकी क्यों दी है ?

—इसका क्या कारण बताऊँ ? इस दुनिया में बुरे लोगों की कमी नहीं है। वह भी उन्हीं की तरह बुरा है। लेकिन तुम सोच भी नहीं सकती कि मैंने उसका कितना उपकार किया है !

वरुणा बोली—समझ गयी। आप जैसे सज्जन का भी शत्रु होता है।

जयसुन्दर बाबू बोले—इस शत्रुता का कारण सम्भवतः यही है कि मैं एक

कंगाल से अमीर बना हूँ। शायद यही मेरा बहुत बड़ा अपराध है। लेकिन उसके लिए मैंने रातदिन कितनी मेहनत की है और कितना पसीना बहाया है, उसका पता कोई नहीं रखता। तुम सोच रही हो कि इस दुनिया में तुम्हीं को दुख है। तुम अगर यह जानती कि मैंने कितना दुख सहा है तो शायद ऐसा न सोचती।

वरुणा बोली—मुझे माफ कर दीजिए।

—क्यों ? इसमें मेरे पास माफी माँगने की कौन सी बात हुई ? तुमने मेरा कौन सा नुकसान किया है कि मुझसे माफी माँग रही हो ?

वरुणा बोली—काश, मैं भी आपका कोई उपकार कर पाती !

जयसुन्दर बाबू बोले—ऐसा क्यों सोच रही हो ? मेरे पास किस बात की कमी है कि तुम मेरा उपकार करोगी ? फिर मैं किसी से उपकार लेना पसन्द भी नहीं करता। इसलिए मेरे जीवन में सिर्फ एक आदमी ने मेरा उपकार किया है।

—वह कौन हैं ?

—वह एक मारवाड़ी सज्जन हैं। जब मैं कंगाल था, तब उन्होंने मेरा उपकार किया था। उन्होंने मुझे सिखाया था कि जीवन में कैसे उन्नति की जाती है। उनका नाम है राधेश्याम अगरवाल। इस निशिकान्त ने उन्हीं की हत्या की है।

—अरे !

—हाँ। मेरे पास उसका सबूत है। लेकिन इस निशिकान्त का भाग्य बड़ा अच्छा है कि उस अपराध के लिए उसे फाँसी से लटकना नहीं पड़ा। निशिकान्त को सन्देह का लाभ मिला था। इसलिए फांसी न हो कर दस वर्ष जेल काटने की सजा हुई थी। इसी शैतान निशिकान्त को ढूंढ़ निकालने के लिए मैं पुरी आया हूँ।

वरुणा बोली—फिर मैं आपसे बैठने के लिए नहीं कहूँगी। आप अपना काम कीजिए। मैं यह नहीं समझ सकी थी कि आपके लिए इतनी बड़ी समस्या है !

जयसुन्दर बाबू बोले—मैं भी पहले तुम्हारी तरह सोचता था कि जिसके पास पैसा नहीं है, उसी को कष्ट उठाना पड़ता है और जिसके पास पैसा है, उसे कोई कष्ट नहीं रहता। लेकिन अब देख रहा हूँ कि ठीक इसका उलटा है। तुम तो जानती हो कि इस संसार में मेरा कोई नहीं है। अपना कहने के लिए जो लोग हैं भी, उन सबने मुझे त्याग दिया है।

—इसका क्या मतलब ?

जयसुन्दर बाबू बोले—यह तुमको और किसी दिन बताऊँगा। अभी मैं चल रहा हूँ। दिन की रोशनी रहते-रहते उस शैतान को ढूंढ़ निकालने की कोशिश करूँगा। रात हो जाने पर, यानी अँधेरे में वह कहाँ मिलेगा ?

इतना कह कर जयसुन्दर बाबू कमरे से निकल गये।

अपने कमरे में जा कर कपड़े बदलने के बाद जयसुन्दर बाबू सीढ़ी से नीचे गये।

नीचे शेखर बाबू अपने टेबिल के सामने बैठे थे। टेबिल पर रजिस्टर रखा था।

जयसुन्दर बाबू को देख कर शेखर बाबू ने कहा—घूमने चले ?

—जी हाँ। जरा घूम आऊँ। जयसुन्दर बाबू बोले।

—बारह नंबर की लड़की इस समय कैसी है ?

जयसुन्दर बाबू बोले—पहले से बहुत ठीक है। अभी तक तो उसी के कमरे में बैठा था। अब तो ठीक से बात कर रही है।

शेखर बाबू ने पूछा—लेकिन आत्महत्या करने क्यों चली थी, आपको कुछ बताया ?

जयसुन्दर बाबू ने कहा—जिस कारण से और लोग आत्महत्या करने लगते हैं, उसी कारण से। यानी, डिप्रेशन से। निराशा के कारण सबके मन की वैसी स्थिति हो सकती है।

—उसका कौन है, कुछ बताया ?

जयसुन्दर बाबू बोले—उसने तो कहा कि कोई नहीं है। मैंने उसे बहुत समझाया कि घबड़ाने से काम नहीं चलता। खैर, बिल आप उसके नाम से मत बनाइए। उसका सारा खर्च मैं दूँगा।

यह कह कर जयसुन्दर बाबू चले गये। उनके पाँव समुद्र की तरफ चल पड़े।



बहुत सवेरा था। रात की अँधियारी बस छँटी ही थी।

निशिकान्त दास उस समय भी बेखबर सो रहा था। उसके होटल में शायद सभी लोग उस समय सो रहे थे। सिर्फ होटल का मालिक उस समय बिस्तर छोड़ कर उठा था।

नौकर-चाकर भी एक-दो उठे थे। वे होटल में ठहरे लोगों के लिए चाय बनाने में व्यस्त थे।

तभी निशिकान्त के कमरे के दरवाजे पर दस्तक हुई।

झटपट उठ कर दरवाजा खोलते ही निशिकान्त ने देखा कि वरुणा है।

—अरे ! तुम ? इतने सवेरे कैसे आ गयी ?

वरुणा कुर्सी पर बैठी ।

फिर बोली—मैं अभी चली जाऊँगी ।

निशिकान्त ने पूछा—सब ठीक है न ?

वरुणा ने धीमे स्वर में कहा—आपने जैसा कहा था, मैंने ठीक वैसा किया था ।

—मैंने सुना है ।

—आपने कैसे सुना ?

—मैं तुम्हारे होटल के सामने गया था । उस समय वहाँ समुद्र के किनारे दो आदमी बात कर रहे थे । वे तुम्हारे ही बारे में बता रहे थे । आखिर तुम्हारे कमरे का दरवाजा तोड़ना पड़ा ?

वरुणा बोली—मैं तो एकदम बेहोश हो गयी थी । पुलिस और डाक्टर तक को बुलाना पड़ा था । होटल का मैनेजर बहुत डर गया था । फिर कहीं होटल की बदनामी न हो, इस लिए पुलिस को घूस दे कर उसने मेरे मामले को रफा-दफा कराया ।

—उसके बाद ? जयसुन्दर बाबू तुम्हारे कमरे में आये थे ?

—हाँ । वही तो बताने आयी हूँ । पुलिस को जो घूस और डाक्टर को जो फीस दी गयी, वह सब रुपया तो उन्हीं ने दिया । अब वह मेरे कमरे में बराबर आ रहे हैं । मुझसे कह रहे हैं कि घबड़ाओ मत, तुम्हारा सारा खर्च मैं दूँगा ।

—उसके बाद ?

—उसके बाद मुझसे पूछा कि किस लिए मैं पुरी आयी हूँ । इसका जवाब मैंने अपने मन में गढ़ कर दिया है । मैंने कहा कि एक नौकरी के सिलसिले में इंटरव्यू देने आयी थी । लेकिन वह नौकरी नहीं मिली तो मैं आत्महत्या करने चली थी ।

सब कुछ सुन कर निशिकान्त खुश हुआ ।

बोला—वाह ! तुम तो बहुत बुद्धि रखती हो । अब मैं समझ गया कि यह काम तुम कर सकोगी । अब मैं जैसा कहूँगा, वैसा करोगी तो तुम्हें बहुत रुपये दूँगा ।

वरुणा ने पूछा—कितने रुपये देंगे ?

—एक हजार रुपये तो तुम्हें दूँगा ही । उसके लिए वादा किया है । अब तुम मुझे वह दो लाख रुपये दिला दो तो मैंने जो वादा किया है, उसका दूना दूँगा । इसके लिए फिर वादा कर रहा हूँ । लेकिन तुम्हें बहुत होशियार हो कर आगे बढ़ना पड़ेगा । वह आदमी भी कम होशियार नहीं है ।

—लेकिन मैं आपको कैसे दो लाख रुपये दिला पाऊँगी, समझ नहीं पा रही हूँ।

निशिकान्त बोला—अरे, तुम प्यार का नाटक नहीं कर पाओगी ? पहले तुम ऐसा हाव-भाव करोगी कि वह तुम्हारे प्यार के समुन्दर में गोते लगाने लगेगा। तब तुम उससे जो कुछ मांगोगी, वही वह देगा ! उसके पास अकूत पैसा है, लेकिन अपनी पत्नी से उसका कोई रिश्ता नहीं है। वैसे आदमी को मतवाला बनाने में कितनी देर लगती है ? उसके बेटे भी उसके साथ नहीं रहते।

—लेकिन उनसे रुपया कैसे मांगूंगी ?

निशिकान्त बोला—रुपया न मांग सको तो गहने मांगना। हीरे-जवाहरात के जड़ाऊ गहने। यह भी न हो तो कार मांगना।

सुन कर वरुणा को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसके मुँह से निकला—कार ?

निशिकान्त बोला—हाँ-हाँ, कार। वह चाहे तो एक नहीं, तुम्हें दस कारें दे सकता है। बस, उससे लेने की तरकीब आनी चाहिए।

वरुणा बोली—लेकिन आप चाहे जो कहें, उस सज्जन का दिल बहुत बड़ा है !

—कैसे उसके दिल की थाह लगा ली ?

वरुणा बोली—मैं तो उनकी कोई नहीं हूँ, फिर भी वह मेरे लिए कितना खर्च कर रहे हैं। मुझे स्पेशल खाना देने के लिए होटल के मैनेजर से कह रखा है। उसका पूरा खर्च वही देंगे। भला, दूसरे के लिए कौन इतना करता है ?

निशिकान्त बोला—तुम उससे पूछना तो कि पुरी किस लिए आया है ?

—मैंने पूछा था।

—क्या कहा उसने ?

—उन्होंने कहा कि मैं एक आदमी की तलाश में आया हूँ।

—किसकी तलाश में आया है ?

वरुणा बोली—आपकी।

—मेरी ? तुमको मेरा नाम बताया है ?

—हाँ। उन्होंने कहा कि निशिकान्त दास नाम का एक आदमी पुरी आया हुआ है। मैं उसी को ढूंढने आया हूँ। एक-एक होटल में जा कर उसका पता लगा रहा हूँ। उन्होंने यह भी कहा कि आप एक आदमी की हत्या के अभियोग में दस वर्ष जेल काट कर आये हैं। आपने जिस आदमी का खून किया था, उसका नाम है राधेश्याम अग्रवाल।

—यह सब बकवास है। वह चाहता है कि तुम मुझसे नफरत करने लगो। मेरा कोई काम न करो। वह इसी तरह मुझे चारों तरफ बदनाम करता फिर रहा

है। अगर मैंने किसी का खून किया है तो मेरी फांसी क्यों नहीं हो गयी ? हाँ, एक आदमी ने मुझे उस मामले में फँसा दिया था, जिससे जेल जाना पड़ा था।

वरुणा बोली—लेकिन उन्होंने तो कहा कि खून आपने किया था और उनके पास इसका प्रमाण है।

— अगर प्रमाण है तो उस समय कोर्ट में प्रोड्यूस कर सकते थे। असल में मैंने जो तुमसे कहा है, वह सही है। वह एक नंबर का शैतान है। अगर ऐसा नहीं है तो उसकी पत्नी उसके साथ क्यों नहीं रहती ? उसके दोनों बेटे बाप को छोड़ कर विदेश में क्यों रह रहे हैं ? उसके घरवाले ही उससे नफरत करते हैं। अगर वह सचमुच भला होता तो और चार भले लोगों की तरह घर-गृहस्थी करता। वह ऐसा क्यों नहीं करता ?

वरुणा कुछ न बोली, चुप रही।

निशिकान्त बोला—तुम उसकी बातों में हर्गिज मत आना, समझ गयी ? मैं सिर्फ तुम्हारे भरोसे यह काम कर रहा हूँ। तुम्हारे लिए अब तक मेरा बहुत रुपया खर्च हो चुका है। तुम्हारे ट्रेन के किराये से ले कर तुम्हें साड़ी खरीद देने तक मेरे बहुत से रुपये निकल गये हैं। वह सब रुपया निकल आना चाहिए। बस, इसका ख्याल रखना।

वरुणा बोली—लेकिन आपका रुपया कैसे निकल आयेगा, यह तो मैं नहीं समझ पा रही हूँ।

निशिकान्त बोला—सिर्फ मेरा रुपया निकालना नहीं, उससे दो लाख रुपया भी खींचना होगा। जरूरत पड़ेगी तो तुम उसके साथ लेटोगी !

वरुणा चौंक पड़ी।

बोली—यह आप क्या कह रहे हैं ?

निशिकान्त बोला—तुम चौंक क्यों रही हो ? मैंने कोई गलत नहीं कहा ! इस जमाने में लोग रुपये के लिए सब कुछ कर रहे हैं और तुम इतना नहीं कर सकोगी ? अगर न कर सकोगी तो समझ लो कि जिन्दगी भर तुम्हें गरीब रहना पड़ेगा। कभी तुम्हारा दुख दूर नहीं होगा। अगर तुम किसी आफिस में नौकरी करती तो भी बड़े साहब को खुश करने के लिए सब कुछ करना पड़ता।

वरुणा ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया।

निशिकान्त उसके चेहरे की तरफ देख कर समझ गया कि वह डर रही है।

इसलिए निशिकान्त बोला—तुम डरो नहीं। इसमें डरने की कोई बात नहीं है। फिर मैं तो हूँ।

लेकिन वरुणा रोने लगी।

वह बोली—दया करके आप मुझे कलकत्ते वापस भेज दीजिए। अगर आप

ले बताते कि मुझको यह सब काम करना पड़ेगा तो मैं हर्गिज आपके साथ न आती। मुझे ट्रेन का किराया दे दीजिए, मैं कलकत्ते लौट जाऊँगी।

निशिकान्त बोला—लेकिन यहाँ तक आ कर नहीं लौटा जा सकता। अगर तुम लौटना चाहोगी तो मैं तुम्हें लौटने नहीं दूँगा। जैसे भी हो, इस काम को पूरा करना पड़ेगा। इस काम को पूरा किये बिना तुम भाग नहीं सकती।

भरांये हुए स्वर में वरुणा बोली—मैं यह सोच भी न पायी थी कि मुझे एक असहाय लड़की पा कर इस तरह धमकी देंगे।

इतना कह कर वरुणा उठी।

बोली—अच्छा, मैं जा रही हूँ।



होटल से निकल कर वरुणा सड़क पर आ गयी।

उस समय ठीक से सवेरा हुआ था। गली से दो-चार लोग आने-जाने लगे थे। वरुणा जब निशिकान्त के होटल में आ रही थी, उस समय चारों तरफ हलका अँधेरा था। वह अपने कमरे में ताला लगा कर निकल पड़ी थी। उसने सोचा, अब शायद होटल के लोग मुझे ढूंढ़ने लगे होंगे। जो लड़की अभी नींद की गोलियाँ खा कर आत्महत्या करने चली थी, वह अगर सवेरे-सवेरे किसी को कुछ बताये बिना होटल से गायब हो जाय तो लोगों को चिंता होना स्वाभाविक है।

गली से निकल कर वरुणा फिर समुद्र के किनारे आयी तो उसे लोगों की भीड़ दिखाई पड़ी। जो लोग स्वास्थ्य सुधारने आये थे, वे नींद से जगते ही समुद्र के किनारे हवाखोरी के लिए आ पहुँचे थे। वरुणा धीरे-धीरे अपने होटल की तरफ चलने लगी। उसे लगा कि इस विराट विश्व ब्रह्माण्ड में वह एकदम अकेली है। सचमुच उसका कोई नहीं था। लोगों के माँ-बाप और भाई-बहन रहते हैं, लेकिन उसके सभी कोई रहते हुए कोई नहीं था।

सचमुच ऐसा समय था, जब बाप उससे बहुत प्यार करते थे।

बाप कहते थे—अच्छे से अच्छा लड़का देख कर मैं वरुणा का ब्याह करूँगा।

माँ कहती थी—अभी मैं उसकी शादी नहीं करूँगी। आजकल इतनी कम उम्र में किसी की शादी नहीं हो रही है।

कहाँ वह दिलदारपुर है और कहाँ यह पुरी!

दिलदारपुर में वरुणा उन दिनों स्कूल में पढ़ती थी। तभी एक दिन एक सज्जन

ने उसे देख लिया था। वरुणा उस सज्जन को नहीं पहचानती थी। वह बड़ी अच्छी धोती और कुरता पहने हुए थे।

उस सज्जन को देख कर वरुणा को लगा था कि वह किसी दूसरे गाँव के हैं। न जाने किस कारण से दिलदारपुर आये थे।

वरुणा को रास्ते में रोक कर उस सज्जन ने पूछा था—बच्ची, तुम्हारा क्या नाम है?

झिझकते हुए वरुणा ने अपना नाम बताया था—वरुणा।

—वरुणा क्या?

फिर वरुणा ने धीरे से कहा था—वरुणा चौधरी।

—तुम लोग ब्राह्मण हो या कायस्थ?

—कायस्थ।

इतना पूछ कर ही वह सज्जन चुप नहीं हुए थे।

फिर पूछा था—तुम्हारा घर कहाँ है?

—दक्षिणपाड़ा में।

उसके बाद वरुणा के पिता का नाम मालूम कर वह सज्जन वरुणा के घर आये थे। वरुणा घर लौट आयी तो थोड़ी देर बाद वह सज्जन भी आ गये। उस सज्जन को अपरिचित देख कर वरुणा के पिता ने उनको बड़े आदर से बिठाया।

कमरे में बैठने के बाद उस सज्जन ने कहा—मैं अपने किसी काम से आपके दिलदारपुर में आया था। रास्ते में देखा कि आपकी बेटी स्कूल से लौट रही है। अब आपसे मेरा एक प्रस्ताव है चौधरी बाबू।

वरुणा के बाप उस सज्जन की बात सुन कर आश्चर्य में पड़ गये।

बोले—आपका परिचय?

उस सज्जन ने कहा—मेरा नाम है भूदेवभूषण घोषराय। कभी हमारी जमींदारी थी, लेकिन अब तो वह सब सरकार ने ले लिया है।

वरुणा के बाप बोले—मेरा बड़ा सौभाग्य है कि आपने इस गरीब की कुटिया में कदम रखा।

उस सज्जन ने कहा—मैं अपने बेटे के लिए आपकी बेटी को माँगने आया हूँ। आप हमारी जाति के हैं।

और भी क्या-क्या बात हुई, वरुणा सुनना चाहती थी, लेकिन माँ ने आ कर उसे टोका—तू दरवाजे की आड़ में खड़ी हो कर क्या सुन रही है। हट यहाँ से।

उसके बाद बाप घर के अन्दर आये।

माँ से बोले—सुनती हो। कमलपुर के जमींदार भूदेवभूषण घोषराय आये हुए हैं। उन्होंने हमारी बेटी को देख कर पसन्द किया है। वह अपने इकलौते बेटे से

हमारी वरुणा का ब्याह करना चाहते हैं। बताओ, उनको क्या जवाब दूँ?

यह सुन कर माँ बोली—क्या कहते हैं? वरुणा तो अभी बच्ची है। उसकी क्या शादी करेंगे? उन्होंने हमारी बेटी को कैसे देखा?

बाप बोले—वरुणा स्कूल से लौट रही थी, तभी उन्होंने देख लिया था। फिर हमारा मकान ढूँढते हुए आये। अगर वरुणा की शादी करना चाहती हो तो बोलो। ऐसा लड़का फिर नहीं मिलेगा।

लेकिन माँ ने विरोध किया—आप पागल हो गये हैं क्या? वैसा लड़का क्यों नहीं मिलेगा? बेटी क्या हमारे लिए बोझ हो गयी है?

वरुणा ने उन दिनों की बातें याद कीं।

अंत तक वह सज्जन निराश हो कर लौट गये थे। उसके बाद वह दोबारा नहीं आये।

लेकिन उसके बाद जो कुछ हुआ, वरुणा ने कभी उसकी कल्पना नहीं की थी।

धीरे-धीरे वरुणा ने स्कूल की पढ़ाई पूरी कर ली। वह मैट्रिक पास कर गयी तो उसे कालेज में पढ़ाने की बात चली।

बाप बोले—अब वरुणा को आगे पढ़ाने की जरूरत नहीं है। अब उसकी शादी कर देनी चाहिए।

वरुणा की माँ बोली—जी नहीं। मैं उसे कालेज में पढ़ाऊँगी। मैं खुद पढ़ न सकी तो मुझे बड़ा अफसोस है। कालेज में पढ़ा कर उसे बी० ए० पास कराऊँगी।

उन दिनों शहर के कालेज में पढ़ने के लिए लड़कियों को होस्टल में रहना पड़ता था। उसमें बहुत पैसा लगता था।

फिर भी माँ बोली—बहुत पैसा लगेगा तो क्या हुआ? मैं आधा पेट खा कर वरुणा को पढ़ाऊँगी। वह जरूर बी० ए० पास करेगी।

फिर वरुणा पढ़ने के लिए शहर गयी।

होस्टल का मतलब कई अन्य लड़कियों के साथ रहना था। वे लड़कियाँ एक साथ खाती थीं, सोती थीं और पढ़ती थीं। हर काम एक साथ करना पड़ता था।

फिर होस्टल में कुन्ती दी से परिचय हुआ। कुन्ती सेन। कुन्ती दी से वरुणा की बड़ी दोस्ती हो गयी। वरुणा कुन्ती दी के साथ एक कमरे में रहती थी।

कुन्ती दी की विधवा माँ गाँव में रहती थी। अपना कहने के लिए कुन्ती दी का और कोई नहीं था। कुन्ती दी वरुणा से दो क्लास ऊपर पढ़ती थी। उसके घर से रुपया नहीं आता था। लड़कियों को ट्यूशन पढ़ा कर जो पैसा मिलता था, उसी से कुन्ती दी अपना खर्च चलाती थी। उसी पैसे से कुछ बचा कर वह माँ को भी भेजती थी।

वही कुन्ती कहती थी—यहाँ की परीक्षा पास कर मैं कलकत्ते जाऊँगी। तू मेरे साथ चलेगी ?

वरुणा कहती थी—पिता जी क्या मुझे कलकत्ते जाने देंगे ? अगर देंगे तो जरूर जाऊँगी। लेकिन कलकत्ते जा कर क्या करूँगी ?

कुन्ती दी कहती थी—मैं तो नौकरी करूँगी। आजकल कलकत्ते में यहाँ की बहुत सी लड़कियाँ नौकरी करती हैं।

—कौन आपको नौकरी दिलायेगा ?

—मैं खुद एक-एक आफिस में जा कर नौकरी ढूंढ़ लूंगी। यहाँ रहने पर कोई नौकरी नहीं मिलेगी। हमारे कालेज की बहुत सी लड़कियाँ इस समय कलकत्ते में नौकरी कर रही हैं।

वरुणा ने पूछा था—लेकिन आप कहाँ रहेंगी ?

—क्यों, लेडीज मेस है।

वरुणा कहती थी—लेकिन मेरी माँ मुझे नौकरी नहीं करने देंगी।

उन दिनों की बातें याद कर वरुणा को बड़ा आश्चर्य लगा। उसने कैसा-कैसा सपना देखा था। उसकी आँखों में कितनी आशाएँ थीं। कुन्ती दी भी उससे कितना प्यार करती थी। लेकिन एक दिन वह सब न जाने अचानक कहाँ गायब हो गया।

वरुणा बी० ए० की परीक्षा देने वाली थी।

कुन्ती दी कलकत्ते चली गयी। जाते समय उसने कहा—वरुणा, कलकत्ते से तुझे चिट्ठी लिखूंगी, लेकिन जवाब जरूर देना।

तभी एक दिन अचानक वरुणा के घर से पिताजी का पत्र आया, माँ का देहान्त हो गया है।

वरुणा ने उन दिनों की बातें याद कीं।

पिताजी का पत्र पाते ही वरुणा की आँखों के आगे मानो अँधेरा छा गया था। माँ की मृत्यु का समाचार उसने न जाने किस तरह सह लिया था ! उसे ले जाने के लिए पिताजी होस्टल में आये। उसका रोना देख कर पिताजी भी रोये। उसके बाद रोते-रोते बाप-बेटी दोनों दिलदारपुर गये। माँ का श्राद्धकर्म सम्पन्न हुआ। वहाँ कई दिन रोते-रोते वरुणा की आँखें सूज गयी थीं।

बेटी को रोते देख कर बाप कहते थे—रो मत बेटा। तुझे रोते देख कर मुझे भी रुलाई आती है।

वरुणा कहती थी—अब मैं कालेज में नहीं जाऊँगी पिताजी।

—क्यों री ? क्या हो गया ? नहीं पढ़ेगी ?

वरुणा कहती थी—आप अकेले यहाँ कैसे रहेंगे ?

सचमुच माँ जब तक थी, घर कितना भरा-भरा लगता था। सिर्फ एक माँ

की कमी से सारा घर मानो सूना हो गया था। कभी-कभी वरुणा माँ को सपने में देखती थी। लेकिन एक दिन पिताजी उसे समझा-बुझा कर कालेज के हॉस्टल में रख आये।

बोले—घबड़ाना मत। बीच-बीच में आ कर तुझे देख जाया करूँगा।

वरुणा का मन कहीं उदास न हो जाय, इसलिए लौटते समय बाप ने उसे बहुत समझाया।

बोले—रो मत। तू मेरे लिए परेशान मत हो। तू परीक्षा में पास हो ले तो आ कर तुझे ले जाऊँगा।

यह कह कर वरुणा के बाप चले गये।

ठीक उसी के बाद वरुणा के जीवन में वह दुर्घटना घटी।

वरुणा के बाप ने दूसरी शादी कर ली।

शुरू-शुरू में नयी माँ वरुणा को न जाने कैसी लगती थी। वह पहले वाली माँ की तरह नहीं थी। वह तो बस हुक्म करना जानती थी। अगर वह वरुणा को एक मिनट भी बैठी देख लेती थी, तो फौरन हुक्म करती थी—कमरे में जरा झाड़ू क्यों नहीं लगा देती? चुपचाप बैठे क्यों है?

वरुणा की अपनी माँ ने कभी वरुणा को काम करने नहीं दिया था। अगर वरुणा कभी कोई काम करने लगती थी तो माँ मना करती थी। लेकिन नयी माँ दूसरी तरह की थी। अगर वरुणा एक मिनट भी चुपचाप बैठ जाती थी, तो नयी माँ उस पर दुनिया भर का काम लाद देती थी। पहली माँ एकदम दूसरी तरह की थी। वरुणा कोई काम करना चाहती थी तो माँ कहती थी—तुम पढ़ना-लिखना ले कर रहो वरुणा, मैं सारा काम कर लूंगी।

एक दिन कुन्ती दी का पत्र आया।

नयी माँ ने वह पत्र देख लिया।

पूछा—तेरे नाम किसकी चिट्ठी आयी? किसने तुझे चिट्ठी लिखी, दिखा।

नयी माँ को पढ़ना नहीं आता था। उसने वरुणा से वह पत्र ले कर वरुणा के बाप को जा कर दिखाया।

कहा—देखिए, अभी से आपकी बेटी को कौन चिट्ठी लिखने लगा है! पढ़ कर देखिए किसकी चिट्ठी है। अपनी लाडली बेटी की करतूत खुद अपनी आँखों से देख लीजिए। मैं कहूँगी तो आप विश्वास नहीं करेंगे।

बाप ने वह पत्र पढ़ कर कहा—यह चिट्ठी उसकी सहेली की है। यह लड़की उसके साथ कालेज में पढ़ती थी। अपनी सहेली को खत लिखा है।

फिर भी नयी माँ के मन से सन्देह दूर नहीं होता था।

वरुणा एक मिनट के लिए खिड़की के पास जा कर खड़ी हो जाती थी तो

नयी माँ फौरन उसके बाप से जा कर कहती थी—सुन लीजिए, आपकी बेटी आजकल क्या करने लगी है।

बाप आश्चर्य में पड़ जाते थे कि पता नहीं वरुणा ने क्या कर लिया है।

पूछते थे—वरुणा क्या करने लगी है ?

—अभी थोड़ी देर पहले आपकी लाडली खिड़की से एक लड़के को इशारा कर रही थी।

इस पर वरुणा के बाप कहते थे—क्या कहती हो ? वरुणा वैसा नहीं कर सकती।

यह सुन कर नयी माँ कहती थी—तो मैं झूठ कह रही हूँ ? सारा दोष मेरा है और आपकी लाडली बेटी में कोई दोष नहीं है। वह एकदम सती अनसुइया है।

एक दिन वरुणा को अलग बुला कर उसके बाप ने उससे कहा—क्यों री, तेरी नयी माँ तुझसे जलती है ?

वरुणा चुपचाप खड़ी रही। उसकी आँखें छलछला आयीं। लेकिन उसने एक भी शब्द नहीं कहा।

बाप बोले—बुरा मत मान वरुणा, तेरा कोई दोष नहीं है। सारा दोष मेरा है। शायद मैंने दूसरी शादी करके गलती की है। लेकिन क्या करता, बता ? उस समय तो ऐसा हो गया था कि घर की देखभाल करने वाला कोई नहीं था। कौन खाना बनाता और कौन साफ-सफाई करता ? गाँव में अच्छा नौकर भी नहीं मिलता। यही सब सोच कर शादी की थी। उस समय मुझे क्या पता था कि उसका यह परिणाम होगा।

उसके कुछ दिन बाद नयी माँ माँ बनी। वरुणा के भाई हुआ। नयी माँ उस समय सौरी में थी। गृहस्थी का सारा भार वरुणा पर आ पड़ा। लेकिन उससे वरुणा को कोई कष्ट नहीं था। उसे तो कष्ट तब होता था, जब सौरी से उसकी नयी माँ उसे खरी-खोटी सुनाती थी।

खाना खाते-खाते नयी माँ चीखने लगती थी।

कहती थी—अजी जल्दी आइए। देखिए, आपकी लाडली बेटी ने क्या सर्वनाश किया है !

चिल्लाहट सुन कर वरुणा के बाप दौड़ते हुए सौरी के सामने पहुँच जाते थे।

पूछते थे—क्यों ? क्या हो गया है ?

नयी माँ थाली की ओर इशारा करके कहती थी—जरा देखिए न ! आपकी बेटी ने सब्जी में कितना तेल डाला है। सारा तेल सब्जी बनाने में खर्च कर दिया होगा। खैर, मेरा क्या ! आपका पैसा खराब हो रहा है, मैं क्यों यह सब कह कर अपनी जबान खराब करूँ ? आपकी बेटी और आपका पैसा, आप समझें। मैं आप

लोगों के बीच में बोलने वाली कौन होती हूँ ? मैं तो दूसरे के घर से यहाँ आयी हूँ।

इस पर बाप कहते थे—मैंने भी तो वह सब्जी खायी, लेकिन मुझे उसमें अधिक तेल नहीं लगा।

नयी माँ कहती थी—क्यों लगेगा ? आपकी बेटी ने सब्जी बनायी है तो आपको क्यों उसमें अधिक तेल जान पड़ेगा ? मैं तो पराये घर से आयी हूँ। मैं इस घर की कोई नहीं हूँ। अगर आपके मन में यही था तो आप मुझे क्यों इस घर में ले आये ? किसने आपको कसम धरायी थी कि शादी कर लीजिए ?

फिर नयी माँ सोरी में बैठ कर रोने लगती थी। रोते हुए अपनी माँ को पुकार कर कहती थी—हाय अम्मा ! आ कर देख लो कि तुम्हारी बेटी की क्या दुर्गत हो रही है ! देख लो कि तुमने मुझे कैसे आदमी के हाथों में सौंप दिया है। तुमने मेरे मुँह में नमक ठूँस कर मुझे मार क्यों नहीं डाला ? तुमने मेरा गला दबा कर मुझे तालाब में डुबो क्यों नहीं दिया ? तुमने मुझे जिन्दा रख कर क्यों यह वैर निकाला ?

कहाँ दिलदारपुर था और पता नहीं किस गाँव में वरुणा की नयी माँ की माँ थी ! वहाँ से वह माँ कैसे अपनी दुखिया बेटी की बातें सुन सकती थी ? फिर भी नयी माँ का चीखना-चिल्लाना बदस्तूर जारी रहता था। यह एक दिन की बात नहीं थी। रोज ऐसा होता था।

फिर क्या सरसों का तेल ही था ? कभी चीनी ले कर भी बात का बतंगड़ बन जाता था।

चाय का एक घूँट मुँह में लेते ही नयी माँ पूरी चाय नाली में गिरा देती थी।

कहती थी—चाय है या शरबत ? चीनी डाल-डाल कर एकदम शरबत बना दिया है !

अगर वरुणा के बाप भी उस समय चाय पी रहे होते थे तो कहते थे—कहाँ ? मुझे तो अधिक चीनी नहीं लग रही है !

इस पर नयी माँ कहती थी—आपको क्यों अधिक चीनी लगेगी ? यह तो मेरी जबान का दोष है। अब से मैं अपनी चाय खुद बना लिया करूँगी। आप दोनों बाप-बेटी हाथ पर हाथ धरे बैठे रहिए।

बाप ने एक दिन को बेटी अलग बुलाया।

कहा—वरुणा बेटा, बुरा मत मान। तू तो अपनी माँ को जानती है। वह चाहे जो कहे, उधर ध्यान मत देना। अब सोचता हूँ कि उस बार जब कमलपुर के भूदेव बाबू तेरी शादी का रिश्ता ले कर आये थे, तब उनको लौटा न देता तो

अच्छा करता। वह शादी हो जाती तो तेरा भी भला होता और मुझे भी सुख मिलता।

उसके बाद साल भर बीतते न बीतते वरुणा के और एक भाई हुआ। खटते-खटते वरुणा हलाकान हो गयी। घर के रोज के काम-काज के साथ नये काम-काज भी बढ़ गये। नयी माँ के बड़े बच्चे को नहलाने, खिलाने और सुलाने के अलावा उस नखरे वाली औरत की सेवा-टहल करना था। वरुणा बुरी तरह परेशान हो गयी। ऊपर से बात-बात पर उसे ताना सुनने को मिलता था।

उसी समय कुन्ती दी का एक पत्र आया।

कुन्ती दी ने लिखा था—दो दिन की छुट्टी पर गाँव जाऊँगी। हो सके तो मिल लेना।

वरुणा ने यह वह पत्र पा कर मन ही मन तय कर किया कि बस! अब नहीं। इस अवसर को हाथ के निकलने नहीं दूंगी।

फिर तो वरुणा ने उसी तरह काम किया।

कुन्ती दी भी वरुणा को देख कर आश्चर्य में पड़ गयी थी।

कहा—अरी तू? इतने सवेरे कहाँ से आ गयी?

वरुणा बोली—मैं आपके साथ कलकत्ते जाऊँगी कुन्ती दी। बड़ी मुसीबत में हूँ, मुझे बचा लीजिए।

कुन्ती दी बोली—बाप को बता कर आयी है न?

वरुणा बोली—बताती तो आने क्यों देते? मुझे आप कलकत्ते ले चलें। आपके पाँवों पड़ती हूँ कुन्दी दी, मुझे अपने साथ ले जायँ। घर में रहूँगी तो मर जाऊँगी।

कुन्ती दी बोली—अगर तेरे पिताजी पुलिस में खबर कर दें तो?

वरुणा बोली—पुलिस मेरा क्या करेगी? अब तो मैं बड़ी हो गयी हूँ। मैं कहूँगी कि मैं अपनी इच्छा से कलकत्ते आयी हूँ। यहीं नौकरी करूँगी।

अन्त तक वही हुआ।

कुन्ती दी के साथ वरुणा कलकत्ते चली आयी। पास में एक पैसा नहीं था। कुन्ती दी ने रेलगाड़ी के टिकट का पैसा दिया। वरुणा अक्लमंदी कर अपने साथ दो-तीन साड़ियाँ और ब्लाउज ले आयी थी। वही ले कर वह डी० एल० राय स्ट्रीट ...रोज मेस में पहुँच गयी। उस मेस में बहुत सी लड़कियाँ थीं। अधिकतर

वरुणा बोली—मुझे कलकत्ता घूम कर देखने की इच्छा नहीं है। आप कहीं मेरी नौकरी लगा दीजिए।

कुन्ती दी बोली—नौकरी पाना इतना आसान नहीं है। उसके लिए बहुत दिन चक्कर लगाना पड़ेगा। मैं अपने आफिस में कोशिश कर रही हूँ। लेकिन लगता है कि नहीं होगा। जब तक कहीं नौकरी नहीं लगती, तू लड़कियों को पढ़ाया कर। मैं तेरे लिए ट्यूशन जुगाड़ कर दूँगी।

वरुणा बोली—आप जो काम दिलायेंगी, मैं वही करूँगी।

बहुत कोशिश करने के बावजूद वरुणा को कहीं नौकरी नहीं मिली। लेकिन दो ट्यूशन मिल गये। पन्द्रह-पन्द्रह रुपये के ट्यूशन थे। महीने में तीस रुपये मिलने लगे। वह भी क्या कम था ?

शुरू में कई दिन मेस का खर्च कुन्ती दी ने दिया। वरुणा ने सोचा कि धीरे-धीरे कुन्ती दी का पैसा चुकता कर दूँगी। सिर्फ मेस में रहने-खाने का खर्च नहीं था। तेल-साबुन-गमछा आदि के लिए भी पैसे की जरूरत थी।

एक दिन सड़क पर चलते समय चप्पल फट गये। चप्पल हाथ में लिये चलने में वरुणा को बहुत शरम लगी। लेकिन कोई उपाय नहीं था। फिर भी वरुणा को कलकत्ता दिलदारपुर से कहीं अच्छा लगा। यहाँ कम से कम बात-बात पर ताना देने वाला कोई नहीं था।

रात को वरुणा ने कुन्ती दी से कहा—आज मेरे चप्पल फट गये कुन्ती दी।

—बनवा क्यों नहीं लिया ? रास्ते में कितने मोची बैठे रहते हैं।

वरुणा बोली—बनवा लिया है। लेकिन अब वह नहीं चलेगा। नया खरीदना पड़ेगा।

दूसरे महीने वरुणा ने सात रुपये दे कर एक जोड़ा नया चप्पल खरीदा। लेकिन कुन्ती दी को मेस का खर्च कम दिया।

उसके बाद वरुणा ने खुद एक ट्यूशन जुटा लिया। इस ट्यूशन से पैसा कुछ ज्यादा मिलने वाला था। यह ट्यूशन तीस रुपये का था। लेकिन उससे क्या होगा ? एक छात्रा की शादी हो गयी।

कुन्ती दी आफिस से लौटती तो वरुणा उससे पूछती—कहीं किसी नौकरी का पता चला कुन्ती दी ?

प्रतिदिन कुन्ती दी उसे निराशाजनक समाचार सुनाती।

कभी-कभी वरुणा स्वयं दोपहर को निकल पड़ती थी। दफ्तरों का चक्कर लगाती थी। कभी-कभी अखबार में विज्ञापन देख कर दरख्वास्त भेजती थी। दरख्वास्त भेजने के बाद उत्तर की आशा में दिन, फिर महीना गिनती रहती थी। लेकिन उत्तर कभी नहीं आता था।

उस लेडीज मेस में सिर्फ कुन्ती दी अकेली नहीं रहती थी। और भी अनेक स्त्रियां रहती थीं—शेफाली दी, विजया दी और मानसी दी आदि। उनमें कुछ कम उम्र की थीं तो कुछ अधिक उम्र की। करुणा ने नौकरी के लिए सबसे कह रखा था। उनमें कोई टाइपिस्ट थी, तो कोई टेलीफोन आपरेटर और कोई क्लर्क। खाना खा कर सब जल्दी-जल्दी दफ्तर चली जाती थीं। जब वे सब लौटने लगती थीं, तब करुणा पैदल ट्यूशन पढ़ाने निकलती थी।

ठीक उसी समय यह बुरा समाचार सुनने को मिला।

कुन्ती दी का तबादला हो गया था और वह बहुत जल्दी जयपुर जाने वाली थी।

यह खबर सुन कर करुणा रो पड़ी।

बोली—अब क्या होगा कुन्ती दी ? मैं कहाँ रहूँगी ? किसके पास रहूँगी ? कौन मुझे देखेगा ?

कुन्ती दी बोली—क्यों घबड़ा रही है ? तू यहाँ जिस तरह रह रही है, रहेगी और जो कुछ कर रही है, करेगी। यहाँ तो सब तेरी दीदी हैं। फिर वहाँ कोई नौकरी मिलेगी तो तुझे चिट्ठी लिखूंगी। फिर तू वहीं चली आना।

करुणा बोली—लेकिन आपने जो अब तक मुझे पांच सौ रुपया दिया है, उसका क्या होगा ?

कुन्ती दी बोली—जब तुझे नौकरी मिल जायेगी, दे देना। मैं तो अभी तुझसे रुपया नहीं मांग रही हूँ।

करुणा ने उन दिनों की बातें याद कीं।

सचमुच जिस दिन कुन्ती दी कलकत्ता छोड़ कर चली गयी, करुणा बहुत रोयी थी। उसका वह रोना रुकना नहीं चाह रहा था।

कुन्ती दी ने करुणा को छाती से लिपटा कर आश्वासन दिया था।

कहा था—रो मत ! जब मैंने तेरा जिम्मा लिया है, तब यह जिम्मेदारी जरूर निभाऊंगी। तेरे लिए कुछ न कुछ जरूर करूँगी।

उस आश्वासन से करुणा को अपने मन में बड़ा बल मिला था।

कुन्ती दी चली गयी।

करुणा प्रतिदिन कुन्ती दी के पत्र की प्रतीक्षा करती रही। लेकिन कितने दिन बीत गये, कुन्ती दी का कोई पत्र नहीं आया।

उन्हीं दिनों शेफाली दी एक आदमी को करुणा के पास ले आयी।

मकान मालिक का एक आदमी हर महीने किराया लेने आता था। यह वही आदमी था। इसको करुणा ने अनेक बार देखा था।

शेफाली दी ने कहा—नौकरी करेगी करुणा ?

नौकरी का नाम सुन कर वरुणा खिल गयी। उसे मानो आसमान का चांद मिल गया।

कहा—कहाँ है नौकरी शेफाली दी? मैं तो नौकरी खोजते-खोजते परेशान हो गयी।

वह आदमी शेफाली दी के साथ आया था।

शेफाली दी ने उस आदमी का परिचय देते हुए कहा—इनको तो पहचानती है वरुणा? यह नरेन बाबू हैं। हमारे मकान मालिक के लड़के। इनको एक लड़की की जरूरत है।

नरेन बाबू ने पहले वरुणा को अच्छी तरह देख लिया।

फिर कहा—लेकिन यह नौकरी यहाँ नहीं, पुरी में है। पुरी तो जानती हैं? कम से कम नाम तो जरूर सुना होगा? वहीं आपको जाना पड़ेगा। जायेंगी?

वरुणा क्या कहती! उस समय अगर कोई उससे नरक जाने के लिए भी कहता तो वह सहर्ष तैयार हो जाती।

बोली—कब जाना पड़ेगा?

फिर दो-चार बातें हुई।

उसी दिन शाम को नरेन बाबू एक सज्जन को मेस में ले आये।

उस सज्जन ने अपना नाम बताया—निशिकान्त दास।

वरुणा को निशिकान्त दास की बातचीत अच्छी लगी।

निशिकान्त दास बोला—मुझे आप ही जैसी एक लड़की की तलाश थी।

वरुणा ने सिर्फ पूछा—पुरी में मुझको क्या करना पड़ेगा?

निशिकान्त दास बोला—वह सब मैं बाद में आपको बता दूँगा। पहले आप यह तो बतायें कि जाने के लिए तैयार हैं या नहीं?

—कब चलना होगा?

निशिकान्त दास बोला—आज चलना चाहें तो आज चल सकती हैं, नहीं तो कल। वेतन के बारे में बता दूँ। वेतन आपको अच्छा दिया जायेगा।

—लेकिन मुझको तो इसी वक्त रुपये की जरूरत है। ट्रेन भाड़े का पैसा भी मेरे पास नहीं है। पहले कुछ पैसा मिल सकता है?

—बताइए, कितना चाहिए। ट्रेन के किराये के बारे में आप चिन्ता न करें। मैं तो आपको अपने साथ ले जाऊँगा। वह सब जिम्मा मेरा है। आपको कितना चाहिए, बताइए।

वरुणा समझ न पायी कि उसे कितना रुपया चाहिए।

अंत में सोच कर कहा—यही समझ लीजिए कि दो सौ रुपये।

निशिकान्त दास ने दस रुपये के बीस नोट निकाल कर वरुणा के हाथ पर रख दिये।

वरुणा को एक साथ कभी उतने रुपये नहीं मिले थे।

रुपये हाथ में ले कर वरुणा ने शेफाली दी की तरफ देखा।

शेफाली दी ने उसकी हिम्मत बंधाते हुए कहा—हाँ-हाँ, चली जा। इस समय तू कोई नौकरी नहीं कर रही है। इसलिए छोटा-मोटा जो भी काम मिले कर ले। फिर जब अच्छी नौकरी लग जायेगी, तब यहाँ चली आयेगी। हम सब तो हैं ही।

फिर निशिकान्त दास की तरफ देख कर शेफाली दी ने कहा—वरुणा बड़ी सीधी लड़की है। आप उसका जरा ख्याल रखियेगा।

निशिकान्त दास बोला—यह बताने की जरूरत नहीं है।

—उसे कितनी तनख़ाह देंगे ?

निशिकान्त दास ने कहा—आजकल तीन सौ रुपये से कम में किसी का नहीं चलता। फिर आप कहेंगी तो छः महीने बाद चार सौ रुपये कर दूँगा।

तो वही बात पक्की रही।

फिर निशिकान्त दास एक दिन वरुणा को साथ लिये ट्रेन में बैठ गया।

उस समय तक वरुणा कुछ भी न समझ सकी थी। लेकिन ट्रेन चल देने के बाद वह समझ सकी। वह समझ सकी कि उसे कौन सा काम करना पड़ेगा। किसी एक अमीर को फँसा कर, बहका-फुसला कर अपनी मुट्ठी में करना और उससे रुपया ऐंठना होगा। यही वरुणा का काम था!

अपने काम के बारे में सुन कर पहले तो वरुणा घबड़ा गयी थी।

कहा था—आपने यह सब पहले क्यों नहीं बताया था ? पहले यह सब मालूम होता तो मैं हर्गिज आपकी नौकरी न करती।

निशिकान्त दास ने कहा था—इतना आगे बढ़ कर तुम पीछे हटने की बात कर रही हो ? पता है, तुम्हारे लिए मेरे कितने रुपये खर्च हो गये हैं ? अब वह रुपये कौन वापस करेगा ?

वरुणा ने कहा था—फिर आप मुझे यहीं उतर जाने दीजिए। मैं लौट जाऊँगी।

निशिकान्त दास ने कहा था—पागलपन मत करो। मैं तुम्हें एक हजार रुपये दूँगा। पहले तुम मेरा काम निकाल दो। उसके बाद कहोगी तो एक हजार रुपये और दे दूँगा। कुल दो हजार रुपये मिलेंगे। अब ठंडे दिमाग से सोच लो।

दो हजार रुपये !

वरुणा जैसी लड़की के लिए दो हजार रुपये का लालच संभालना मुश्किल था।

कहाँ वह दिलदारपुर था, कहाँ से एक दिन वह भाग कर कलकत्ते आयी थी। उसे उस समय सिर्फ कुन्ती दी का सहारा था। वह कुन्ती दी भी उसे कलकत्ते छोड़ कर जयपुर चली गयी।

अपने भाग्य के बारे में सोच कर वरुणा को बड़ा गुस्सा आया। एक दिन कमलपुर के जमींदार भूदेवभूषण घोषराय ने अपने बेटे के साथ उसका ब्याह करना चाहा था। भूदेव बाबू ने उसके बाप को कितना समझाया था। उस समय अगर वहाँ उसकी शादी हो जाती तो आज यह गंदा काम न करना पड़ता।

गंदा काम ही तो है! वरुणा ने सोचा। जयसुन्दर बाबू तो आदमी बुरे नहीं हैं।

कहाँ वरुणा आयी थी जयसुन्दर बाबू को मुट्ठी में करके रुपया ऐंठने, लेकिन वह खुद उनकी मुट्ठी में हो गयी। जयसुन्दर बाबू को भी अपने जीवन में कम दुख नहीं मिला था। पत्नी के रहते हुए उससे उनका कोई सम्बन्ध नहीं था। दो-दो बेटे थे। लेकिन उनसे भी उनका कोई सम्पर्क नहीं था। उनका भी जीवन बड़ा विचित्र था। फिर वरुणा से उनका क्या अन्तर था?

समुद्र के किनारे से रास्ता था। उसी रास्ते से चलते हुए वरुणा अपने पूरे जीवन की परिक्रमा करके लौट आयी। उसने सोचा, अब क्या करना चाहिए? किसी को कुछ बताये बिना यहाँ से भाग चलूँ? लेकिन भाग कर कहाँ जाऊँगी? मान लिया जाय कि ट्रेन का किराया जयसुन्दर बाबू से मिल जायेगा। लेकिन मुझ पर तो बहुतों का बहुत कर्ज लदा हुआ है। उसके साथ जयसुन्दर बाबू का कर्ज भी जुड़ जायेगा।

वरुणा सोचती रही। लेकिन कलकत्ते जा कर कहाँ ठहरूँगी? क्या फिर डी० एल० राय स्ट्रीट वाले उसी लेडीज मेस में जाऊँगी? लेकिन वहाँ मेरा अपना कौन है? शेफाली दी, विजया दी और मानसी दी आदि तो मेरी कोई नहीं हैं? एक अपनी थी कुन्ती दी। लेकिन तबादला हो कर जयपुर जाने के बाद वह भी मुझे एकदम भूल गयी है। एक चिट्ठी तक नहीं दी।

समुद्र की लहरें बार-बार आ कर वरुणा के पाँवों को छू रही थीं।

तभी अचानक वरुणा ने देखा कि समुद्र के किनारे एक जगह बहुत भीड़ है।

क्या वहाँ मछुए मछली मार रहे हैं? वरुणा ने सोचा। लेकिन तभी उसने देखा कि उस भीड़ में पुलिसवाले भी हैं।

आखिर वहाँ क्या हो गया है?

वरुणा बहुत जल्दी-जल्दी उसी भीड़ की तरफ चली। लेकिन उस भीड़ में घुसना सम्भव नहीं था। गोला बना कर लोग खड़े थे।

एक महिला भीड़ के किनारे खड़ी हो कर अंदर झाँकने की कोशिश कर रही थी।

वरुणा ने उसी महिला से पूछा—यहाँ इतनी भीड़ क्यों है ?

वह महिला बोली—मैं भी कुछ नहीं जानती। सुना कि कोई समुद्र में डूब कर मरा है।

वरुणा बोली—अरे ! साथ में नुलिया नहीं था ?

—क्या पता ?

फिर बड़ी कोशिश करके वरुणा ने अन्दर धँस कर देखने की कोशिश की।

देखा कि एक महिला रेत पर पड़ी हुई है। सम्भवतः मर गयी है। उससे लिपट कर एक आदमी रो रहा है। रेत पर पड़ी महिला में प्राण का कोई लक्षण नहीं था। शायद उसके बचने की कोई उम्मीद नहीं थी।

सब लोग यही पूछ रहे थे कि उस महिला को क्या हुआ है ?

लेकिन कोई सही जवाब नहीं दे पा रहा था।

वरुणा ने सोचा, क्या उस महिला का अपना कहने को कोई नहीं है ? वह समुद्र में क्यों डूब गयी ? समुद्र में तो कोई नहीं डूबता ! क्या उसके साथ नुलिया नहीं था ? सब लोग यही सवाल कर रहे थे।

लेकिन वरुणा का किसी तरफ ध्यान नहीं था। किसी की कोई बात उसके कानों में नहीं पड़ रही थी। वह मानो उस शव के साथ एकाकार हो गयी थी। उसको लगा कि वह महिला कोई और नहीं, बल्कि वह स्वयं है और उस रेत पर पड़ी हुई है।

फिर तो वरुणा मानो अपने निढाल शरीर की तरफ एकटक देखने लगी। उसका सारा दुख-दर्द मानो रूप धर कर ढेर हो गया था। क्या उस महिला ने आत्महत्या की है। क्या पता ! अब तो कोई उसके मन की बात को जान नहीं सकता। कभी किसी के लिए जानना भी सम्भव नहीं है। एक बार जो चला जाता है, उसे लौट कर आने का कोई अधिकार नहीं रहता। उसके चले जाने के साथ ही उसकी चिन्ता-भावना और दुख-दर्द सब कुछ मिट जाता है।

वरुणा ने सोचा, यही तो अच्छा है ! अब तो नौकरी खोजने की जहमत नहीं है। चप्पल फट जाने पर उसकी मरम्मत के लिए पैसे की चिन्ता नहीं करनी पड़ती। हाँ-हाँ, यही तो अच्छा है !

—अरे, तुम यहाँ हो ?

किसी की आवाज कानों में पड़ते ही मानो वरुणा का ध्यान टूटा।

—क्या हो गया तुम्हें ? उस तरह क्या देख रही हो ? क्या तुम मुझे पहचान नहीं पा रही हो ?

वरुणा ने सिर्फ पूछा—अच्छा वह स्त्री समुद्र में डूब गयी थी या उसने आत्म-हत्या की है ?

जयसुन्दर बाबू वरुणा का हाथ पकड़ उसे भीड़ के बाहर ले आये।

बोले—एकदम तड़के मुँह-अँधेरे तुम कहाँ चली गयी थी ?

भीड़ के बाहर आते ही वरुणा ने देखा कि एक एम्बुलेंस वैन आ कर खड़ा हुआ। उसके बाद उसमें से दो लोग नीचे उतरे और उस स्त्री को स्ट्रेचर में लिटा कर उस एम्बुलेंस वैन में ले गये।

वरुणा ने जयसुन्दर बाबू से पूछा—क्या वे लोग उस स्त्री को अस्पताल ले जा रहे हैं ?

जयसुन्दर बाबू बोले—हाँ।

—वह समुद्र में डूब गयी थी या उसने आत्महत्या की है ?

जयसुन्दर बाबू वरुणा का हाथ पकड़ कर उसे दूर ले गये।

फिर पूछा—सवेरे-सवेरे तुम कहाँ निकल गयी थी ?

वरुणा बोली—आपसे एक अनुरोध करूँ ?

—करो न !

वरुणा बोली—आप यहाँ से चले जाइए।

—मैं ? पुरी से चला जाऊँगा ?

—जी हाँ।

—क्यों ? तुम ऐसा क्यों कह रही हो ? मैं तो निशिकान्त को ढूँढ़ने आया हूँ। जब तक वह मिल नहीं जाता, मैं कैसे लौट सकता हूँ ? वह तो मेरा सर्वनाश किये बिना नहीं मानेगा ! मैं यहीं उससे एक निपटारा करना चाहता हूँ। जानती हो, उसी ने मेरी पत्नी से मेरा सम्बन्ध-विच्छेद कराया है। उसी के कारण आज मेरे पास सब कुछ होते हुए भी सुख नहीं है। उसी ने मुझसे सबसे पहले काकटेल पार्टी देने के लिए कहा था। कहा था कि काकटेल पार्टी देने पर मुझे अच्छे-अच्छे कंट्रैक्ट मिलेंगे। उसी ने मुझसे कहा था कि आप अपने घर में काकटेल पार्टी दीजिए और उसमें अपनी पत्नी को शामिल कीजिए। मेरी पत्नी इस पर राजी नहीं हुई थी। इसी लिए मैं उसे छोड़ कर अलग मकान में रहने लगा था।

वरुणा समझ न सकी।

पूछा—यह काकटेल पार्टी क्या है ?

—काकटेल पार्टी का मतलब है शराब पीने की पार्टी। फिर उसी निशिकान्त के कहने पर मैं बाजारू औरत को अपनी पत्नी बना कर घर पर काकटेल पार्टी देने लगा। उससे मुझे सचमुच ठेके मिले और बहुत रुपया मिला, लेकिन उसके बदले मैंने सब कुछ खो दिया। मैंने अपना सुख खोया, रात की नींद खोयी, परिवार खोया और बच्चों को खो दिया और अब वह मुझको ही तबाह करना चाहता है। इसके लिए उसने मुझे खत लिखा है। खत में लिखा है कि उसे दो लाख रुपये देने

वरुणा ने उसी महिला से पूछा—यहाँ इतनी भीड़ क्यों है ?

वह महिला बोली—मैं भी कुछ नहीं जानती। सुना कि कोई समुद्र में डूब कर मरा है।

वरुणा बोली—अरे ! साथ में नुलिया नहीं था ?

—क्या पता ?

फिर बड़ी कोशिश करके वरुणा ने अन्दर घुँस कर देखने की कोशिश की।

देखा कि एक महिला रेत पर पड़ी हुई है। सम्भवतः मर गयी है। उससे लिपट कर एक आदमी रो रहा है। रेत पर पड़ी महिला में प्राण का कोई लक्षण नहीं था। शायद उसके बचने की कोई उम्मीद नहीं थी।

सब लोग यही पूछ रहे थे कि उस महिला को क्या हुआ है ?

लेकिन कोई सही जवाब नहीं दे पा रहा था।

वरुणा ने सोचा, क्या उस महिला का अपना कहने को कोई नहीं है ? वह समुद्र में क्यों डूब गयी ? समुद्र में तो कोई नहीं डूबता ! क्या उसके साथ नुलिया नहीं था ? सब लोग यही सवाल कर रहे थे।

लेकिन वरुणा का किसी तरफ ध्यान नहीं था। किसी की कोई बात उसके कानों में नहीं पड़ रही थी। वह मानो उस शव के साथ एकाकार हो गयी थी। उसको लगा कि वह महिला कोई और नहीं, बल्कि वह स्वयं है और उस रेत पर पड़ी हुई है।

फिर तो वरुणा मानो अपने निढाल शरीर की तरफ एकटक देखने लगी। उसका सारा दुख-दर्द मानो रूप धर कर ढेर हो गया था। क्या उस महिला ने आत्महत्या की है। क्या पता ! अब तो कोई उसके मन की बात को जान नहीं सकता। कभी किसी के लिए जानना भी सम्भव नहीं है। एक बार जो चला जाता है, उसे लौट कर आने का कोई अधिकार नहीं रहता। उसके चले जाने के साथ ही उसकी चिन्ता-भावना और दुख-दर्द सब कुछ मिट जाता है।

वरुणा ने सोचा, यही तो अच्छा है ! अब तो नौकरी खोजने की जहमत नहीं है। चप्पल फट जाने पर उसकी मरम्मत के लिए पैसे की चिन्ता नहीं करनी पड़ती। हाँ-हाँ, यही तो अच्छा है !

—अरे, तुम यहाँ हो ?

किसी की आवाज कानों में पड़ते ही मानो वरुणा का ध्यान टूटा।

—क्या हो गया तुम्हें ? उस तरह क्या देख रही हो ? क्या तुम मुझे पहचान नहीं पा रही हो ?

वरुणा ने सिर्फ पूछा—अच्छा वह स्त्री समुद्र में डूब गयी थी या उसने आत्महत्या की है ?

जयसुन्दर बाबू वरुणा का हाथ पकड़ उसे भीड़ के बाहर ले आये।

बोले—एकदम तड़के मुँह-अँधेरे तुम कहाँ चली गयी थी ?

भीड़ के बाहर आते ही वरुणा ने देखा कि एक एम्बुलेंस वैन आ कर खड़ा हुआ। उसके बाद उसमें से दो लोग नीचे उतरे और उस स्त्री को स्ट्रेचर में लिटा कर उस एम्बुलेंस वैन में ले गये।

वरुणा ने जयसुन्दर बाबू से पूछा—क्या वे लोग उस स्त्री को अस्पताल ले जा रहे हैं ?

जयसुन्दर बाबू बोले—हाँ।

—वह समुद्र में डूब गयी थी या उसने आत्महत्या की है ?

जयसुन्दर बाबू वरुणा का हाथ पकड़ कर उसे दूर ले गये।

फिर पूछा—सवेरे-सवेरे तुम कहाँ निकल गयी थी ?

वरुणा बोली—आपसे एक अनुरोध करूँ ?

—करो न !

वरुणा बोली—आप यहाँ से चले जाइए।

—मैं ? पुरी से चला जाऊँगा ?

—जी हाँ।

—क्यों ? तुम ऐसा क्यों कह रही हो ? मैं तो निशिकान्त को ढूंढ़ने आया हूँ। जब तक वह मिल नहीं जाता, मैं कैसे लौट सकता हूँ ? वह तो मेरा सर्वनाश किये बिना नहीं मानेगा ! मैं यहीं उससे एक निपटारा करना चाहता हूँ। जानती हो, उसी ने मेरी पत्नी से मेरा सम्बन्ध-विच्छेद कराया है। उसी के कारण आज मेरे पास सब कुछ होते हुए भी कुछ नहीं है। उसी ने मुझसे सबसे पहले काकटेल पार्टी देने के लिए कहा था। कहा था कि काकटेल पार्टी देने पर मुझे अच्छे-अच्छे कन्ट्रैक्ट मिलेंगे। उसी ने मुझसे कहा था कि आप अपने घर में काकटेल पार्टी दीजिए और उसमें अपनी पत्नी को शामिल कीजिए। मेरी पत्नी इस पर राजी नहीं हुई थी। इसी लिए मैं उसे छोड़ कर अलग मकान में रहने लगा था।

वरुणा समझ न सकी।

पूछा—यह काकटेल पार्टी क्या है ?

—काकटेल पार्टी का मतलब है शराब पीने की पार्टी। फिर उसी निशिकान्त के कहने पर मैं बाजारू औरत को अपनी पत्नी बना कर घर पर काकटेल पार्टी देने लगा। उससे मुझे सचमुच ठेके मिले और बहुत रुपया मिला, लेकिन उसके बदले मैंने सब कुछ खो दिया। मैंने अपना सुख खोया, रात की नींद खोयी, परिवार खोया और बच्चों को खो दिया और अब वह मुझको ही तबाह करना चाहता है। इसके लिए उसने मुझे खत लिखा है। खत में लिखा है कि उसे दो लाख रुपये देने

पड़ेंगे। अगर मैं न दूँ तो वह मेरा सर्वनाश करेगा। इस तरह उसने धमकी दी है। इतना बड़ा वह शैतान है!

उसके बाद वरुणा की तरफ देख कर कहा—तुम्हारी आँखें कैसे लाल हो गयीं?

वरुणा बोली—इसी लिए तो कह रही हूँ कि आप यहाँ से कलकत्ते चले जाइए।

—लेकिन तुमने यह तो नहीं बताया कि तुम्हारी आँखें कैसे लाल हो गयीं?

—कल रात एकदम सो न सकी।

—क्यों?

वरुणा बोली—आपके बारे में सोच कर।

—मेरे बारे में सोच कर? मेरे बारे में क्यों सोचने लगी?

वरुणा बोली—मेरे मन में बस यही होने लगा कि मुझसे आपका कोई नुकसान होगा। बताइए, आप यहाँ से कब जायेंगे?

जयसुन्दर बाबू बोले—तुमसे मेरा क्या नुकसान होगा?

वरुणा बोली—जी हाँ। विश्वास कीजिए। मेरे साथ रहने पर आपका नुकसान होगा।

—लेकिन क्यों? तुम्हारे साथ रहने पर क्यों मेरा नुकसान होगा, यह तो बताओगी?

वरुणा बोली—यह नहीं बता सकती। कल रात भर मैं बुरे सपने देखती रही, इसलिए कह रही हूँ। आप यहाँ से चले जाइए।

—और तुम?

—मैं यहीं रहूँगी। आप मुझे भूल जाइए। मुझे याद रखने पर आपको नुकसान होगा। लेकिन आपका कोई नुकसान हो, यह मुझसे बर्दाश्त न होगा। मेरा चाहे जो हो जाय, आप उसकी चिन्ता मत कीजिए।

—लेकिन तुम्हारे पास इस समय रुपया-पैसा नहीं है, तुम अपना खर्च कैसे चलाओगी? होटल का चार्ज देना पड़ेगा। लौटते समय ट्रेन का किराया लगेगा। इन सारे खर्चों के लिए तुम्हें पैसा कहाँ से मिलेगा?

वरुणा बोली—आप मेरी चिन्ता मत कीजिए। जो होना है, होगा। आप यह सब सोच कर क्यों परेशान होते हैं? मैं आपकी कौन हूँ?

—मैं तुम्हारे लिए रुपये का प्रबन्ध करूँगा। मैंने तो कहा है कि मेरे पास बहुत रुपया है। मैं अपने साथ चेक-बुक लेता आया हूँ।

वरुणा बोली—लेकिन रुपया दे कर क्या मनुष्य का सारा दुख दूर किया जा सकता है? मैं एक दिन घर छोड़ कर कलकत्ते भाग आयी थी। क्या वह सिर्फ रुपये के लिए? विश्वास कीजिए—नहीं! मेरी सौतेली माँ मुझसे जलती थी। क्या

यह भी रुपये के लिए ? मैं कहूँगी—नहीं ! फिर आप मेरे लिए रुपये का इंतजाम क्यों करेंगे ? इसके अलावा आप यह क्यों नहीं समझते कि मैं आपका नुकसान कर सकती हूँ।

जयसुन्दर बाबू को बड़ा आश्चर्य हुआ।

बोले—तुम मेरा अहित कर सकती हो ? तुम क्या कह रही हो ?

वरुणा बोली—जी हाँ। कर सकती हूँ। हर औरत हर मर्द का हर तरह से अहित कर सकती है। एक औरत में इतनी क्षमता होती है।

जयसुन्दर बाबू बोले—तुम मेरा बुरा करोगी, यह तो मैं सोच भी नहीं सकता !

वरुणा बोली—आप मुझ पर इतना विश्वास न करें।

जयसुन्दर बाबू बोले—आज तुमको क्या हो गया है, यह तो बताओ। तुम यह सब क्या कह रही हो ? मेरे हित-अहित, लाभ-हानि और भले-बुरे की बात तुम्हारे दिमाग में क्यों आयी ?

वरुणा बोली—अभी वह जो स्त्री रेत पर मरी पड़ी थी, उसी को देख कर मुझे अपनी बात याद आने लगी।

—अभी उस दिन तुम भी तो नींद की गोलियाँ खा कर आत्महत्या करने लगी थी। तुम्हें किस बात का दुख है ?

वरुणा बोली—इस समय मुझे अपने लिए नहीं, आपके लिए दुख है। पहले मुझे अपने लिए दुख था, लेकिन अब नहीं है।

—इसका मतलब ?

—इसका मतलब बाद में बताऊँगी।

बात करते हुए दोनों 'होटल सागर' के सामने पहुँच गये थे।

होटल के सामने पहुँच कर दोनों ने चुप्पी साध ली और चुपचाप होटल के अन्दर चले गये।

उस दिन अचानक आधी रात को निशिकान्त दास वरुणा के कमरे में आ पहुँचा।

वरुणा निशिकान्त दास को देख कर चौंक पड़ी।

आखिर यह निशिकान्त दास मेरे कमरे में कैसे आया ? वरुणा ने सोचा।

दिन भर वरुणा ने कुछ नहीं खाया था। किंकर ने आ कर अनेक बार पूछा —क्या कुछ भी नहीं खायेंगी ?

वरुणा ने सिर्फ कहा—नहीं।

जयसुन्दर बाबू ने भी पूछा—क्या आज तुम कुछ नहीं खाओगी ?

वरुणा बोली—आज कुछ भी खाने को मन नहीं कर रहा है।

—क्यों ऐसा हुआ ? क्या हो गया है ?

वरुणा ने कहा—सवेरे समुद्र किनारे उस मरी हुई औरत को देखने के वाद से मुझे न जाने क्यों मचली आ रही है।

जयसुन्दर वावू ने फिर कुछ खाने के लिए नहीं कहा था।

सिर्फ कहा था—तव कुछ मत खाओ।

शाम को सव लोग जव घूमने निकल गये थे, तभी वरुणा थोड़ी देर के लिए वाहर निकली थी। उसके वाद वह अपने कमरे में लौट आयी थी और दरवाजा वंद कर लेट गयी थी।

वरुणा को वार-वार उस स्त्री का चेहरा याद आ रहा था। सवेरे-सवेरे उसने उस चेहरे को देखा था।

उस चेहरे पर कोई भाषा नहीं थी और न दिखाई पड़ने वाली कोई सुन्दरता।

वरुणा के मन में प्रश्न जगा था, क्या मरने के वाद मनुष्य का कुछ भी शेष नहीं रहता ? मन ? शरीर मर जाने पर क्या मन भी मर जाता है ? क्या उस स्त्री को जव एम्वुलेन्स वैन से ले जाया जा रहा था, तव उसे कुछ भी पता नहीं चला था ?

मन ही मन वरुणा ने कहा, कुन्ती दी ! तुम मुझे क्षमा करना। तुमसे पाँच सौ रुपये लिये थे, लेकिन वह कभी लौटा न सकी। मैं जानती हूँ कि तुम मुझसे प्यार करती थी। तुमसे मुझे जितना प्यार मिला, उतना किसी से नहीं मिला। यहां तक कि मेरे वाप ने कभी मुझसे उतना प्यार नहीं किया ! तुम्हारे पाँच सौ रुपये नहीं लौटा सकी और ऋणी रह गयी, कुन्ती दी ! वताओ, क्या करूँ ? भाग्य ने मुझे ऐसी नौकरी दिलायी, जैसी मैंने कभी नहीं चाही थी। फिर भी मैं नौकरी चाहती थी और तुमसे भी कितनी वार कहा था, कुन्ती दी ! लेकिन किसी ने मुझे नौकरी नहीं दी। तुम भी जयपुर जा कर मुझे भूल गयी। वताओ, फिर मैं क्या करती ? लेकिन मैंने कोई दोष नहीं किया। किसी के प्रति मेरे मन में दुर्भावना नहीं है। मेरी सौतेली माँ जो मुझसे दुर्व्यवहार करती थी, उसमें मेरा क्या दोष था ? तुम्हीं वताओ, कुन्ती दी !

—अरे, आप ?

निशिकान्त दास का चेहरा वड़ा गम्भीर लगा।

—आप मेरे कमरे में कैसे आये ? मैं तो दरवाजा वंद करके सोयी थी ?

निशिकान्त दास ठहाका लगा कर हँसने लगा।

वोला—वाहर से दरवाजा खोलने की तरकीव मैं जानता हूँ। क्या तुम यह सोचती हो कि दरवाजे में सिटकिनी लगा कर मुझसे वच जाओगी ? जानती हो, तुम्हारे लिए मैंने कितना पैसा खर्च किया है ? तुमको पुरी लाने में कितना पैसा

खर्च हुआ है? यह सब तुमने याद नहीं किया और इस तरह बदला चुकाया?

वरुणा बोली—मैंने कितनी बार कहा है कि मुझसे यह काम न होगा। मुझे जाने दीजिए।

निशिकान्त दास बोला—फिर तुम मुझे नहीं पहचान सकी। मैं जो सोचता हूँ, वही करता हूँ। मेरी इच्छा के विरुद्ध अगर कोई कुछ करता है तो मैं उसे माफ नहीं करता। मैंने सोचा था कि राधेश्याम अगरवाल को मार डालूँगा और यही किया। तुम शायद नहीं जानती कि मेरे कारण ही जयसुन्दर बाबू आज इतना अमीर बना है। मुझसे तुम किसी तरह पीछा नहीं छुड़ा सकती। मैंने जो काम तुम्हें सौंपा है, वह तुम्हें करना ही पड़ेगा। अगर नहीं करोगी तो....

वरुणा बोली—नहीं करूँगी तो क्या मुझे मार डालेंगे? मुझे एक गरीब लड़की पा कर धमकी दे रहे हैं?

—यह तो जो करूँगा तुम देख लोगी? लेकिन उसके पहले यह तो बताओ कि जयसुन्दर बाबू पर क्यों इतनी दया दिखाने लगी?

—दया?

—दया नहीं तो क्या? क्या तुम समझती हो कि मैं कुछ नहीं जानता?

वरुणा बोली—मैंने तो सिर्फ दया दिखाने का बहाना किया है। आपने तो यही करने के लिए कहा था।

निशिकान्त दास बोला—लेकिन तुमने जो किया, वह तो दया दिखाने का बहाना नहीं है। बहाना करते-करते तुम सचमुच उस आदमी पर दया दिखाने लगी हो। उस शैतान से सचमुच प्यार करने लगी हो। तुमने उससे मेरे बारे में सब कुछ कह दिया है। तुमको किसलिए पुरी लाया हूँ, तुमने वह भी उसको बता दिया है।

—आप गलत समझ रहे हैं।

निशिकान्त दास अधिक कठोर दिखाई पड़ा। उतनी ही कठोरता से उसने कहा—देखो, तुम मेरी नौकरानी हो!

—मैं आपकी नौकरानी हूँ?

—नौकरानी नहीं तो और क्या हो? मेरी नौकरी कर रही हो, इसलिए नौकरानी हो। नौकरी से ही नौकर और नौकरानी शब्द बने हैं। इसलिए मैं जो हुक्म करूँगा, तुम वही करोगी। अगर नहीं करोगी तो उसका परिणाम भुगतना पड़ेगा।

—आप फिर धमकी दे रहे हैं?

निशिकान्त दास बोला—धमकी देने का मुझे अधिकार है। मैं जो कुछ करने को कहूँगा, तुम उसका उलटा करोगी और मैं धमकी नहीं दूँगा? तुम काम करोगी

और क्या लोगी, तुमसे मेरा इतना ही सम्बन्ध है।

वरुणा बोली—फिर वह सम्बन्ध आज ही खत्म हुआ, समझ लीजिए।

—इसका मतलब ?

—इसका मतलब यही है कि अब मैं आपका काम नहीं करूँगी।

—काम नहीं करोगी तो खाओगी क्या ? तुम पर पाँच सौ रुपये का कर्ज चढ़ा हुआ है। कलकत्ते के डी० एल० राय स्ट्रीट वाले मेस को तुम कहाँ से पैसा दोगी ? वह सब छोड़ो। अभी तुम पुरी से कलकत्ते कैसे लौटोगी ? ट्रेन का किराया कौन देगा ? फिर तुम्हारे और भी खर्च हैं। उनके लिए पैसा कहाँ से आयेगा ? काम कैसे नहीं करोगी ?

यह कहते-कहते निशिकान्त दास जरा रुका।

हाँ। निशिकान्त दास की एक भी बात गलत नहीं थी।

लेकिन वरुणा को भी किसी की परवाह नहीं थी। वह एकदम लापरवाह हो चली थी। सबकी गिरफ्त से निकल चली थी।

सिर्फ कुन्ती दी की याद वरुणा को सताने लगी।

—कुन्ती दी, तुम मुझे माफ कर देना। अब मैं कभी किसी जरूरत से तुम्हारे पास नहीं आऊँगी। अब मुझे न नौकरी की जरूरत है और न रुपये की। किसी के प्यार की भी जरूरत नहीं है।

अचानक वरुणा को सौतेली माँ की याद आयी।

ऐसे ही दिन में और ऐसी ही रात को शत्रु-मित्र और आत्मीय-अनात्मीय सबकी याद आती है। ऐसे ही समय सब सामने आ कर खड़े हो जाते हैं।

उस बार नींद की पन्द्रह गोलियाँ खाने से कोई काम नहीं हुआ था तो क्या इस बार पचास गोलियाँ खाने पर भी कोई काम न होगा ?

सवेरे समुद्र की रेत पर जो स्त्री निढाल पड़ी थी, उसका चेहरा भी याद आया। वरुणा ने उस चेहरे को मानो अपनी आँखों के आगे देखा। फिर वरुणा ने सोचा, क्या मेरा चेहरा भी वैसा दिखाई पड़ेगा ? क्या मेरे लिए भी एम्बुलेन्स वैन आयेगा ? क्या मुझे भी अस्पताल ले जाया जायेगा ?

फिर वरुणा ने सामने देखा तो कोई न दिखाई पड़ा।

निशिकान्त दास जिस तरह दबे पांव आया था, उसी तरह न जाने कब चला गया था।

वरुणा को निशिकान्त दास के चले जाने का पता भी न चल पाया था।

हो सकता है, निशिकान्त दास आया ही न हो।

ऐसे समय मनुष्य को न जाने क्या-क्या दिखाई पड़ने लगता है !



'होटल सागर' में फिर सवेरा हुआ।

शेखर बाबू फिर रात तीन बजे बिस्तर से उठे। उसी समय उठ कर वह सबको बुलाते हैं। तब रसोइया उठता है। भट्ठी में आग पड़ती है।

नौकर-चाकर तैयार हो जाते हैं। हर कमरे में बोर्डर को जगा कर चाय दी जाती है। गरम चाय कहीं ठंडी न हो जाय। चाय ठंडी हो जाने पर 'होटल सागर' की बदनामी होगी।

—ग्यारह नंबर में चाय गयी है?

—सात नंबर में?

—हाँ। हर नंबर में चाय पहुँच गयी। सिर्फ बारह नंबर वाली लड़की ने दरवाजा नहीं खोला। न खोले!

—गुणेश्वर! गुणेश्वर!

शेखर बाबू ने गुणेश्वर को भी जगा दिया था।

चाय पी कर गुणेश्वर भागा-भागा स्टेशन चला गया था। पुरी एक्सप्रेस आने से पहले ही वह स्टेशन पहुँच गया था। फिर वह एक्सप्रेस ट्रेन आयी और स्टेशन में आ कर उसका थका-मादा इंजन मानो जोर-जोर से हाँफने लगा। ट्रेन के डिब्बों से निकल कर पैसेंजर प्लेटफार्म के फाटक की तरफ आने लगे।

गुणेश्वर ठीक उसी जगह खड़ा था। हर पैसेंजर की तरफ देख कर कह रहा था—कृपया 'होटल सागर' में ठहरें। हवा और रोशनी की कमी नहीं है। भोजन भी लाजवाब मिलता है। एकदम समुद्र पर 'होटल सागर' है। कृपया एक बार ट्राई कीजिए।

कुली के सिर पर सामान रख कर पैसेंजर चले आ रहे थे। गुणेश्वर की बात कोई सुन रहा था और कोई नहीं भी सुन रहा था। लेकिन सभी चले आ रहे थे और फाटक से निकल रहे थे।

उसी सवेरे जयसुन्दर बाबू चाय पी कर निकल पड़े।

रोज की तरह समुद्र के किनारे लोगों की भीड़ थी।

जयसुन्दर बाबू एक-एक कर सबके चेहरे की तरफ देखने लगे। लेकिन निशिकान्त दास कहीं दिखाई नहीं पड़ रहा था। एक-एक कर सभी चेहरे देख लिये गये।

लाश को देख कर वह न जाने क्यों परेशान हो गयी थी। उसने बार-बार पूछा था —वह समुद्र में डूब गयी थी या उसने आत्महत्या कर ली है ?

आश्चर्य है ! उस समय भी जयसुन्दर बाबू कुछ नहीं समझ सके थे।

लेकिन मेरे नाम वरुणा ने कैसी चिट्ठी लिखी है ? जयसुन्दर बाबू ने सोचा।

वरुणा से जान-पहचान ही कितने दिन की थी ? जो थोड़ी-बहुत बातचीत हुई थी, उससे किसी को जाना-पहचाना नहीं जा सकता। लेकिन उस लड़की के पास पैसा नहीं था। नौकरी के सिलसिले में यहाँ इंटरव्यू देने आयी थी। सोचा था कि नौकरी मिल जायेगी। लेकिन नौकरी नहीं मिली। क्या उसी निराशा से उसने आत्महत्या कर ली ? हालांकि उसने बहुत बातें बतायी थीं। जयसुन्दर बाबू को एक-एक कर वे सब बातें याद आने लगीं। घर में उसकी सौतेली माँ थी। सौतेली माँ उसे बहुत परेशान करती थी। सौतेली माँ से छुटकारा पाने के लिए वह नौकरी की तलाश में कलकत्ते आयी थी ! लेकिन कलकत्ते में उसे नौकरी नहीं मिली। नौकरी तो बहुतों को नहीं मिलती, लेकिन कोई आत्महत्या नहीं करता !

फिर क्या आत्महत्या करने का कारण वरुणा ने अपने पत्र में लिख छोड़ा है ?

लेकिन पुलिस अधिकारी के पास रुकने का समय नहीं था।

वरुणा को उठा कर एम्बुलेंस में रखा गया।

आगे-आगे एम्बुलेंस वैन चला और उसके पीछे पुलिस की गाड़ी चली।

जयसुन्दर बाबू पुलिस की गाड़ी में बैठे थे।

होटल से निकल कर जयसुन्दर बाबू जब चलने लगे थे, शेखर बाबू भागे-भागे उनके पास आये थे।

बोले थे—सर ! आप जा रहे हैं ? अब मेरा क्या होगा ? आपने देखा तो, मैंने कितना पैसा खर्च किया ?

जयसुन्दर बाबू ने कहा था—मैं मर तो नहीं जा रहा हूँ ? आप क्यों परेशान हो रहे हैं ? अगर मैं न भी रहूँ तो कलकत्ते का पता है। कलकत्ते में मेरी पत्नी है, मेरी कम्पनी है, आपका सारा पैसा वह भी चुकता कर सकती है। आप परेशान न हों।

उसके बाद पुलिस की गाड़ी धुआँ छोड़ कर चलने लगी थी।

शेखर बाबू वहीं दो मिनट विमूढ़ से खड़े थे। होटल के दो-चार बोर्डर भी उनके साथ खड़े थे। उन लोगों ने शेखर बाबू से पूछा—ग्यारह नम्बर वाले सज्जन को पुलिस क्यों पकड़ ले गयी ? क्या उनसे उस लड़की का कोई सम्बन्ध था ?

झल्ला कर शेखर बाबू बोले—क्या पता ! अब मुझे अच्छा सबक मिल गया है। अब किसी अकेली औरत को होटल में ठहरने नहीं दूँगा। शादी-ब्याह नहीं

किया था, लेकिन पुरी में क्यों मरने आयी, क्या बताऊं ?

उस सज्जन ने फिर पूछा—उस लड़की ने चिट्ठी में क्या लिखा है ?

—खाक लिखा है !

शेखर बाबू चिढ़ गये। उनको उस समय कितने लोगों के खाने का इंतजाम करना था। फिर उन लोगों के हजार नखरे थे ! वह सब भी शेखर बाबू को संभालना पड़ता था। लेकिन उनकी मदद करने वाला कोई नहीं था। फिर एक-एक चीज का हिसाब रखना था !

अपने टेबिल की तरफ जाते हुए शेखर बाबू ने कहा—पता नहीं उस चिट्ठी में क्या लिखा है ! पुलिस ने वह चिट्ठी मुझे कहाँ दिखायी ? वह तो अपने साथ ले गयी है।

बड़बड़ाते हुए शेखर बाबू अपनी कुर्सी पर बैठे। फिर हिसाब का खाता ले कर देखते हुए भी बड़बड़ाते रहे।



अस्पताल में बहुत समय लगा।

लेकिन मरुणा उस समय सारे कर्ज-उधार और चाहने-पाने की सीमा पार कर कहीं और जा चुकी थी। उसे बचाने का कोई उपाय नहीं था। एक दिन उसने नौकरी चाही थी, नेह-प्यार चाहा था और दुनिया के लोगों से शान्ति चाही थी, लेकिन अब वह सब मांग-मांग कर दूसरों को परेशान करने वाली वही नहीं थी। उसे अपने जीवन में क्या मिला था, अगर कोई इसका जोड़ लगाये तो देखा जायेगा कि वह सिर्फ शून्य के अलावा कुछ नहीं है।

सिर्फ शून्य और शून्य ! शून्य अंक ही मरुणा के जीवन का मूलधन था। पचीस बरसों की अपनी जिन्दगी में उसे केवल शून्यता ही हाथ लगी। शून्यता का हाहाकार ही उसका जीवन था। मामूली भोजन-छाजन पाने के बदले वह सब कुछ देने को तैयार थी, फिर भी उसे शून्य ही मिला।

लेकिन पुलिस उतनी आसानी से छोड़ने वाली नहीं थी।

अब मरुणा का पोस्ट मार्टम करो ! उसे चीरघर में ले जाओ। वहाँ उसे ले जा कर उसके मन को देखने की जरूरत नहीं है। सिर्फ उसके शरीर को देखो। चीर-फाड़ कर बोटी-बोटी कर के देखो। देखो कि उसने दाल-भात-सब्जी के अलावा और क्या खाया था। अगर जहर खाया था तो वह कैसा था, उसको भी देखो।

फिर यह भी देखो कि उसने खुद जहर खाया था, या किसी ने उसे खिलाया था ? अगर किसी ने उसे जहर दिया है तो उसे ढूंढ़ निकालो। फिर पता लगाओ कि उसने क्यों जहर दिया ?

अस्पताल और थाने में जयसुन्दर बाबू ने पूरा दिन बिताया।

जयसुन्दर बाबू थाने में आये तो ओ० सी० ने उनसे पूछा—आप कितने दिनों से उस लड़की को जानते थे ?

—बस, छः-सात दिनों से। जयसुन्दर बाबू बोले।

—आपने क्या उस लड़की को पहले कभी देखा था, या पुरी में आ कर पहली बार देखा ?

—बस, पुरी आने के बाद देखा था।

—क्या आप कुछ बता सकते हैं कि उसने क्यों आत्महत्या की ?

जयसुन्दर बाबू बोले—मुझे लगता है कि मेंटल डिप्रेशन और निराशा के कारण उसने ऐसा किया है।

—निराशा किस बात की थी ?

—उसने कहा था कि यहां किसी नौकरी के लिए इंटरव्यू देने आयी थी। लेकिन वह नौकरी नहीं लगी। शायद उसी कारण से बहुत निराश थी। कल एक महिला समुद्र में डूब कर मरी थी। उसने उसकी लाश देखी थी। लाश देखने के बाद वह बहुत विचलित हो पड़ी थी।

—आपने उससे कब आखिरी बार बात की थी ?

—वही कल सवेरे। कल सवेरे मैं समुद्र किनारे टहलने गया था। उस समय वह टहल कर लौट रही थी। जहां उस स्त्री की लाश पड़ी थी और भीड़ लगी थी, वहीं उससे मुलाकात हो गयी थी। फिर हम एक साथ बात करते हुए लौटे थे।

—उसने जो जहर खाया, वह कहां से मिला ? उसके बारे में आपका क्या अनुमान है ?

—उसके बारे में मैं कुछ भी नहीं बता पाऊंगा। लेकिन होटल के नौकर किंकर से सुना है कि शाम को वह थोड़ी देर के लिए बाहर निकली थी। हो सकता है, उसी समय वह जहर खरीद लायी थी।

—पहले भी तो वह नींद की गोलियां खा कर आत्महत्या करने चली थी ?

—जी हां। लेकिन उस समय उससे मेरा परिचय नहीं था।

—अच्छा, आप निशिकान्त दास नाम के किसी व्यक्ति को जानते हैं ?

जयसुन्दर बाबू का कलेजा धक से हो गया। अचानक लगा कि उनका दम घुट चला है। उनको सांस लेने में तकलीफ होने लगी।

बोले—एक गिलास पानी मिलेगा ?

पानी आया। पीने के बाद जयसुन्दर बाबू की तकलीफ ज्यादा बढ़ गयी।

फिर वह बोले—जी नहीं।

तब ओ० सी० ने जयसुन्दर बाबू को एक पत्र दिखाया।

बोले—यह देखिए। यह पत्र कल्पना चौधरी आपके नाम छोड़ गयी है। देखिए, इसी में निशिकान्त दास के बारे में लिखा है। आप निशिकान्त दास को जानते हैं?

जयसुन्दर बाबू ने उस पत्र को देखा।

फिर कहा—यह पत्र मुझे देंगे?

ओ० सी० बोले—जी नहीं। इन्वेस्टिगेशन के लिए इसकी जरूरत पड़ेगी। इसलिए यह पत्र आपको नहीं दिया जा सकता।

लेकिन उस पत्र को जितना पढ़ा, उसी से जयसुन्दर बाबू के दिल का दर्द बढ़ गया। फिर उनको लगा कि दम घुटता जा रहा है।

ओ० सी० ने फिर पूछा—आप निशिकान्त दास को नहीं जानते?

जयसुन्दर बाबू चुप्पी साधे रहे। उनसे कोई जवाब देते न बना।

ओ० सी० ने फिर पूछा—क्या हुआ? आप मेरे सवाल का जवाब क्यों नहीं दे रहे हैं? बताइए, आप निशिकान्त दास को नहीं जानते?

लेकिन उस समय जयसुन्दर बाबू की शारीरिक स्थिति जवाब देने लायक नहीं थी। कौन जवाब देता? थाने में ही उनके सीने का दर्द फिर बढ़ गया। चक्कर आने लगा। उनको चारों तरफ अँधेरा दिखाई पड़ने लगा। उनको लगा कि आँखों से कुछ नहीं दिखाई पड़ रहा है।



गुलेश्वर रोज भोर में साढ़े तीन-चार बजे उठ जाता था। उसके बाद चाय पी कर स्टेशन की तरफ भागता था। लेकिन उस दिन वह और जल्दी उठ गया और चाय पिये बिना निकल पड़ा। उसको रेलवे स्टेशन की तरफ जाना चाहिए, लेकिन वह उधर न जा कर सीधे पश्चिम तरफ भागने लगा।

उस समय भी निशिकान्त पड़ा-पड़ा सो रहा था। साढ़े चार-पांच बजे से पहले वह उठ नहीं पाता था। तभी होटल के दरवाजे पर दस्तक हुई।

—निशिकान्त बाबू हैं?

—हैं।

कह कर होटल के एक आदमी ने निशिकान्त दास को बुला दिया।

गुणेश्वर को देख कर निशिकान्त उसे सीधे अपने कमरे में ले गया। फिर निशिकान्त ने कमरे का दरवाजा भी बंद कर लिया।

—सर! सर्वनाश हो गया है। गुणेश्वर बोला।

निशिकान्त ने होंठों पर उँगली रख कर कहा—चिल्लाओ मत! बहुत धीरे-धीरे बोलो, नहीं तो कोई सुन लेगा। क्या सर्वनाश हो गया?

गुणेश्वर ने कहा—आपकी उस लड़की ने कल सचमुच आत्महत्या कर ली है।

—कब?

—कल दोपहर में उसके कमरे का दरवाजा तोड़ कर देखा गया कि वह बेहोश पड़ी है। फिर पुलिस आयी और डाक्टर आया। उसके बाद उसे अस्पताल भेजा गया। बाद में सुना कि वह लड़की पहले ही मर चुकी थी। पुलिस आपको खोज रही है।

—लेकिन मैंने क्या किया है?

गुणेश्वर बोला—यह तो मैं नहीं जानता। लेकिन वह लड़की एक चिट्ठी लिख कर गयी है। पता चला कि उसमें आपका नाम है। अब आप यहाँ से चले जाइए सर! अभी निकल जाइए।

निशिकान्त ने थोड़ी देर न जाने क्या सोच लिया।

उसके बाद कहा—अभी जाना पड़ेगा?

—जी। अभी। इसी वक्त!

—उस लड़की ने मेरे बारे में पत्र में क्या लिखा है? क्या मेरी बुराई की है?

—यह सब मैं कुछ नहीं जानता। मैनेजर साहब कह रहे थे कि उस पत्र में यह लिखा है कि उस लड़की को आप ही यहाँ लाये हैं।

—उसने ऐसा लिखा है?

—मैनेजर साहब ने भी पूरा पत्र नहीं पढ़ा है। वह सिर्फ एक नजर उस पत्र को देख सके थे। उसके बाद तो पुलिस आ कर वह पत्र ले गयी। उस लड़की को भी स्ट्रेचर पर लाद कर अपस्ताल ले जाया गया।

निशिकान्त दास ने पूछा—और ग्यारह नम्बर के जयसुन्दर बाबू?

—उनका भी नाम उस चिट्ठी में है। पुलिस अपनी गाड़ी से उनको भी थाने ले गयी थी। वह भी दिन भर खाना नहीं खा सके थे। उनकी भी तबियत ठीक नहीं है। थाने से लौट कर वह चुपचाप अपने कमरे में लेट गये थे। रात को भी उन्होंने कुछ नहीं खाया था। डाक्टर उनको देखने आये थे। दवा दे गये हैं। लेकिन आप देर न करें। तुरन्त यहाँ से चले जाइए।

निशिकान्त दास बोला—अभी तो कोई गाड़ी नहीं है। जाऊँगा कैसे?

—यार कटक चले जायँ। कटक के लिए ट्रेन मिल जायेगी।

फिर जरा रुक कर गुलेश्वर बोला—सर! मेरा रुपया?

निशिकान्त दास ने जेब से दस रुपये का नोट निकाल कर गुलेश्वर की तरफ बढ़ाया।

—सर, सिर्फ दस रुपये?

—पहले भी तो तुम्हें बीस रुपये दिये थे। और कितना दूँगा? फिर जब पुरी आऊँगा, तब तुम्हें खुश कर दूँगा। अभी यही ले कर खुशी करो। मेरे बारे में किसी से कुछ मत कहना। अच्छा। जाओ।

गुलेश्वर के चले जाने के बाद निशिकान्त चटपट तैयार हो गया। उसे उसी वक्त होटल छोड़ कर चले जाना था।

निशिकान्त ने सोचा, वरुणा खुद भी मरी और मुझे भी मुर्दा बना गयी। मुफ्त में ढेर सारे रुपये की बरबादी हो गयी। ठीक है। मौका फिर मिलेगा। एक ही बाजी में हार-जीत का फैसला नहीं होता। अब कलकत्ते लौट कर उसे समझ लूँगा।

जयसुन्दर बाबू को मैं किसी तरह माफ नहीं कर सकता। निशिकान्त मन ही मन बड़बड़ाता रहा। आज तक मैं कभी जिन्दगी में नहीं हारा। हारने के लिए मैं इस दुनिया में पैदा नहीं हुआ। मैंने दस बरस जेल काटी है। उन दस बरसों में रोज हर घड़ी सिर्फ जयसुन्दर बाबू की तबाही मनाता रहा हूँ। मैं खुद तकलीफ कहूँगा और जयसुन्दर बाबू आराम करेंगे, ऐसा नहीं हो सकता। यहाँ आने के बाद भी मेरा बहुत पैसा खर्च हुआ है। ब्याज-दर-ब्याज वह सब वसूलना पड़ेगा।

निशिकान्त दास जिस समय स्टेशन पहुँचा, ट्रेन छूटने वाली थी। वह हड़बड़ा कर एक डब्बे में चढ़ गया।

ठीक उसके एक घंटे बाद पुलिस उस होटल में पहुँची, जहाँ निशिकान्त ठहरा था।

—यहाँ निशिकान्त दास है?

पुलिस देख कर होटल के लोग घबड़ा गये।

मैनेजर बेचारा गरीब था। समुद्र के किनारे खुली जगह पर होटल खोलने लायक पैसा उसके पास नहीं था। इसलिए उसने एक गली के नुक्कड़ पर होटल खोला था। जो सस्ते होटल में ठहरना चाहते थे, वे उस होटल में ठहरते थे।

पुलिस एकदम होटल के अन्दर चली आयी। चारों तरफ देख कर दारोगा को बड़ा आश्चर्य हुआ। ऐसे होटल में भी आदमी ठहरता है!

दारोगा ने एक आदमी से कहा—मालिक को बुलाओ।

लेकिन होटल का मालिक कहाँ था?

दारोगा के बुलाने पर मैनेजर हाथ जोड़े सामने आ कर खड़ा हो गया।

बोला—आज्ञा कीजिए हुजूर।

—यहाँ निशिकान्त दास नाम का कोई है?

मैनेजर तो डर के मारे काँपने लगा था।

बोला—हाँ हुजूर, थे। लेकिन वह तो चले गये हैं।

—कब गया?

—अभी एक घंटा पहले हुजूर!

—कहाँ गया है?

मैनेजर बोला—यह तो नहीं पूछा हुजूर!

—और कुछ बताया था?

—नहीं हुजूर!

दारोगा समझ गये कि पंछी उड़ गया है। वह अपने दल-बल के साथ चले गये।

ठीक उसी वक्त लोकल ट्रेन कटक स्टेशन पहुँची।

प्लेटफार्म पर ट्रेन रुकते ही पैसेंजर उतरने लगे।

यह ट्रेन यहीं खत्म होती है।

निशिकान्त दास भी ट्रेन से उतरा। उसके हाथ में सिर्फ एक सूटकेस था। गेट पर टिकट दिखा कर वह बाहर निकला और एक रिक्शे पर बैठ गया।

रिक्शेवाले ने पूछा—कहाँ जायेंगे बाबू?

निशिकान्त दास बोला—होटल।

—किस होटल में बाबू?

निशिकान्त दास बोला—किसी भी होटल में।

फिर शाम को एक्सप्रेस पकड़नी थी। कलकत्ता एक्सप्रेस।

रिक्शा धीरे-धीरे शहर की तरफ चला।



कलकत्ते के नन्दन स्ट्रीट वाले मकान में उस समय कीर्तन हो रहा था।

सवेरे जब कमला पूजा करने बैठती है, तब एक बार कीर्तन होता है। दोपहर में घर का काम-काज करना पड़ता है। उसके बाद संध्यारती होती है। उस समय भी कीर्तन होता है। दिन भर कमला का यही काम है।

गिरि चन्दन घिसने बैठ जाता है। सवेरे उठते ही उसका यही काम है। उसी समय माली आ कर फूल दे जाता है। उसके साथ माहवारी हिसाब है। फिर फल काटने पड़ते हैं। जिस मौसम में जो फल मिलते हैं, वही आते हैं। जैसे, केला, संतरा, ईख आदि। गिरि ही फल काटता है।

उसी समय कमला नहा लेती है। उसके बाद वह टसर की साड़ी पहन कर पूजा के कमरे में जाती है। गिरि पहले से पूजा के उपचार नैवेद्य आदि सजा कर रख देता है।

पुरोहित ठीक समय पर आ जाते हैं।

दो कीर्तनिया भी मजीरा आदि लिये उसी समय आ पहुँचते हैं।

कीर्तनिया गाने लगते हैं—

कत चतुरानन मरि मरि जाएत
न तुअ आदि अवसाना।
तोहि जनमि पुनु तोहि समाएत
सागर लहरि समाना।।
भनइ विद्यापति सेष समन भय
तुअ बिनु गति नहि आरा।
तोहे अनाथक नाथ कहाओसि
तारन भार तोहारा।।

झाँझ-मजीरे की ध्वनि के साथ सुमधुर पदावली कीर्तन से मकान गूँज उठता है। उस समय कमला भावविभोर हो जाती है। वह भूल जाती है कि बचपन से उसने कितना कष्ट उठाया है। वह गृहदेवता राधाकृष्ण की मूर्ति के साथ मानो एकात्म हो जाती है।

उस समय कमला को बाहर की कोई बात याद नहीं रहती। वह अपने पति और दो पुत्रों को भूल जाती है। वह अपने बेटों को कभी अपने पास नहीं पा सकी। दोनों ने घर से दूर रह कर पढ़ाई की और बाद में अच्छी नौकरी ले कर विदेश चले गये। फिर दोनों ही वहाँ बस गये। उसके बाद बचे पति। एक स्त्री के लिए पति सबसे निकट का होता है। लेकिन कमला जयसुन्दर बाबू को ठीक से याद भी नहीं कर पाती! *उसकी आँखों के आगे और मन के आगे राधाकृष्ण की युगल मूर्ति* ही सजीव हो उठती है।

उस दिन भी कीर्तन चल रहा था। तभी अचानक तालों की संगति टूटी।

गिरि ने आ कर कहा—माँ, आफिस से बड़े बाबू आये हैं।

आफिस से? बड़े बाबू? कैसा आफिस? कौन बड़े बाबू?

बड़े बाबू को बैठके में बैठा कर गिरि कमला को खबर करने पहुँचा था।

घूंघट काढ़ कर कमला बैठके में गयी।

'बोस एंड कम्पनी' के बड़े बाबू सुशीतल बाबू को बाहर से ही कीर्तन की सुमधुर ध्वनि सुनाई पड़ने लगी थी। सुशीतल बाबू कभी नन्दन स्ट्रीट वाले मकान में नहीं आये थे। उसकी जरूरत भी नहीं पड़ती थी। लेकिन वह इतना जानते थे कि किस मकान में जयसुन्दर बाबू की पत्नी रहती है। उस दिन सुशीतल बाबू को विवश हो कर आना पड़ा।

—माँ, आप मुझे नहीं पहचानतीं। मैं 'बोस एंड कम्पनी' के दफ्तर का बड़ा बाबू हूँ। मेरा नाम है सुशीतल दत्त। मैं अट्ठारह वर्षों से इस दफ्तर में काम कर रहा हूँ। इसलिए मैंने आपको माँ कहा। आप मेरी माँ जैसी हैं। मुझे आप न कहें।

कमला सुशीतल बाबू की बातें सुन रही थी।

बोली—बोलो, क्या कहने आये हो?

सुशीतल बाबू बोले—आप तो जानती होंगी कि कई दिन पहले मिस्टर बोस पुरी गये थे।

कमला बोली—नहीं। मैं नहीं जानती।

—पुरी से मुझे अभी एक टेलीग्राम मिला। उसमें लिखा है कि पुरी में मिस्टर बोस बहुत अस्वस्थ हैं। उन्होंने आपसे अविलम्ब पुरी जाने के लिए कहा है।

—किसने टेलीग्राम किया है?

सुशीतल बाबू बोले—पुरी के 'होटल सागर' से वहाँ के मैनेजर ने।

कमला न जाने क्या सोचने लगी।

सुशीतल बाबू फिर बोले— आप चलेंगी न?

कमला बोली—लेकिन मैं कैसे जा सकती हूँ?

सुशीतल बाबू ने कहा—आप यदि कहें तो मैं आपको ले जा सकता हूँ। रात के आठ बजे ट्रेन है। आपकी आज्ञा हो तो मैं दो टिकट खरीदने के लिए आदमी भेजूंगा। जरूर उनकी तबीयत बहुत ज्यादा खराब है, नहीं तो वहाँ से टेलीग्राम क्यों आयेगा?

—ठीक है, टिकट खरीदवा लो। मैं शाम को सात बजे तक तैयार हो कर तुम्हारा इंतजार करूंगी।

फिर सुशीतल बाबू वहाँ नहीं रुके।

बोले—अच्छा माँ, मैं चलूं।

कमला के पांव छू कर सुशीतल बाबू ने हाथ माथे से लगाया। उसके बाद वह बाहर निकल गये।



पुरी के 'होटल सागर' के ग्यारह नंबर कमरे में उस समय जीवन और मृत्यु के बीच संघर्ष चल रहा था। डाक्टर इंजेक्शन लगा कर गये। खाने की दवा भी दे गये। लेकिन होटल में कौन जयसुन्दर बाबू को दवा खिलाता और उनकी देख-भाल करता?

डाक्टर ने ही नर्स का इंतजाम कर दिया था। एक नर्स दिन में रहती थी और दूसरी रात में। यह सब इंतजाम करने में शेखर बाबू का बड़ा पैसा खर्च हो रहा था।

झमेला भी कम नहीं था।

शेखर बाबू ने बार-बार कहा—आप कलकत्ते का पता दीजिए। मैं टेलीग्राम कर दूँगा।

बार-बार कहने पर जयसुन्दर बाबू ने किसी तरह पता बताया था और शेखर बाबू ने लिख लिया था।

उसके बाद शेखर बाबू ने कलकत्ते के पते पर टेलीग्राम कर दिया था।

इस झमेले से शेखर बाबू कम परेशान नहीं थे।

वह मन ही मन बड़बड़ाते थे—अगर पुरी में ही मरना है तो किसी और होटल में कोई क्यों नहीं जाता! मेरे होटल में क्या रखा है? पुरी में सिर्फ यही एक होटल नहीं है। तमाम होटल हैं।

उसके बाद पुलिस का झमेला।

पुलिस के लोग कई दिनों से शेखर बाबू के पास आने लगे थे। आ कर वे एक ही सवाल करते थे—यहाँ निशिकान्त दास नाम का कोई आता था?

शेखर बाबू कहते थे—कौन निशिकान्त दास? हमारे यहाँ इस नाम का कभी कोई आदमी नहीं आया। फिर जो लोग ठहरते हैं, उनसे कब कौन मिलने आता है, हमें पता भी नहीं चल पाता!

बात सही थी।

पुलिस को यह बात मालूम भी थी। लेकिन उस लड़की के पत्र ने झमेला किया था। उसमें निशिकान्त दास का नाम था।

शेखर बाबू कहते थे—वह लड़की तो चिट्ठी में सब कुछ लिख कर गयी है। फिर आप लोग क्यों परेशान हो रहे हैं?

पुलिस वाले कहते थे—इसी लिए तो हम निशिकान्त दास को ढूंढ़ रहे हैं।

—और हमारे यहाँ जो ग्यारह नंबर के वोर्डर हैं, उनके बारे में उस लड़की ने कुछ नहीं लिखा है ?

—लिखा है। लेकिन ग्यारह नंबर के वोर्डर तो इस समय वेहोश पड़े हैं। उनसे क्या पूछताछ करेंगे ? वह तो कोई जवाब नहीं दे सकेंगे। आपने तो कलकत्ते टेलीग्राम कर दिया है ? वहाँ से लोग आ जायें, तव उनसे पूछा जायेगा। शायद तव पता चले।



दूसरे ही दिन सवेरे एक सज्जन एक महिला को साथ लिये पुरी स्टेशन पर ट्रेन से उतरे।

रोज की तरह गुणेश्वर उस दिन भी प्लेटफार्म पर खड़े हो कर अपनी रटी-रटायी वात कहता जा रहा था—एक वार हमारे 'होटल सागर' को जरूर ट्राई कीजिए सर ! हवा और रोशनी की कमी नहीं है। भोजन मनपसंद मिलेगा। एक वार 'होटल सागर' को जरूर ट्राई कीजिए सर !

सुशीतल वावू ने गुणेश्वर के पास आ कर पूछा—तुम 'होटल सागर' के आदमी हो ?

गुणेश्वर वोला—जी सर !

—तुम्हारे होटल में जयसुन्दर वावू हैं ? जयसुन्दर वोस ?

—जी हां, हैं। लेकिन इस समय मिस्टर वोस वीमार हैं सर !

सुशीतल वावू वोले—हम उन्हीं को देखने के लिए कलकत्ते से आये हैं।

गुणेश्वर वोला—चलें सर, मैं आप लोगों को ले चलता हूं। चलें।

यह कह कर गुणेश्वर आगे-आगे चलने लगा।



संसार में प्रतिदिन जिंदा रह कर मैंने क्या चाहा था ?

क्या चाहा था, यह सोचने पर हमें वहुत दूर अतीत में लौट जाना पड़ता है।

इसी सवाल से जयसुन्दर बाबू का सामना हुआ तो उन्हें भी दूर अतीत की बातें याद आयीं।

एक छोटा सा मकान, छोटा परिवार और जीवन-यापन का सामान्य प्रबन्ध ही तो जयसुन्दर बाबू ने चाहा था। फिर जीवन-यापन का प्रबन्ध करने के लिए उन्हें रुपये की जरूरत पड़ी। फिर रुपया कमाते-कमाते रुपये का नशा लग गया।

फिर उसी नशे ने बताया—जितना रुपया कमा रहे हो, वह काफी नहीं है। उससे काम नहीं चलेगा। तुम्हें और ज्यादा रुपया चाहिए। उसी ज्यादा रुपये के लिए तुम अपने घर में काकटेल पार्टी दो। वह जो निशिकान्त आता है, वही तुम्हें अधिक से अधिक रुपया कमाने का रास्ता बता देगा। वह रास्ता कैसा है, यह मत देखो। वह अच्छा भी हो सकता है और बुरा भी। तुम किसी तरफ ध्यान मत दो। उसी के बताये रास्ते पर चलते चले जाओ। वही काम करो, जिससे अधिक से अधिक रुपया मिले। कोशिश करोगे तो तुम भी एक दिन घनश्याम अगरवाल बन सकोगे।

अंत तक जयसुन्दर बाबू घनश्याम अगरवाल बने थे। लेकिन उसके बाद?

उसके बाद वही कोशिश करते-करते जयसुन्दर बाबू ने अपनी पत्नी कमला को खो दिया। दोनों बेटों को भी खोना पड़ा। उसके बाद निशिकान्त दास का वह पत्र आया। वही पत्र घोर संकट का कारण बना। फिर उसी पत्र के मसले को सुलझाने में बारह नंबर की वह लड़की उनके जीवन में आ कर टपक पड़ी।

लेकिन उस समय जयसुन्दर बाबू को क्या पता था कि वह लड़की अपने सर्वनाश के साथ-साथ उनका भी सर्वनाश करेगी!

—कौन?

जरा देर के लिए चेतना लौटी तो जयसुन्दर बाबू ने आंखें खोलीं और उसके एक क्षण बाद आंखें मूंद लीं।

कमला कई घंटे से जयसुन्दर बाबू के पास बैठी थी।

जयसुन्दर बाबू शायद सपना देख रहे थे।

बादशाह औरंगजेब ने भी शायद जीवन के अंतिम क्षणों में ऐसा सपना देखा था। जिन्दगी भर वह भी सपना देखते रहे। हिन्दुस्तान में उनकी बादशाहत फैले, जिन्दगी भर वह बस यही सपना देखते रहे। जीवन के अन्तिम दिनों में उन्होंने लिखा था—अब खुदा के पास जाने का समय हो गया है। खुदा के पास जा कर मैं क्या कैफियत दूंगा? क्या जवाब दूंगा?

हां। जयसुन्दर बाबू के सामने भी यही सवाल था! मैं भगवान के पास क्या जवाब दूंगा?

—कौन?

कमला जयसुन्दर बाबू के चेहरे पर झुकी।

—तुम आयी हो कमला ?

कमला के मुँह से कोई बात नहीं फुरी। वह जयसुन्दर बाबू के चेहरे की तरफ एकटक देखती रही।



उसी समय और एक सज्जन थाने में पहुँचे। उनको देखने से लगा कि वह गाँव से आये थे।

ओ० सी० ने पूछा—आप क्या चाहते हैं ? कहाँ से आ रहे हैं ?

—मैं बहुत दूर से आ रहा हूँ। मेरा घर दिलदारपुर में है।

—दिलदारपुर कहाँ है ?

—कलकत्ते से चौदह मील दूर देहात में। स्टेशन में उतर कर अब भी पाँच कोस पैदल चल कर वहाँ तक जाना पड़ता है। मेरी एक बेटी थी। वह कलकत्ते चली आयी थी। वह भी छः वर्ष पहले की बात है। मैंने सुना था कि वह कलकत्ते में डी० एल० राय स्ट्रीट के एक लेडीज मेस में रहती है। मैं अपनी बेटी की खोज में वहाँ गया था। वहाँ एक लड़की ने बताया कि वह नौकरी ले कर पुरी चली गयी है। लेकिन मेरी बेटी किस दफ्तर में काम करती है, यह वह लड़की नहीं बता सकी। मैं उसी की खोज में पुरी आया हूँ ? अगर आप लोग उसका पता बता सकें तो बड़ी खुशी होगी।

—इतने दिनों बाद अपनी बेटी की खोज में आये हैं ? पहले क्यों नहीं आये ?

उस सज्जन ने कहा—पहले अपनी बेटी की खोज नहीं की, इसके पीछे कारण है। मेरी पहली पत्नी की मृत्यु के बाद मैंने दूसरी शादी की थी। मेरी दूसरी पत्नी अपनी सौतेली बेटी को बहुत परेशान करती थी। जब पता चला कि मेरी बेटी कलकत्ते में रह कर नौकरी करती है तो सोचा कि ठीक है, वह वहीं रहे। अब मेरी दूसरी पत्नी भी चल बसी है। इसलिए सोचा कि अब मेरी बेटी घर लौट सकती है। अब मैंने उसकी शादी भी तय कर ली है। इसलिए उसे ले जाने के लिए आया हूँ।

—क्या आपकी बेटी का नाम करुणा चौधरी है ?

—जी हाँ। आपने ठीक समझा है। वही मेरी लड़की है। मेरा नाम है निशीथभूषण चौधरी।

इतनी देर बाद ओ० सी० बोले—आप बैठें।

फिर ओ० सी० ने लोहे की आलमारी का ताला खोल कर एक फाइल निकाली। फाइल से एक चिट्ठी निकाल कर उन्होंने कहा—यह चिट्ठी पढ़िए।

निशीथ बाबू उस चिट्ठी को पढ़ने लगे—

परम आदरणीय,

आपको जब यह चिट्ठी मिलेगी, मैं इस दुनिया में नहीं रहूंगी। मैंने कितने कष्ट में ये कई वर्ष बिताये, यह सिर्फ मैं ही जानती हूं और कोई नहीं जानता। आप शायद नहीं जानते, लेकिन निशिकान्त दास ही मुझे यहां लाया था। आपसे दो लाख रुपये पाने के लिए उसने मुझे आपके पीछे लगाया था। मैं भूखों मर रही थी, इसलिए रुपये के लिए इस काम को स्वीकार किया था। मैंने जो आपसे कहा था कि नौकरी के लिए इंटरव्यू देने यहां आयी थी, वह सरासर झूठ था। आप पर जादू डाल कर आपको मुट्ठी में कर लेना ही मेरा काम था। लेकिन आपके सम्पर्क में आने के बाद मैंने जाना कि आप भी मेरी तरह दुखी हैं। इसलिए आपको नुकसान पहुँचाना मेरे मन को गवारा नहीं था। निशिकान्त दास पुरी में ही है। वह कुचीशाही के एक होटल में ठहरा है। पहले जो मैंने आत्महत्या करने का नाटक किया था, उसके लिए उसी ने नींद की गोलियां खरीद दी थीं। इस संसार में मेरा अपना कोई नहीं है। फिर भी बाप, सौतेली मां और कई सौतेले भाई हैं। सौतेली मां के कारण बाप भी मुझसे दूर हो चले थे। मेरे मरने पर उन सबको शान्ति मिलेगी। इस हालत में मेरे लिए मरने के अलावा और कोई उपाय नहीं है। इसलिए मैं मर रही हूं। आप मुझे जरूर क्षमा करेंगे।

सरला चौधरी

निशीथ बाबू के हाथ थरथर कांपने लगे। उनके हाथों से चिट्ठी छूट कर फर्श पर गिरी। वह रोने लगे। रोते हुए बोले—मैं अपनी बेटी की शादी पक्की कर चुका था।

ओ० सी० बोले—अब क्या करेंगे, घर लौट जाइए। आपकी बेटी को हम श्मशान में जला भी आये हैं।



'होटल प्लाजा' के ग्यारह नंबर कमरे से निकल कर सुनील बाबू [illegible] बाबू के कमरे में गये।

शेखर बाबू ने सिर उठा कर कहा—क्या हुआ ? जयसुन्दर बाबू अब कैसे हैं ?

सुशीतल बाबू के मुंह से बस छोटा सा एक शब्द निकला—खतम !

कमला को शायद उस समय भी विश्वास नहीं हुआ था। वह उस समय भी जयसुन्दर बाबू के चेहरे की तरफ एकटक देखे जा रही थी। उसके मन में उस समय भी विद्यापति का एक पद गूंज रहा था—

मधुपुर मोहन गेल रे
मोरा विहरत छाती।
गोपी सकल विसरलन्हि रे
जत छलि अहिवाती।।
सूतलि छलहुँ अपन घर रे
गेलहुँ सपनाई।
करसएँ छुटल परसमनि रे
कओन लेल अपताई।।

उस समय कमला को लगा कि वह मानो नन्दन स्ट्रीट के उसी मकान में राधाकृष्ण की मूर्ति के सामने बैठी हुई है और उसके पीछे बैठे कीर्तनिया कीर्तन कर रहे हैं।

हरि मथुरापुरी चले गये और देखते-देखते गोकुल में अंधेरा छा गया। कमला की दुनिया भी सूनी हो गयी। जयसुन्दर बाबू के जीवन भर का कुल जोड़ शून्य के सिवा और कुछ नहीं है। कम से कम कमला को यह लगा।



पूछा—उसके बाद क्या हुआ ?

मेरे पुलिस अधिकारी मित्र ने कहा—वह तो आपको बताया। आज बीस साल बाद कहां है वह जयसुन्दर बोस और कहां है वह वरुणा चौधरी ? कहां है वह कमला बोस और कहां वह राधेश्याम अगरवाल ? अजय बोस और विजय बोस दो भाई भी आज न जाने कहां हैं ? सुनने में आता है कि एक भाई अमरीका में है और दूसरा जर्मनी में। एक-एक मेमसाहब से शादी कर दोनों इंडिया को भूल चुके हैं। शायद वे वहां सुख-शांति से घर-गृहस्थी कर रहे हैं। उनमें से किसी का पता भी याद नहीं है। लेकिन उस सारे इतिहास का साक्षी बना वह मकान आज भी खड़ा है। उस बारह मंजिले मकान में न जाने कितने दफ्तर हैं और उन दफ्तरों में

सैकड़ों कर्मचारी काम करते हैं। मकान मालिक को उस मकान से हर महीने लग-भग छः लाख रुपये किराये मिलते हैं।

—छः लाख रुपये ? और वह भी हर महीने ?

—हाँ। हर महीने नहीं तो क्या हर साल ?

पूछा—उसका मालिक कौन है ?

मेरे मित्र ने कहा—वही बताने के लिए तो यह कहानी सुनायी। शायद इसी को संयोग कहते हैं। यह संयोग कभी शुभ होता है तो कभी अशुभ। लेकिन इस मामले में कहना पड़ेगा कि संयोग शुभ ही था। नहीं तो उतना बड़ा मकान और उससे उतनी आमदनी किसके भाग्य में होती है ?

मैंने फिर पूछा—कौन उसका मालिक है ?

मेरे मित्र ने कहा—एक बंगाली ही।

—उनका क्या नाम है ?

—मेरे मित्र ने कहा—मिस्टर एन० के० दास।

—मतलब ? पूरा नाम क्या है ?

मित्र ने कहा—निशिकान्त दास।

सैकड़ों कर्मचारी काम करते हैं। मकान मालिक को उस मकान से हर महीने लगभग छः लाख रुपये किराये मिलते हैं।

—छः लाख रुपये? और वह भी हर महीने?

—हाँ। हर महीने नहीं तो क्या हर साल?

पूछा—उसका मालिक कौन है?

मेरे मित्र ने कहा—यही बताने के लिए तो यह कहानी सुनायी। शायद इसी को संयोग कहते हैं। यह संयोग कभी शुभ होता है तो कभी अशुभ। लेकिन इस मामले में कहना पड़ेगा कि संयोग शुभ ही था। नहीं तो उतना बड़ा मकान और उससे उतनी आमदनी किसके भाग्य में होती है?

मैंने फिर पूछा—कौन उसका मालिक है?

मेरे मित्र ने कहा—एक बंगाली ही।

—उनका क्या नाम है?

—मेरे मित्र ने कहा—मिस्टर एन० के० दास।

—मतलब? पूरा नाम क्या है?

मित्र ने कहा—निशिकान्त दास।